"प्राचीन भारतीय एवं ईरानी धर्मों में अग्नि : एक अध्ययन''

महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली में
प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विषय में पी–एच०डी० की उपाधि हेतु

शोध–प्रबन्ध

शोध–पर्यवेक्षक :

प्रो० (डॉ०) अभय कुमार सिंह
प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग,
म.ज्यो.फु. रुहेलखण्ड
विश्वविद्यालय, बरेली

शोधार्थी :

राहुल बर्धन
प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग,
म.ज्यो.फु. रुहेलखण्ड
विश्वविद्यालय, बरेली

महात्मा ज्योतिबा फुले
रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

M.J.P. Rohilkhand University, Bareilly

Prof. Dr. Abhay Kumar Singh
M.A., Ph.D., FRNS (London)

Department of
Ancient History & Culture

Date:...................

CERTIFICATE

This is to certify that **Mr. RAHUL BARDHAN** has completed his Ph.D. thesis entitled **"प्राचीन भारतीय एवं ईरानी धर्मों में अग्नि : एक अध्ययन"** under my supervision. He has been a regular scholar and has fulfilled the required attendance too.

His thesis is an original research work investigated and written by himself with his individual efforts, and it is now being submitted to the university for evaluation.

(A.K. Singh)

घोषणा–पत्र

मैं घोषणा करता हूँ कि महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली की पी०–एच०डी० उपाधि हेतु मेरे द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबन्ध ''प्राचीन भारतीय एवं ईरानी धर्मों में अग्नि : एक अध्ययन'' पूर्णतया मौलिक कृति है तथा किसी के द्वारा सम्पन्न कार्य की पुनरावृत्ति नहीं है। शोध कार्य द्वारा यह शोध प्रबन्ध मेरे द्वारा सम्पन्न किया गया है।

शोधकर्ता

(राहुल बर्धन)
महात्मा ज्योतिबा फुले
रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय
बरेली।

आभार पुष्प

कृतज्ञता के पास शब्द नहीं होते, किन्तु साथ ही कृतज्ञता इतनी कृतघ्न भी नहीं होती कि बिना कुछ कहे ही रह जाये, क्योंकि यदि कुछ भी न कहा जाये तो शायद हर भाव अव्यक्त ही रह जायेगा। इसलिए यह आभार पुष्प मात्र औपचारिकता होते हुए भी आपसी कृतज्ञता ज्ञापित करने का कहीं गहरे में एक प्रयास भी है।

सर्वप्रथम में अपने परमश्रद्धेय गुरूवर् एवं शोध कार्य पर्यवेक्षक प्रो0 अभय कुमार सिंह, प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग, म0ज्यो0फुल0 रूहेलखण्ड विश्वद्यिालय, बरेली के प्रति असीम श्रद्धा से आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके कुशल निर्देशन, उचित मार्गदर्शन, स्नेहित प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से यह कार्य सम्पन्न हो सका। जिन्होंने अपनी अपूर्व मेधा एवं कुशल शोध निर्देशन के द्वारा समय-समय पर मुझे शोध की विषय-वस्तु को समझने, उसकी समीक्षात्मक दृष्टि से अध्ययन करने, विश्लेषण करने तथा उसे प्रस्तुत करने हेतु तर्क संगत एवं अमूल्य सुझाव प्रदान किये। उनके गहन चिन्तन पूर्ण मार्ग दर्शन के आधार पर मुझे सदैव उच्च अध्ययन हेतु प्रेरणा मिलती रहेगी। ऐसा मेरा अटूट विश्वास है। मेरी गुरू माता श्रीमती मनीषा सिंह के प्रति आभार व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द ही नहीं है। फिर भी मैं अन्तर्मन से स्तुत करते हुए उसके चरणों में श्रद्धा सुमन अर्पित कर रहा हूँ। इसके साथ ही अपनी बहन अतिप्रिय (ऐश्वर्या) का आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मुझे पल-पल, आशीर्वाद एवं स्नेह प्रदान किया।

मैं अपने विभाग के समस्त गुरूजनों प्रो0 अतुल कुमार सिन्हा, प्रो0 श्याम बिहारी लाल, विभागाध्यक्ष, डा0 विजय बहादुर यादव के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने अपने अनुभव तथा बहुमूल्य सुझावों द्वारा मेरा मार्गदर्शन

किया। मैं हिन्द-ईरानी अध्ययन केन्द्र, महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली का भी आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मुझे ईरानी धर्म को समझने के लिए विषय-सामग्री उपलब्ध करायी।

मैं अपने पूज्यनीय दादा स्व0 श्री टीकाराम, स्व0 दादी खुशहालो देवी, माता-श्रीमती संतोष कुमारी, पिता-श्री डी0एल0 सागर, बहन श्रीमती गरिमा गौतम, बहनोई-डा0 सिद्धार्थ सिंह का आजीवन ऋणी रहूँगा, जिनके पल-पल आशीर्वाद एवं स्नेह पूर्ण सहयोग के द्वारा मैं अपना शोध कार्य पूर्ण कर सका। इसके साथ ही अपनी हृदयांश दोनों छोटी बहनों नीरजा, शिल्पी का भी आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मेरे शोध के दौरान अपनी फूल सी मुस्कराहट और शरारती बातें कर मुझे तरोताज़ा तथा स्फूर्तिवान किया।

मैं अपने मित्रों में रागिनी, डा0 मुनीष कुमार गंगवार, डा0 विजय गंगवार, डा0 शारदा गंगवार, अरविन्द कुमार, डॉ0 हेमन्त मनीषी शुक्ला, डा0 संतोष कुमार, गुलाब सिंह, प्रमोद कुमार, वीरेन्द्र कुमार वर्मा, छोटे भाई अमित कुमार, तोष पाल सिंह के सहयोग एवं स्नेहपूर्ण व्यवहार को कभी नहीं भूलूँगा, जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्क्ष रूप से मुझे प्रोत्साहित किया।

मैं परवेन्द्र भाई, कम्प्यूटर टाईपिंग क़िला बरेली का भी हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मेरे इस शोधकार्य को अपनी पूरी लग्न एवं श्रद्धा के साथ पूर्ण किया।

अन्त में मैं त्रुटियों के प्रति क्षमा याचना के साथ अपनी शोध की साधना के सुमन श्री बालाजी महाराज को समर्पित करता हूँ। तथा उनका आशीष मुझ पर हमेशा इसी तरह बना रहे, यही कामना करता हूँ।

(राहुल बर्धन)

प्रस्तावना

एशिया महाद्वीप में ईरान (पर्शिया) से भारत के उपमहाद्वीप में प्राचीन काल से ही एक बड़ी जनसंख्या आर्य भाषाई थी। प्राचीन फ़ारसी और वैदिक (संस्कृत) ही गहन समानता को देखकर 10वीं सदी के विख्यात यूरोपीय भाषा विद्ों ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया गया था। यही नहीं बल्कि यूरोपीय महाद्वीप में प्राचीन भाषाओं जैसे-यूनानी, लैटिन व अन्य बोलिया में अनेक शब्द प्राचीन फ़ारसी और संस्कृत शब्दों से समानता रखती थी। भाषाई निकटता को देखकर सर विलियम जोन्स ने, जो कि 29 भाषाओं के ज्ञाता थे एक सिद्धान्त प्रतिपादित किया जिसमें इन सभी भाषाओं की उत्पत्ति एक अत्यन्त प्राचीन हिन्द-यूरोपीय भाषा से प्रतिपादित की गयी। यह कॉमन-इण्डो-यूरोपियन लैग्वेज़ बहुत सी भाषाओं और बोलियों की जनक थी। विलियम जोन्स के अनुसार यह साझी हिन्द-यूरोपीय भाषा यूरोप के स्टैप प्रदेश के चरवाहों के कबीले बोलते थे। इन कबीले की घुमन्तू शाखायें अपनी पशु-धन के साथ विभिन्न दिशाओं में बढ़ते गये। इस प्रकार नस्लीय फैलाव के साथ-साथ भाषाई फैलाव भी सम्भव हुआ और विभिन्न क्षेत्रों में भाषाई अन्तर के साथ हिन्द-यूरोपीय भाषाऐं स्थापित हुई।

ईरान और भारत में हिन्द आर्य भाषाऐं प्रसार पाती गयी। ईरान के सांस्कृतिक वैभव के अनुसार प्राचीन फ़ारसी समृद्ध हुई और भारत में हिन्द-आर्यन् विरासत लिए संस्कृत व स्थापित भाषाऐं मज़बूत हुई।

विलियम जोन्स ने भाषाई अन्वेषण के आधार पर एक बड़े पैमाने पर आर्यों के बड़े समुदाय का विभिन्न क्षेत्रों में प्रसार प्रस्तावित किया, जिसे बहुत से विद्वानों का समर्थन भी मिला। इस सिद्धान्त के आधार पर आर्य–भाषाईयों का आदि–देश यूरोप के केन्द्र में था। जहाँ से फैलकर और विजय प्राप्त करते हुऐ वे भारतीय महाद्वीप तक आ गये। एक ओर एक सिद्धान्त यूरोप और भारत के आर्य जाति को भावनात्मक रूप से जोड़ता था, तो दूसरी ओर यह भावनात्मक सिद्धान्त यूरोपीय और आर्य सम्बन्धों को निकट बताता था, जबकि इस सिद्धान्त के तथ्यों व प्रमाणों का नितान्त अभाव था। मार्टिन हौग ने उक्त सिद्धान्त में आर्य के पूर्वी क्षेत्र में प्रसार को अध्ययन क्षेत्र बनाया। हौग के अनुसार आर्य भाषाई ईरान में उस समय स्थापित रहे और अग्नि उपासना में नियत रहे। किन्तु आपसी मतभेद के कारण ईरान शाखा से अलग होकर एक दूसरी शाखा आर्यो का दूसरा वर्ग भारत और सीस्तान क्षेत्र में पलायन कर गया।

ईरान में बसे रहने वाले अग्नि उपासक आर्य *अवेस्ता* के धर्म में परिवर्तित हो गये। जबकि भारत पहुँचे आर्य वेदों की सत्ता में अनुयायी बने। हौग ने ईरानी आर्यों के मध्य मतभेद, विभाजन, पलायन, आदि अप्रमाणित तथ्यों के आधार पर आर्यों के विभाजन का सिद्धान्त रचा है। के०सी० चट्टोपाध्याय और आज के अनेक विद्वान हौग के तर्कों को कमज़ोर मानकर अस्वीकार करते हैं।

विलियम जोन्स तथा मार्टिन हौग के सिद्धान्त कितने सही या पुष्ट हैं इससे अतिरिक्त यह बात ही हमारे अध्ययन में महत्वपूर्ण है कि प्राचीन ईरान तथा प्राचीन भारत में अग्नि की उपासना अत्यंत महत्वपूर्ण धर्म था। *अवेस्ता* से पूर्व और *अवेस्ता*

के अधीन दोनों पक्षों में ईरान में अग्नि–पूजा, उसके उद्देश्य, संकल्पना व अनुष्ठान निश्चित थे। इसी प्रकार भारत में वैदिक काल से पूर्व अग्नि के प्रतीकात्मक प्रमाण उसके प्रति श्रद्धा स्थापित करते हैं। वेदों में अग्नि उपासना भली–भाँति स्थापित हो गयी थी और वैदिक साहित्य में अग्नि के अनुष्ठान ब्राह्मण धर्म के यज्ञ आदि प्रचलन में थे। अत: *अवेस्ता* और वेदों में अग्नि का अध्ययन महत्व रखता है।

प्रस्तुत शोध के परिप्रेक्ष्य में धार्मिक पक्ष में अग्नि की भूमिका यज्ञों में केन्द्रित है। अत: वेदों और पुराणों के आधार पर यज्ञ और अनुष्ठानों में अग्नि की उपदेयता को निम्न पृष्ठकों में निरूपित किया जाता है।

अग्नि–एक प्रकृति तत्व है। विज्ञान अनुसार अग्नि के प्रकट होने का कारण जो भी हो, किन्तु मनुष्य के मस्तिष्क में आदि काल से अग्नि के विभिन्न रूपों को देखकर अलग कल्पनायें बनी–जो कि विश्वास में परिवर्तित हुई। अग्नि की शक्ति से प्रभावित होकर, भयभीत होकर और उसकी उपयोगिता को जानने के उपरान्त मानव की अग्नि के प्रति श्रद्धा और बढ़ गयी।

जब मानव ने अग्नि को उत्पन्न करने की कला का अविष्कार कर लिया और अग्नि की ज्वाला को अपने कर्मों के अनुकूल नियन्त्रित कर लिया के तब उसे अग्नि की नयी भूमिका और उपयोगिता के सम्बन्ध में विश्वास बनते गये।

(1) वेदों में यज्ञाग्नि के रूप में अग्नि के उल्लेख प्राप्त है।

(2) पुराणों (विशेषकर) अग्नि पुराण में अग्नि व यज्ञ सम्बन्धी कथानक प्राप्त होते हैं अत: देवता रूप में अग्नि–वैदिक काल में अदृश्य रूप में निराकार रूप में पुराण में मूर्ति रूप में कर प्रारिक्त है।

अनुक्रमणिका

पृष्ठ सं०

प्रस्तावना :

प्रथम अध्याय : वेदों में अग्नि का स्वरूप, उपासना व अनुष्ठानः (1-81)

अग्नि के नामों का वर्णन ;

अग्नि का स्वरूप ;

अग्नि में व्याप्त शक्तियाँ ;

देवता के रूप में अग्नि ;

ऋग्वेदिक वैदिक सूक्त ;

वैदिक मंत्र ;

अग्निष्टोम यज्ञ ;

ऋभु गण ;

अग्नि कुलः- पुरोहितों के कुल व अभिवंशज

द्वितीय अध्याय : पौराणिक-काल में अग्नि सम्बन्धी अनुष्ठान,

मिथक व अग्नि-कुलीन राजवंशः (82-117)

देवता के रूप में अग्नि ;

मिथकः-दक्ष यज्ञ व सती, कामदेव दहन, इन्द्र वज्र;

अग्नि-पुराण ; अग्नि के हवनः- शक्ति रूप में अग्नि

ज्वाला मन्दिर ; अग्नि कुँड से वंशोत्पत्ति

तृतीय अध्याय : **अवेस्ता में अग्नि का स्वरूप, उपासना व अनुष्ठानः-** **(118-150**

अवेस्तीय अग्नि की उत्पत्ति ;

अवेस्तीय अग्नि के नामों का वर्णन ;

अहुर माज़्दा के रूप में अग्नि ;

अवेस्तीय सूक्त ;

अवेस्तीय यज्ञ ;

चतुर्थ अध्याय : **(151-165)**

हिन्द-ईरानी धार्मिक सम्मिश्रण में अग्नि, ईरानी-मग धर्म; भारतीय सूर्योपासना।

वेद और अवेस्ता में देवी-देवताओं का तुलनात्मक अध्ययन।

उपसंहार : **166-184**

चित्रफलक :

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः **(185-193)**

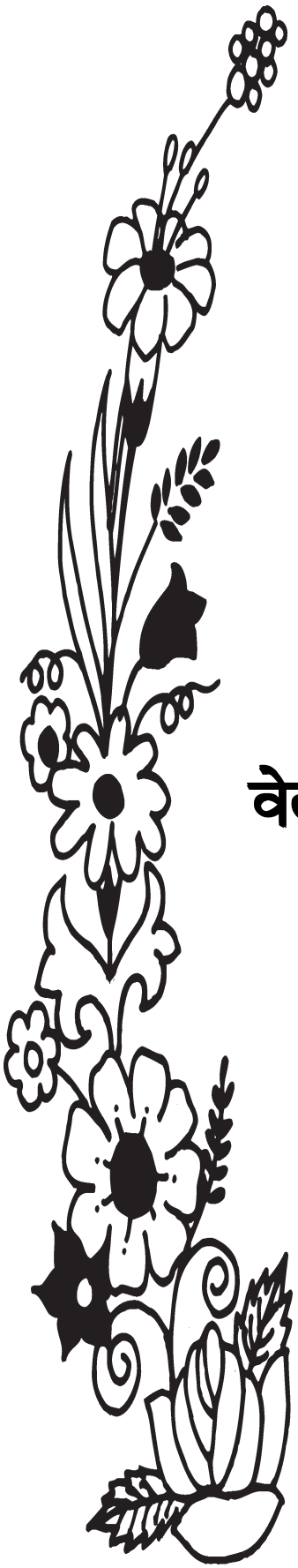

प्रथम अध्याय

वेदों में अग्नि का स्वरूप, उपासना व अनुष्ठान

वेदों में अग्नि का स्वरूप, उपासना व अनुष्ठान

अग्नि के नामों का वर्णन

वैदिक साहित्य में अग्नि को पिता, बन्धु गृहपति, दमनस्, राक्षसो का नाशक इत्यादि नामों से जाना जाता है। *अथर्ववेद* में उल्लेखित अग्नि को उदित होने वाला मित्र का सायंकाल का वरूण कहा गया है। अग्नि को देवों तथा द्यावापृथिवी के पुत्र के नाम से जाना जाता है। अपने नित्य आवहनों के द्वारा अग्नि अतिथि कहलाता है। *महाभारत* में अग्नि को वायु–पुत्र नाम से सम्बोधित किया गया है। अग्नि को रक्षोम अग्नि जो रक्षोम अग्नि–जो राक्षसों से रक्षा करती है, वैश्वानर अग्नि जो सूर्य (ज्वाला) रूप में संसार को उजाला प्रदान करती है। कहलाती है। जो सहसः सनु अर्थात् शक्ति का पुत्र नाम से भी जानी जाती है। अपानपात् होने के कारण जल का पुत्र भी कहलाती है। क्रोधित रूप होने के कारण अग्नि को रूद्र नाम से पुकारा जाता है। अग्नि को गार्हपत्यअग्नि, यम, मातरिश्रवन इत्यादि नामों से जाना जाता है। अन्य नामों में दृष्टृसंकल्प, कविऋतु, हृदय का संकल्प (ऋतुहर्नादि), अहिर्बुध्न्य, त्रित आप्त्य, ज्ञान प्रेरित शक्ति, जातवेदस, भद्रम, भाम, भागवत संकल्प, दिव्य सत्य का स्वामी, अत्रि, अंगिरा व अंगिरा स्तम्भ, नहुषस्य विश्वपतिम्, गोपा, पुरूप्रिय, पुरूहूत इत्यादि नामों से परिभाषित करके सम्बोधित

किया जाा है। रक्षौध्न सूक्तानुसार अग्नि का नाम धनुर्धर है अन्य नामों में भरत नाम से भी पुकारा जाता है अग्नि की त्रिशीर्ष, चतुर्नेत्र, सहस्रनेत्र, फुंकार करने वाला सर्प, सोमपा के नामों से जाना जाता है। अन्य नामों में अग्नि को उषर्बुधः, इठा का पुत्र, यज्ञ का गर्भ कहा जाता है। इस प्रकार अग्नि को प्रियंकर अर्थात् स्त्रियों का पति के नाम से जाना जाता है।

''स यदस्य सर्वस्माग्रमसृज्यत तस्मादग्रिर्ह वैतमग्निरित्याचक्षते परोस्क्षम।''

(शत० ब्रा०, 6.1.1.11)

इस प्रकार सर्वप्रथम उत्पन्न होने के कारण अग्निदेव को ''अग्नि'' के नाम से सुशोभित किया जाता है।

हरिकेश (ऋ०, 3.2.13), हिरण्यदन्त (ऋ०, 5.2.3) त्रिलोक में शिरोमणि, सप्तरश्मि (ऋ० 1.146.1)

अग्नि को वेदों में द्रविणोदस्, तनूनपात्, एवम् नराशंस त्वष्टा चिकित अर्थात् उर्द्धवस्तर पर ले जाने वाला नाम से जाना जाता है। अग्नि को शतम, देववीतम्, अपराजित होने के कारण चित्रभानु, स्वनीक, धृताहवन, बहुलवर्त्मा, तृत्यज्वा, दिक्पाल, व विश्व देवियों के रक्षक के रूप में अभयंकर, त्राता नामों से जाना जाता है। अन्य स्थानों में अग्नि को ऋव्याद, स्विष्टकृत यजुः कहा गया है। अग्नि का अन्य नामों में व्याख्यान है जो विभु, वसु, प्रजापति, सुप्रतीक, अजस्त्रदैवी ज्योति, औवे, भृगु, जमदाग्नि के समान धूमकेतु, संयतात्मा, व्रतभृत, व्रतपा है।

अग्नि को दक्षिण पूर्व दिशा–कोण का दिक्पाल के नाम से जाना जाता है। *यजुर्वेद* में अग्नि को धुरसि नाम से जाना जाता है जो कोई भी वस्तु को पाकर उस वस्तु को हवा में फैला देता है।

(1) नराशंस शब्द अग्नि के लिए प्रयुक्त हुआ है जो निम्न सूक्तानुसार कहा गया है।

''एतमेवाहुरन्येडग्निं नराशंसोस्थ्वरे ह्यायम् (बृह० 3.3)

आचार्य शाकपूणि के अनुसार–अग्नि नराशंस है जो यज्ञीम क्रिया में यही अग्नि याजको (लोगों द्वारा) प्रशंसनीय होती है। (नि० 8.6)

(2) बहहेदवताकार के अनुसार– ''अयं तनूनपादग्नि'' (2.26)

यह अग्नि एक पार्थिव अग्नि कहलाती है।

(3) अपांनपात्, अग्नि को ऋग्वेद 2.35 सूक्त में कहा गया है अपांनपात देवता की तुलना सूर्य और सविता से की गयी है–अपांनपादसूर्यस्य महना। (ऋ०, 2.35.2)

(4) अग्नि के लिए रूद्र का उल्लेख (तै०सं0 1/5/1) से प्राप्त हुआ है।

(5) वृषभ नाम अग्नि के लिए (ऋ०–1/58/5) में उल्लेखित है।

(6) *ऋग्वेद*, 1/41/6 में अग्नि को अश्व कहा जाता है।

(7) ऋ०, 1/143/5 से अग्नि को सोमपा कहा गया है।

(8) उषर्बुधः शब्द का उल्लेख ऋ०–1/44/12 से प्राप्त हुआ है।

(9) द्यावा, पृथ्वी का पुत्र के रूप में उललेख ऋ०, 3/2/2, 3/3/12, 3/25/1/ 10/1/2, 10/2/6 मिला है।

(10) अग्नि को त्वष्टा का अपत्य नाम का उल्लेख ऋ०, 1/95/2, 10/91/6 मिला है।

(11) अग्नि को इठा का पुत्र, यज्ञ का गर्भ (*ऋग्वेद*, 3/29/3, 6/48/5) में मिलता है।

(12) सहसः सनु अर्थात् शक्ति का पुत्र (*ऋग्वेद*-6/48/5) शब्द प्राप्त किया गया है।

(13) अग्नि अपानपात् है जिसका अर्थ ''जल का पुत्र'' अर्थात् जल का गर्भ कहलाता है जिसका उल्लेख (ऋ०, 3/1/2 एवं 13) से प्राप्त होता है।

(14) त्रिषधस्य अथवा त्रिपस्त्य शब्दों का उल्लेख (ऋ०-8/39/8) में मिलता है।

(15) दमूनस शब्द का उल्लेख *ऋग्वेद* 1/60/4 से प्राप्त होता है।

(16) पुरोहित के रूप में अग्नि ऋ०, 8/43/16, 10/7/3 में उल्लेखित है।

(17) अतिथि, पिता, भक्तों का बन्धु ऋ०, 10/91/2, 6/1/5, 8/43/16, 10/7/3 में स्पष्ट रूप से प्राप्त होता हैं।

(18) जातवेदस् अग्नि का उल्लेख 120 बार ऋ०, 6/15/13 से मिलता है।

(19) सायंकाल का वरूण, प्रातः काल का मित्र, सविता के रूप में, का उल्लेख (अ०वे०, 13/3/13) में मिलता हैं।

वेदों में अग्नि का स्वरूप

वैदिक साहित्य में अग्नि देव पूजित थे। अग्नि के प्रति देवत्व का मान *ऋग्वेद*– काल में प्राप्त होता है! इस काल में पृथ्वी स्थलीय देवमण्डल में अग्नि का स्थान महत्वपूर्ण था, क्योंकि इसके माध्यम से वैदिक–यज्ञ सम्पन्न होते थे।

''अग्नि देवानामद्वातमाम, अग्निर्वैदेवानां मृदुह्रदयतम

अग्निर्वैयानि यज्ञस्य''– (श0 ब्रा0,5 / 1 / 6,5 / 1 / 8,5 / 1 / 10)

ऋग्वेद में अग्नि–देवता की स्तुति में 200सूक्त आख्यात है जो अग्नि की वैदिक याज्ञग्निक महिमा को प्रस्तुत करते है। वैदिक साहित्य में अग्नि देवता की महिमा प्रस्तुत करते हुऐ कहा गया है कि देवता अग्नि का हमारे जीवन में विशेष महत्व हैः–

अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः।

अग्निमीधे विवस्वभिः।। (ऋ08 / 102 / 20)[1]

मानवीय जीवन में अग्नि देवता मुख्य देवता के रूप में पूजित हैं, परन्तु सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में अग्नि को एक सह–देवता के रूप में स्वीकार किया गया है। सूक्तानुसार जब अग्नि को प्रज्जवलित किया जाता है तो देवता अग्नि हमारे अन्दर ज्ञान की अग्नि को प्रकाशवान करते है

तद्उपरान्त मनुष्य इस ऊर्जावान अग्नि के द्वारा अपने जीवन के सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न करता है अग्नि देवता की कृपा ही हमारे जीवन को सफलता व ऊर्जा प्रदान करती है। मनुष्य जीवन में अग्नि एक घृत पृष्ठ है जो अग्नि का क्षेत्र है, अग्नि सहदेवता के रूप में एक मनुष्य रूप में मानवीय जीवन में लोगों के बीच उपस्थित है जिसका स्वरूप कुछ इस प्रकार है। अग्नि घृतकेश चूँकि ज्वाला ही उसके केश है, दाँत अत्यन्त तीव्र जो ज्वाला से युक्त है जो स्वर्ण तथा शीर्ष ज्वाला युक्त है। अग्नि देवता को त्रिशीर्ष भी कहते है। अग्नि देवता के पास सात सिर, चार मुख एवम् तीन जिह्वा है। कभी–कभी अग्नि सप्त जिहवायुक्त कहलाती है। अग्नि देव महान है जो मनुष्य में प्रविष्ट है।

"चत्वारि श्रृग त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्ष सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा वद्धो वृषभोरोरवीति महोदेवो मर्त्यों आविवेश।। (ऋ० 4/58/3)[2]

वेदों में अग्नि की महिमा करते हुए कहा गया है कि अग्नि देव को धावापृथिवी का पुत्र कहा जाता है, क्योंकि अग्नि का गमन मार्ग एक काले धुऐं सा है जो आकाश में प्रविष्ट होता है वैदिक अग्नि को धनुष विद्या में निपुण तथा पुरूषत्व के गुण पाये जाने वाला पुरूष के समान शक्तिशाली तथा विभिन्न रूपों में इसे व्याप्त कहा जाता है। (ऋ0 वे– 3/212,3/3/11,3/25/1,10/1/2,10/2–4/4/1)[3]

वैदिक साहित्य में ऋषि ज्वाला का आवाहन करते हुऐ कहता है कि हे अग्निदेव! आप मनुष्य जीवन में दिव्यता के रूप में प्रज्जवलित होकर मनुष्य को सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करके उसे ईश्वर को प्राप्त करने के लिए उत्साहित करते है और ईश्वर तक पहुँचने की प्रेरणा प्रदान करते है जो निम्नवत् सूक्त में कहा गया है।

मनुष्यत्तवा नि धीमहि मनुष्यत् समिधीमाहि।

अग्ने मनुष्वदडिगरो देवान देवमते यज।।[4]

हे अग्नि देव! आप हमारे अन्दर समाहित होकर, हम आपको प्रज्जवलित करते है जो आप एक मनुष्य का रूप लिए हुए है इसी रूप से आप दृष्ट रूपी शक्ति के द्वारा देवताओं का आवाहन करते हो। आपके प्रयास से ही मनुष्य को ईश्वर की प्राप्ति होती है। अग्नि देव के प्रयास से ही मनुष्य अपने शरीर में तेज को समाहित करता है। वैदिक अग्नि मनुष्य को दुष्कर विकास से सतम और आनन्द को प्राप्त कराती है। क्योंकि मनुष्य चिंतक प्रवृति का होता है और वैदिक अग्नि शाश्वत दृष्टा, जो मर्त्य को अमरता में विकसित होने में मनुष्य की सहायक होती है। इसी क्रम में मनुष्य अग्निदेव का आवाहन करते हुऐ कहता है :

त्वं हि मानुषे जनस्ने सुप्रीत इध्यसे।

स्त्रुस्त्वा यन्तमानुषक्सुजात सर्पिरासुते।।

वेद साहित्य में अग्नि की महिमा करते हुऐ कहा गया है कि ''हे अग्नि देव! तू मृत्यु को प्राप्त मनुष्य को दिव्य शक्ति के द्वारा, यज्ञ में प्रज्जवलित अग्नि के द्वारा उनकी आराधना करके दिव्य संकल्प अग्नि ही अपने पूवर्जों की आत्मा को शांति प्रदान करती है।वैदिक साहित्य में अग्नि का वर्णन करते हुये कहा गया है कि हे अग्नि! तुम दिव्य ज्वाला हो, तुम यज्ञकर्ता हो, तुम लोकों के प्रकाशमय मुख्यकर्ता हो, देवताओं को भेंट, उनको लाने और ले जाने में वाहक हो, तुम मनुष्य और देवो के बीच दूत का कार्य करते हो, तुम विजय हो, क्योंकि तुम्हारी विजय के द्वारा ही मनुष्य अपने अन्दर समस्त क्रियाओं का संवर्धन करता है। तुम मनुष्यों के जन्मों के ज्ञाता हो तुम्हें मर्त्य और अमर्त्य का ज्ञान है। तुम देवों का आवाहन करने के कारण यज्ञ के प्रमुख आवहन कर्ता हो।''[5]

वेद में अग्नि की महिमा के विषय में वर्णित है कि ''हे अग्नि देव आप प्रकाश और विशालता के अपार स्वामी हैं उनका यज्ञ स्वरूप विशाल है। वह यज्ञ में चढ़ाई गयी भेंटों को प्रज्जवलित कर यज्ञ क्रिया को सम्पन्न कराते हैं। कहा गया है कि, ''वेदानुसार, अग्नि देव! आप संकल्प के रूप हो।'' वेद में अग्नि की महिमा के बारे में कहा जाता है कि ''हे अग्निदेव

आप प्रकाश और विशालता के अपार स्वामी है आपका यज्ञ स्वरूप अपार विशाल है क्योंकि आप यज्ञ में अर्पित भेटों के द्वारा यज्ञ में प्रज्जवलित होकर साक्षात रूप में याज्ञिक क्रिया को सम्पन्न कराते है। ''वेदानुसार अग्निदेव आप संकल्प रूप हो, याज्ञिक क्रिया में आप सब देवताओं के साथ आगमन करते हो। इसी क्रम में आप का याज्ञिक आहुति देवता के रूप में मनुष्य आपका रूप स्वीकार करता है। क्योंकि याज्ञिक क्रियाओं में सबसे पहले मनुष्य आपको प्रथम देवता के रूप में स्वीकार करता है। आपको नमन करता है क्योंकि हे अग्नि देव! आप ही हमें सब देवताओं से मिलवाते हो। आपकी शक्ति की महिमा अपार है आप किसी भी देव को अपनी शक्ति के द्वारा बुला सकते हो। और किसी देव के पास पहुँच सकते हो। हे अग्नि देव! आप ने ऐश्वर्य को जीत लिया है क्योंकि आप ऐसे वाहक हो जो हमारे सद्वचनों को देवताओं के पास ले जाते हो और हमारी संकल्प शक्ति को बढ़ावा प्रदान करते हो। आप ऐश्वर्य प्राप्त करते हुये समस्त संसार का कल्याण करते हो।''

पुरोहित वैदिक अग्नि का आवाहन करते हुये कहता है ''हे अग्नि देव! तुम अपने अन्दर ज्वाला को समाहित करने वाले, जन्मों को जानने वाले, यज्ञ में अर्पित वस्तुओं का सेवन करने वाले, अपार शक्ति से परिपूर्ण हो। अग्नि देव हम आपका आवाहन करते है। क्योंकि आप सत्य की प्रज्जवलित ज्वाला के द्वारा देवताओं को अपने पास लेकर आने वाले

याज्ञिक पुरोहित हो। क्योंकि आप मनुष्य को देवताओं से मिलाने वाले एक मात्र देवता है। इस कारण आपका मनुष्य जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है।

अग्नि की महिमा का वर्णन करते हुये कहा गया है कि हे अग्नि देव आप देवों को आत्मा रूपी आसन पर प्रतिष्ठित करके, वो यहाँ आकर मनुष्य का संकल्प ज्ञान तेजस् करें।

" यस्मै त्वमायजसे स साधत्मनर्वा क्षेति दधते सुवीर्यम।
स तूतात नैनमश्नोत्यंहतिरग्ने सख्ये मा रिषामा वंय तव।।[6]

वैदिक कथनानुसार ''हे मनुष्य, तू अग्नि के लिए यज्ञ करता है। आप को पुरोहित मानकर यज्ञ प्रारम्भ किया जाता है क्योंकि तू यज्ञ का प्रमुख देवता है तेरी अनुपस्थिति के बिना यज्ञ सम्पन्न नहीं हो सकते है।वैदिक अग्नि के द्वारा मनुष्य के अन्दर संकल्प ज्ञान की ज्योति प्रज्जवलित होती है आप के द्वारा मनुष्य की समस्त बुराईयों का नाश होता है। हे अग्नि देव! आपकी प्रदीप्ती की चमक से हमारे विचारों में परिवर्तन होता है क्योंकि आपके तेजस् के द्वारा मनुष्य के अन्दर शक्ति, संकल्प, विजय की भावना जाग्रत होती है। इसी प्रकार हे अग्नि देव! हम आपकी स्तुति करके समस्त देवों को आमंत्रित करते है।''

वैदिक अग्नि के रूप का वर्णन वेद इस प्रकार करता है कि काली और लालिमा से युक्त अग्नि, लपटों से युक्त अग्नि हमारे विचार को सुदृढ़ बनाती है जो हमारे ह्रदय में शुद्धता का संचार करके बुराईयों को दूर करके नवीन जीवन का निर्माण करती है। ''हे वैदिक अग्नि देव! सुख और आनन्द के मार्ग की दिव्यता द्वारा हमारे गृह एवंम् मनो के विचारों को सुख एवंम् शान्ति प्रदान करो। हे अग्नि देव! आप ऐश्वर्य एवंम् अतुल्नीय सत्ता के देवता है मनुष्य तेरी सत्ता को प्राप्त करने के लिए यज्ञ का आयोजन करता है। हे अग्नि देव! तू ईश्वर को जानने वाला है तू ईश्वर तक मनुष्य को पहुँचाने वाले वाला एक मात्र ईश्वर हैं तेरी सत्ता महान है। तू हमारे जीवन को दीर्घ आयु प्रदान करता है।

वैदिक अग्नि देवता के द्वारा मानव बुद्धि एवंम् विवेक को सकुशल बनाने का महान श्रेय जाता है। वह मनुष्यों को चौतरफा ज्ञान अर्जित कराता है। अतः अग्नि देव महान है। उसक सत्ता अनन्त है। वह देवों में देव है।

सुक्षेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे।

अपनः शोशुचदघम्।।

वैदिक अग्नि से प्रार्थना करते हुए ऋषि कहता है कि अग्नि देव! आप उन्हें सुख के मार्ग पर अग्रसर करे, उनके पापों का विनाश करके

जीवन को आनन्दमय बनाये। क्योंकि अग्नि द्वारा बनाये मार्ग पर चलने से मनुष्य के जीवन में आनन्द का अनुभव व चित एकाग्र रहता है।[7]

वैदिक अग्नि का सविस्तार वर्णन किया जाये तो इस अग्नि के द्वारा मनुष्य के जीवन को अनेकों महान कार्य इस अग्नि ने प्रदान किये है। वैदिक अग्नि की सत्ता से ही मनुष्य अपने जीवन को आनन्दमय बनाता है।

वेद में अग्नि को विश्वव्यापी अग्नि का रूप माना गया है क्योंकि अग्नि देव संसार की समस्त वस्तुओं के ज्ञाता है अग्नि देव की महिमा अपार है, पृथ्वी से आकाश तक व्याप्त है, राजा से लेकर निर्बल व्यक्ति तक अग्नि को रक्षक माना गया है और इसी रूप में अग्नि का आवाहन भी किया गया है। वेदों में अग्नि की महिमा को प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि वह देवताओं की कल्याण कर्ता है और सभी उसकी स्तुति प्रस्तुत करते है। उसकी महिमा सत्य से परिपूर्ण है उसकी वाणी भी सत्यता से पूर्ण है (ऋ0 वे0, 1.59,)। अतः ''हे अग्नि देव! आप यज्ञ के होता के रूप में शांति से परिपूर्ण हो, सत्य से पूर्ण हो, हे अग्नि देव! आप ने इन सभी गुणों को समर्पण द्वारा अपने अंदर समाहित किया है। हे अग्नि देव! आप यज्ञ में उपास्थित होकर मनुष्य के विचारों को अभिव्यक्त करके देवों को भेजते हो। हे अग्नि देव! आपकी कृपा मनुष्य के मन एवंम् ह्रदय के विचारों को परिवर्तित कर देती है। हे अग्नि देव! आप सत्य से युक्त प्रकाशमय हो, आप

स्वामियों के स्वामी, लोकों का ज्ञान रखने वाले, मन एवम् हृदय के विचारों को ज्ञात करने वाले हो। आपकी कृपा के द्वारा मनुष्य सत्य से परिपूर्ण होकर अपने ज्ञान को उजागर करके अपने को समृद्ध बनाता है। हे अग्निदेव आप स्वामियों के स्वामी हो सभी लोको का ज्ञान रखने वाले हो।''

''अग्नि पुरोहित पूज्य यज्ञ के ऋत्विक दिव्य।
होता, श्रेष्ठ निधिदाता।।

वेद में अग्नि देव की प्रसंशा करते हुये कहा गया है कि अग्नि देव! शक्ति के स्मरण कर्ता हो, आवाहन और यज्ञ की आत्मा एवम् आराधना होकर स्वंय पुरोहित हो। आप यज्ञ के अधिष्ठाता, प्रत्यक्ष पुरोहित ऋत्विक और होता भी है।

वैदिक मान्यता है कि अग्निदेव के पास उपासना का भण्डार है, शक्तियों से परिपूर्ण है इसलिए अग्नि को धाता कहा जाता है। अग्नि देव प्रत्यक्ष मानवीय रूप धारण किए है। ऐसा कहा गया है उन्हें लोगों के पथ–प्रदर्शक, साधक, एवम् उनको लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रेरित करने वाला कहा है अग्निदेव मनुष्य के होत्र और पोत्र को ग्रहण करते है। अतः प्रार्थना की गयी कि हे अग्नि देव! आप हर्ष से परिपूर्ण हो, आप मनुष्य का लालन–पालन करने वाले हो। तुम ज्ञानी को ज्ञान प्रदान करने वाले हो।''[8]

''हे अग्नि देव! हम यज्ञ में आवाहन के लिए समय–समय आहुति प्रदान करते है तद्पश्चात् अग्नि देव आप देवताओं का गुणगान करते हो।'' वैदिक साहित्य में अग्नि को यज्ञ का प्रतीक या चमकीला चिह्न मानकर उसकी पूजा की जाती है। मान्यता है कि अग्नि देव! आप मृत्यु लोक का मार्ग और उसकी बुद्धि को सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हो।[9]

वेदों में अग्नि को विभिन्न रूपों में उपस्थित माना गया है– अग्नि, वायु, आदित्य, आहवनीय, दक्षिण, गार्हपत्य, वैश्वानर, तेजस्, प्राज्ञ आदि व इन्हीं रूपों में पूजित किया जाता है। अग्नि देव को आप गृह के स्वामी, कहा गया है क्योंकि इस अग्नि के द्वारा मनुष्य अपने नित्य कर्मों को सम्पन्न करता है। वैदिक अग्नि प्रकाशमान देव है। क्योंकि अग्नि का गुण दाहकत्व का है इसी प्रकार अग्नि को देवों का पिता और राक्षसों का विनाशक कहा जाता है। अग्नि देव को पिता कहने का तात्पर्य है कि अग्नि देव सभी को अपने संरक्षण में रखते है। (वही, 1.6.4.7, वही, 1.4.3.5, वाजसनेयी संहिता 1.17)[10]

अग्नि देव को 'नित्य आवहनों का अतिथि' का नाम प्रदान किया गया है। वैदिक अग्नि देव की महत्ता याज्ञिक क्रियाओं एवं दाह कर्मों के कारण पौराणिक काल से आज तक यथावत् बनी हुई है। इसी कारण अग्निदेव की पवित्रता आज भी उसी रूप में विद्यमान है। वैदिक साहित्य में अग्नि को पुरोहित, श्रम करने वाला ब्राह्मण कहा है इसी प्रकार प्रकृति की प्रमुख शक्ति होने के कारण अग्नि को वेदों में मानव रूप में स्वीकार किया है।

(वही, 2/1/2/4/9, शतपथ ब्राह्मण 10/4/1/5)[11] *ऋग्वेद* में अग्नि को स्पष्ट रूप से भरत कहा जाता है वैदिक साहित्य में अग्निदेव को चर–अचर का ज्ञाता कहा जाता है इसलिए इसे जाति वेदस् कहा जाता है। अग्नि देव को सूर्य के समान सर्वज्ञाता होने के कारण भुवन चक्षु कहा जाता है। ऋग्वेद में अग्निदेव को यज्ञ का शासक कहा जाता है वेद साहित्य ऋग्वेद में अग्नि को 'अग्निर्होता ग्रहपतिः स. राजा' कहा गया है। वेदों में अग्नि का वर्णन करते हुए कहा जाता है कि ''अग्नि देव आप अग्निदन्त हों, आप उन्हें मार डालो जो दुष्ट है हमारे विरूद्ध रात्रि में षड्यंत्र रचते है उसका विनाश करो। हे अग्नि देव! आप शक्ति वाहक और शक्तिरूप में राजनीतिक का समर्थक हो।'' भौतिक रूप में मनुष्य के मित्र हो। वैदिक अग्नि देव से प्रार्थना करते हुए कहा जाता है कि वह अग्नि देव जो प्रकाश से परिपूर्ण है उन्हें मनु ने शाश्वत लोगों के लिए स्थापित किया है। वेद में अग्नि की महिमा बताते हुए कहा गया है कि गार्हपत्य अग्नि को प्रतिदिन प्रातः और सांय यज्ञ का आयोजन करके अग्नि का आवहन करने से अपने मानसिक विकास को मजबूत किया जा सकता है। जिससे ह्रदय में कर्मों के प्रतिदिन श्रद्धा, विश्वास, एवम् आस्था का उदय होता है। वैदिक अग्नि की प्रशंसा करते हुये कहा गया है कि हे अग्नि देव! आप हमारे पुरोहित हो, और हमारी समस्त पूजा और श्रद्धा को देवताओं तक पहुँचाते हुये देवताओं और मनुष्य के बीच सम्बंध स्थापित करते हो। इसीलिए वैदिक अग्निदेव की प्रशंसा में कहा गया है–

"अग्नि दूत वृणीमहे", अग्ने मील पुरोहित....."[12]

(ऋ०, 1/12/1)

वैदिक साहित्य में अग्नि को एक दूत और पुरोहित से विभूषित किया गया है। क्योंकि हे अग्नि देव! आप हमारे और देवताओं के बीच सम्बन्ध स्थापित करते हो।

अग्नि मीडेपुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्

होतारं रत्नधातमम।।

इस मंत्रानुसार ज्ञात है कि अग्निदेव पुरोहित की उपमा देते हुये सद्गुणों से परिपूर्ण बताया गया है। इसी कारण अग्नि देव को वेद में अन्तरिक्ष का देवता वायु, स्वर्ग देवता आदित्य, पावमान, पावक, शुचि इत्यादि नामों की उपमा प्रदान की गयी है। इसी प्रकार वेद में अग्नि को दक्षिण–पूर्व का दिक्पाल कहा जाता है। वेद में अग्नि अपार शक्ति के साथ धधक रही है यह मनुष्य को आयु, सन्तान तथा ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न करती है। वेद में अग्नि की प्रशंसा करते हुये कहा गया है कि यह अग्नि मनुष्य के मस्तिष्क में तेज़ उत्पन्न करके शरीर एवम् हृदय को शक्तिशाली बनाती है (ऋ0 वे0 4/14/2)[14] वेद अग्नि को चारों दिशाओं का स्वामी और भ्रमण करने वाला बताया गया है (तदैव,4/3/1)[15]

वेद अग्नि को गृहस्थ जीवन में प्रियंकर (स्त्रियों का पति) कहकर सम्बोधित करता है।

संदर्भ

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008 पृ0–199
2. वही, पृ0–82
3. वही, पृ0–5,8,31,2,10
4. श्री अरविन्द, वेद–रजस्य (उत्तरार्द्ध), पांडिचेरी, 2003 पृ0 104
5. वही, पृ0–104
6. वही, पृ0–246
7. वही, पृ0–251
8. पूर्वोक्त, पृ0–1
9. श्री अरविन्द, वेद–रहस्य (पूर्वार्द्ध) पांडिचेरी, 2003, पृ0 102
10. दुबे, सीताराम–वैदिक संस्कृति और उसका सातत्य, दिल्ली, 2002, पृ0–57
11. वही, पृ0–64
12. आचार्य, श्री रामशर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008 पृ0–13
13. वही, पृ0–1
14. वही, पृ0–23
15. वही, पृ0–7

अग्नि की शक्तियाँ

न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः

"अग्निर्जम्भैस्तिगितैरत्तिभर्वति योधो न शत्रुन्त्स बनान्यृअते"

(ऋ0–1/143/5)

अग्नि देव के पास अनेक अपार शक्तियाँ है जिनका उल्लेख प्रस्तुत किया गया है। अग्नि देव अपनी तीव्र नुकीले दाँतो से वनों का विनाश कर सकते है उन्हें नष्ट कर सकते है। जिस प्रकार से एक वीर योद्धा शत्रुओं का विनाश करता है। अग्नि का मुख धृतमुख है जो आग बरसाने वाला है। धृतकेश है ज्वाला, ही उसके केश है। अग्नि देव जिस पथ पर गमन करता है काले रंग का स्तम्भ है जो अपने धुऐ से आकाश का भ्रमण करता है। अग्नि धनुषविद्या में निपुण कहा जाता है जिससे अपने शत्रुओं का संहार करता है। अग्नि देव में वृषभ के समान अपार शक्ति है, जो अपने बलशाली होने का प्रमाण देता है। अग्नि देव की शक्तियाँ इस संसार में विभिन्न रूपों में व्याप्त है। अग्नि अपनी प्रदीप्ति और चमक के द्वारा मनुष्य के तेजस् को बढ़ावा प्रदान करती है। "हे अग्नि देव! आप मनुष्य रूपी अपार शक्तियों से परिपूर्ण हो, शत्रुओं का संहार करने वाले हो। शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके ऐश्वर्य के अधिपति और अनेक शक्तियों से परिपूर्ण हो।"[1]

''हे अग्निदेव! आप मूल शक्तियों के स्मरण कर्ता हो आवाहन और यज्ञ की आत्मा, आराधना एवंम् पुरोहित की शक्तियों से पूर्ण हो।'' हे अग्नि देव! आप यज्ञ के अधिष्ठाता, प्रत्यज्ञ पुरोहित, ऋत्विक, होता के समान शक्तियाँ रखते हो। अग्नि देव प्रकाशमान देव है क्योंकि अग्नि की प्रमुख शक्ति दाहकत्व की है। इसी कारण इसे गृहपति, दमनस् की उपाधियों को प्रदान किया जाता है। अग्नि देवों के पिता, और राक्षसों के विनाश करने की शक्ति रखता है।

ऋग्वेद में अग्नि को विध्यधाया की शक्तियों से परिपूर्ण बताया गया है। क्योंकि अग्नि सर्वजगत् का धर्ता है अग्नि पृथ्वी पर निवास करते हुए सारे जगत् की धरायिता अग्नि के रूप में कार्य करती है। क्योंकि अग्नि को शत्रुओं का विनाशक कहा जाता है। अग्नि से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि हे अग्नि! जो दुष्ट है उन्हें मार डालो, जो रात्रि में प्रहार करते है उनका विनाश करो।

अग्नि देव में पुरूषत्व की शक्तियाँ अधिक होती है जब अग्नि देव अपने सीगों को हिलाता है उसे पकड़ना मुश्किल है अग्नि देव को अश्व के समान शक्तिशाली माना जाता है जो रथ पर सवार होकर शत्रुओं पर प्रहार करती है। अग्नि देव को पक्षी के समान शक्ति प्रदान की गयी है। आकाश का पक्षी गरूण है जो दिव्यता से परिपूर्ण जो मनुष्य की वाणी को देवों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

अग्नि की शक्तियाँ जल में होने के कारण उसे हंस का रूप प्रदान किया गया है क्योंकि वह संसार की समस्त वनस्पति के प्राणों में निवास करती है। उसकी शक्तियाँ पंखों से परिपूर्ण है। इस प्रकार अग्निदेव की शक्तियों को निम्न रूपों में दिखाया गया है। चार सींग, तीन पैर, दो सिर, सात भुजा धारण किये हुए रूप में दिखाया गया है। *ऋग्वेद* में उल्लेखित है कि अग्निदेव को अपार शक्ति से परिपूर्ण बताया गया है क्योंकि प्रज्जवलित सिर, तीन जिह्वा को विकराल शक्ति के साथ प्रदर्शित किया गया है। अग्नि को अश्व के समान शक्तिशाली, आध्यात्मिक सामर्थ्य और तपस्यावान दिखाया गया है जो बलशाली, प्रतिभावशाली है, जो एक शक्ति का पुंज धारण किये हुए है। अग्नि की ज्वाला की शक्ति ''संकल्प शक्ति'' से परिपूर्ण है। इस शक्ति के द्वारा मनुष्य ईश्वर के निकट पहुंचने का मार्ग प्रशस्त कर लेता है।

संदर्भ

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा, ऋग्वेद–संहिता, मथुरा–2008 पृ0–122

अग्नि के रूप

देवता के रूप में अग्नि – वेद, अग्नि को मानवीय जीवन में मुख्य देवता के रूप में मानते हैं, परन्तु उसके गुणों, रूपों की व्याख्या अनेकों रूपों में की जाती है क्योंकि अग्नि का रूप अनेकों विधि–विधानों में अलग–अलग व गुण भी अलग–अलग पाये जाते हैं। इसलिए अग्निदेव के गुणों और रूपों का सविस्तार वर्णन वेदों में किया जाता है क्योंकि अग्नि मानवीय जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है इसलिए अग्नि धृत पृष्ठ है, धृत पृष्ठ ही अग्नि का क्षेत्र है। अग्नि के रूप का वर्णन वेद इस प्रकार करते हैं कि अग्नि सुन्दर जिह्वा, धृतकेश धारण किये हुए हैं क्योंकि ज्वाला ही उसके केश है। अपने स्वर्ण मुक्त दाँत जो तीव्र एवम् शीर्ष ज्वालायुक्त है इसलिए वेद अग्नि को त्रिशीर्ष की संज्ञा प्रदान करते है इस रूप के द्वारा उसके पास सात किरण, चार मुख, तीन जिह्वा है, इसी रूप को सप्त जिह्वा मुक्त कहा जाता है, वेद अग्नि को महान देव मानते हुए मनुष्य में प्रविष्ट होने को कहता है।

''चत्वारि श्रृग त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्ष सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा वद्धो वृषभो शेरवीति महो देवो मर्त्यों आविवेश।।

(ऋ0, 4/58/3)

सूक्तानुसार अग्नि देव को धावा पृथिवी के पुत्र के रूप में पूजा जाता है क्योंकि अग्नि जिस पथ पर गमन करती है वह काले रंग का है, स्तम्भ की भाँति अपने धुंऐ से आकाश का भ्रमण करती है। अग्नि को धनुष विद्या में निपुण कहा जाता है, अग्नि के अन्दर पुरूषत्त्व के गुण है क्योंकि अग्नि पुरूष के समान बलशाली है जो विभिन्न रूपों में संसार में व्याप्त है।

(ऋ0 वे0 5/4/3,17/89,3/20/2,3/1/11)[2]

ऋषि अग्नि की ज्वाला का आवाहन करते हुए कहता है कि ''हे अग्नि! आप मानव जीवन में दिव्यता रूप में मनुष्य को सत्य की प्रेरणा प्रदान करो।''

दिव्य रूप में मनुष्य के अन्दर समाहित होकर मनुष्य आप को प्रज्जवलित करता है और आपके तेज से मनुष्य को तेजस् प्राप्त होता है क्योंकि अग्नि शाश्वत द्रष्टा जो मर्त्य को अमरता में आवाहन करने में सहायता करती है।

दूत के रूप में – अग्नि मनुष्य और देवताओं के बीच में आवागमन का कार्य करती है जो मनुष्य के हृदय की वाणी को देवों तक पहुँचाती है। इसलिए अग्नि को दूत की संज्ञा प्रदान की जाती है।

मित्र के रूप में – अग्नि मनुष्य का भला करती है वह सत्य से परिपूर्ण है, सत्यता के द्वारा मनुष्य विजय प्राप्त करते हुए सत्य के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है। हे अग्नि आप मनुष्य रूप में शक्तियों से परिपूर्ण हो, शत्रुओं का संहार करने वाली हो, यज्ञ में उपस्थित होकर मनुष्य के विचारों को देवताओं के पास आप ही भेजते हो। आप सभी गुणों से परिपूर्ण हो।

दिव्य पक्षी के रूप में मनुष्य को सूर्य के निकट जहाँ पुराण ऋषि रहते है वहाँ विचरण कराती है। (वा0 स0, 18/51)

अग्नि के चार मुख और तीन जिह्वा है कहीं–कहीं उसकी सात जिह्वा का रूप होता है अग्नि को अश्वों पर सवार सात जिह्वा के रूप में बताया गया है। चार आँखे और कहीं सहस्त्रानेत्र कहा गया है। अग्नि सहस्र श्रृग है जो एक पशु के रूप में विचरण करती है। अग्नि धनुष विद्या में निपुण है जो अपने शत्रुओं का विनाश करती है।

अग्नि में पुरूषत्व अधिक होता है, जब अग्नि देव अपने सीगों को हिलाते है तो उन्हें पकड़ना मुश्किल होता है अग्नि को अश्व के रूप में भी प्राप्त किया गया है वह रथ पर सवार होकर अपने शत्रुओं पर वार करती है।

गरूड़ के रूप में अग्नि इस जगत् में व्याप्त है जो और दिव्यता से परिपूर्ण है। मनुष्य की वाणी का संचार देवों के समक्ष प्रस्तुत करते है। इसी

क्रम में अग्नि का स्थान जल में होने के कारण अग्नि पक्षी हंस के रूप में जल में विचरण करते है, क्योंकि अग्नि संसार के समस्त वनस्पति के प्राणों में निवास करती है। अग्नि पंखों से परिपूर्ण है।

(ऋ0 वेद–3/1/11,1/14/7,8/49/2,8/49/2,1/58/5,2/5/3)[3]

इसी प्रकार अग्नि देव अपनी सप्त जिह्वा को आगे निकालते है तो इस रूप की कल्पना एक कुल्हाड़ी के रूप में की जाती है। अग्नि अपने तीव्र दाँतों से समस्त संसार के वनों का विनाश कर सकती है। अग्नि के चार अश्वों देवों को बुलाने का कार्य करते है। अग्नि का रूप गर्जन करते हुए वृषभ प्राप्त होता है अग्नि देव को चार सींग, तीन पैर, दो सिर, और सात हाथ के साथ पशु रूप में प्रदर्शित किया गया है। अन्य रूपों में अग्नि को भी प्रदर्शित किया जाता है क्योंकि अग्नि सात जिह्वा, प्रथम चमकीले दाँत, चार नेत्र, हजार सीगों वाला, तथा धूम पताका धारण करने वाला एक दिव्य रूप लिए अग्नि देवता कहा जाता है।

ऋ0वे0– 5/2/3,1/31/23,6/2/18,1/27/11)[4]

अग्नि को दिव्य काल्पनिक रूप में भी पूजित किया जाता है। क्योंकि अग्नि सत्य का चमकीला संरक्षण एवंम् गृहस्थ जीवन में देदीप्यमान होकर मनुष्य जीवन को सफलता से परिपूर्ण करता है।

अग्नि की कल्पना गौ (गाय) के रूप में भी की जाती है। जो प्रकाश के पुंज को आगे लेकर चलती है। गाय प्रकाश का प्रतीक है। अग्नि को पुत्र का भी रूप प्रदान किया गया है। जो कर्मों का अपत्य, सूनु के रूप पूजित किया गया है। अग्नि की ज्वाला संकल्प की शक्ति है जो हमारे मन को आगे ले जाती है। संकल्प शक्ति का रूप ही सप्त जिह्वा है।

अग्नि को ध्रुव के रूप में माना जाता है जो शक्ति का पुंज है। जो आकाश से पृथ्वी पर पराक्रमी वीर योद्धा के रूप में चमकीले घोड़े से उतरा है। अग्नि की दिव्यता का रूप दधित्रावा है जो अग्नि द्वारा युद्ध में शत्रुओं को परास्त करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। अग्नि का अन्य रूप अहिर्बुध्न्य (सर्प) है, जो शत्रुओं का विनाश करके हमारी सत्ता तीसरे लोक में स्थापित करता है। अग्नि को ऋत्विक का रूप प्रदान किया है जो कर्म, यज्ञ का दृष्टा कहा जाता है। इसी प्रकार ''कीर्ति'' शब्द से अग्नि के चित्र–विचित्र रूप की कल्पना की जाती है।[5]

अग्नि, शक्ति और प्रकाश के रूप में दिव्य शक्ति के द्वारा लोको का निर्माण करती है। अग्नि की ''विश्वानि वयुनानि विद्वान'' के रूप की कल्पना की जाती है।[6]

अग्नि सत्य का सतत् प्रकाश का रूप है जो मस्तिष्क के अन्दर अशुभ विचारों का अन्त करती है। अग्नि को मनुष्य के मन का भजन करने

वाला, संकल्प शक्ति से परिपूर्ण अपार शक्तिशाली, सत्यता के रथ पर सवार रहने वाला, मनुष्य के कार्य को सिद्ध करने वाला देवता का रूप प्रदान किया गया है।[7]

अग्नि के रूप की कल्पना दृष्टा संकल्प (कविऋतु) द्वारा की जाती है। अग्नि देव का संकल्प बल, ज्ञान के बल, के रूप में विद्यमान है। अग्नि पुरोहित के रूप में कल्पनीय है जो संकल्प बल, और शक्ति के द्वारा महान, उच्च संभ्रान्त कहलाती है।[8]

अग्नि यज्ञ के पुरोहित के रूप में कल्पनीय है जो अंधकार की शक्तियों को नष्ट करके मनुष्य को प्रकाशवान ऊर्जा प्रदान करती है। अग्नि एक ज्योति और ज्वाला का रूप धारण किए हुये है। अग्नि स्वंय जन्म लेती है इसलिए इसे शक्ति का पुत्र (सहसस्पुत्रः) की उपाधि प्रदान की जाती है।[9]

(ऋ0,1/140/1)

अग्नि प्राणि जगत की संकल्प शक्ति प्राणों में समाहित होकर अश्व का रूप धारण करके मनुष्य के जीवन को आकाश में ऊँचा प्रज्जवलित करती है।[10]

'संकल्प अग्नि' के रूप में आहुति के वाहक के रूप में पुरोहित रूप धारण करते हुये अग्नि पुरोहित कही जाती है। अग्नि ऐश्वर्य विजेता, देवों

का दूत, स्तुति वचन को सुनता है। इसी रूप को अग्नि अपने हृदय में प्रज्जवलित करके अपने हृदय को शुद्ध करती है।[11]

अग्नि को अश्व रूप में, मनुष्य के मित्र के रूप में, अधिपति, विशालता का अधीश्वर, सब देवों को अपने वश में करने वाला, समस्त प्राणी का कल्याण करने वाले के रूप में कल्पना की जाती है। ''हे अग्नि देव! आप देवों के देव के रूप में कल्पनीय है। आप मित्र और प्रेमी के रूप में पूजित किए जाते है।''[12]

''अग्नि देव तुम संकल्प शक्ति से घरों में दिव्य रूप से प्रज्जवलित होकर गृहस्थ जीवन को सुखमय बनाते हो।'' (ऋ0, 10/91/1)[13] अतः अग्नि को अनेकों रूपों में इस संसार में पाया जाता है क्योंकि अग्नि देव का विभिन्न रूपों में पाया जाना मनुष्य के लिए लाभप्रद होता है अग्नि देव मनुष्य की विभिन्न रूपों में सहायता करते हुए उसे विचारों को शुद्ध करके ईश्वर के निकट का मार्ग दिखाते है।

अग्नि को विभिन्न गुणों से परिपूर्ण माना जाता है क्योंकि यह पुरोहित होने का गुण रखता है। जो सब चीजों का ज्ञाता है। संसार की किसी वस्तु से वह अनभिज्ञ नहीं है। क्योंकि अग्नि दयार्द्र दृष्टि का ऋषि है जो यज्ञ कर्म एवं सम्पूर्ण कर्मों को जानने का गुण रहता है। उसे सब प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने वाला कहा जाता है अग्नि सर्वज्ञ, सर्वविद् होने

का गुण रखता है। अग्नि से ज्ञान एवं स्त्रोत उत्पन्न होने का गुण प्राप्त होते है। अग्नि प्रेरणादायक एवं तेजस्वी भाषा का गुण रखने वाला देव है। अग्नि देव को इस संसार का प्रथम उत्पादक और वक्ता होने का गुण प्रदान किया गया है। अग्नि के अन्दर सम्पत्ति प्रदान करने का गुण प्रमुखता से पाया जाता है।[14]

अग्नि असुर होने का गुण रखता है क्योंकि वह दिव्य सम्राट् है। अग्नि, इन्द्र के समान शक्तिशाली भी होने का गुण रखता है। अग्नि वरूण एवं मित्र का गुण रखता है, जब वह यज्ञ में जाता है तो वह वरूण हो जाता है, और जन्म के समय उसके वरूण होने का गुण होता है। सांयकाल वह वरूण तथा प्रातः काल वह मित्र का रूप लेने का गुण रखता है। उसके अन्दर सविता बनकर आकाश में प्रवेश करने का गुण होता है। क्योंकि वह आकाश को अपने काले धुँऐ से सम्पूर्ण आकाश में व्याप्त बुराईयों का त्याग करके मनुष्य को एक शुद्धता से परिपूर्ण वायु प्रदान करता है।[15] इस प्रकार अग्नि में अनेक गुणों का समायोजन होता है क्योंकि अग्नि अपने विभिन्न गुणों के द्वारा मानव के जीवन को सफल बनाता है। इस प्रकार अग्नि का स्थान अनेक देवताओं में सबसे अलग मिलता है। जो सम्पूर्ण गुणों से परिपूर्ण है।

संदर्भ

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008 पृ0–58
2. वही, पृ0–7, 28, 1
3. वही, पृ0–2,16,61,83,9
4. वही, पृ0–5,40,3,35
5. श्री अरविन्द–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध), पांडिचेरी 2003, पृ–14–16
6. वही, पृ0–106
7. वही, पृ0–28
8. वही, पृ0–30
9. वही, पृ0–216
10. पूर्वोक्त, पृ0–30
11. श्री अरविन्द–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध), पांडिचेरी 2003, पृ0–19
12. वही, पृ0–9
13. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008 पृ0–167
14. पूर्वाक्त, पृ0–20
15. श्री अरविन्द–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध), पांडिचेरी 2003 पृष्ठ–20

ऋग्वैदिक सूक्त

(1) यो हव्यान्यैरयता मनुर्हिता देव आसा सुगन्धिना।
विवासते वार्याणि स्वध्वरो होता देवो अमर्त्यः।।24।।[1]

(ऋग्वेद, मण्डल–8, सूक्त–19)

अर्थ– हे अग्निदेव ! आप महान गुणों से पूर्ण प्राणियों का हित करने वाले, मनुष्य द्वारा अर्पित आहुति को मुख द्वारा देवों के समीप ले जाने वाले, अहिंसित कार्यों को करने वाले, देवों का आवाहन करने वाले अमर्त्य अग्निदेव आप श्रेष्ठ हैं।

(2) यो अग्निः सप्तमानुषः श्रितो विश्रवेषु सिन्धुषु।
तमागन्म त्रिपस्त्यं मन्धातुर्दस्युहन्तममग्निं यज्ञेषु पूर्व्यनभन्तामन्यके समे।।8।।[2]

(ऋग्वेद, मण्डल–8, सूक्त 39)

अर्थ– हे अग्निदेव! सातो समुन्दर, नदियों तथा सभी मनुष्यों में आप व्याप्त हैं। आप आकाश, पृथ्वी, अन्तरिक्ष में निवास करने वाले विदुषी व्यक्तियों की रक्षा करते हैं। महान और बुरे प्रवृत्ति के लोगों के आप संहारक को हम यज्ञ द्वारा आहुति अर्पित करते हैं क्योंकि हे अग्निदेव! आप हमारी सभी बुराइयों का विनाश करते हो।

(3) कुविन्ना अग्निरुचथस्य वीरसद्वसुष्कुविद्वसुभिः काममावरत्।

चोदः कुवित्तुतुज्यात्सातये धियः शुचिप्रतीकं तमया धिया गृणे।।[3]

(ऋग्वेद, मण्डल–1, सूक्त–143)

अर्थः– हे अग्निदेव! हम स्तोत्र के द्वारा अपनी विशेष कामना से प्रेरित होकर, आपने हमें जो आश्रयभूत धन तथा अभीष्ट कामनाओं से हमारे जीवन को पूर्ण किया है इसी कामना अथवा कल्याणार्थ श्रेष्ठ कर्मो को करने के लिए आप हमें हमेशा प्रेरित करें! क्योंकि आपकी कृपा के द्वारा ही हम अथवा समस्त संसारित प्राणी अपना–अपना मार्ग प्रशस्त करते हैं। इसलिए हे अग्नि देव! हम अपने निर्मल मन अथवा भावनाओं के द्वारा आपकी उत्तम ज्योति अपने मन एवम् हृदय में प्रज्जवलित करते हैं।

(4) शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत्।

तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः।।13।।[4]

(ऋग्वेद, मण्डल–8, सूक्त–60)

अर्थ– हे अग्निदेव! जिस प्रकार वृषभ अपने नुकीले सींग द्वारा अपने सिर को घुमाता है, उसी तरह हे अग्निदेव! आप अपनी लपटों को चारों तरफ घुमाते हैं, आप शक्ति के पुत्र हैं आप अपने नुकीले दांतों से सभी वस्तुओं का संहार करने वाले हैं।

(5) हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः। अग्निं समुद्रवाससम्।।5।।[5]

(ऋ0, मण्डल–8, सूक्त–102)

अर्थ– बादलों को गर्जाने, सागर के गर्भ में रहने वाले, वायु के सदृश शब्द करने वाले सर्व शक्तिशाली एवम् ज्ञाता अग्निदेव को हम पुकारते है। आप अपनी शक्ति के द्वारा हमारे जीवन का कल्याण करते हैं। आपकी शक्ति अपार शक्ति है।

(6) ईकेन्य वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम्।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदामिन्महेम।।3।।[6]

(ऋ०, मण्डल–7, सूक्त–2 पद–3)

अर्थ– हे पुरोहित! आप अग्निदेव को सदैव पूजते रहे, जो बलवान, स्तुति के योग्य, कुशल, आकाश व पृथ्वी के मध्य दूत (वाहक) का कार्य करता है।

(7) आग्ने वह हविरद्याय देवानिन्द्रज्येष्ठास इह मादयन्ताम्।
इमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।5।।[7]

(ऋग्वेद, मण्डल–7, सूक्त–11) पृ०–15 पद–5

अर्थ– हे अग्निदेव! आप यज्ञ रूपी अन्न ग्रहण करके देवताओं का आवाहन करें। आप इस याज्ञिक क्रिया को स्वर्ग तक ले जाकर

देवताओं को समर्पित करें। इस यज्ञ के प्रमुख देवता इन्द्र प्रसन्न हो। इस प्रकार सभी देवताओं का आवाहन करके हमारा कल्याण करें।

(8) त्वमग्ने शोचिषा शोशुचान आ रोदसी अपृणा जायमानः।
त्वं देवाँ अभिशस्तेरमुन्चो वैश्वानर जातवेदो महित्वा।।2।।[8]

(ऋग्वेद, मण्डल–7, सूक्त–13)

अर्थ– हे अग्निदेव! आप प्रकाशवान् होकर सम्पूर्ण पृथ्वी व आकाश को प्रकाश से सुशोभित कर देते हैं। आपकी प्रकाशवान् शक्ति अतुल्नीय है।

हे जातवेदा वैश्वानर अग्नि! आपने अपनी शक्तियों द्वारा देवताओं की शत्रुओं से रक्षा की है।

(9) अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्न ते विव्यङ्महिमान् रजांसि।
स्वेना हि वृत्र शवसा जघन्थ न शत्रुरन्तं विविदद्युधाते।।6।।[9]

(ऋग्वेद, म0–7, सूक्त–21)

अर्थ– हे इन्द्रदेव! आप अपनी बल शक्ति के द्वारा पृथ्वी के समस्त शत्रु–प्राणियों का कल्याण करते हैं। आपकी महिमा का समस्त लोक (चौदहों भुवन) को ज्ञान नहीं है। आप अपने बल से वृत्र नामक शत्रु का विनाश करते हैं, युद्ध के समय शत्रु आप से जीतता नहीं।

(10) यजु रथं गवेषणा हरिभ्यामुप ब्रह्माणि जुजुषाणमस्थुः।
वि बाधिष्ट स्य रोदसी महित्वेन्द्रो वृत्राष्यप्रती जघन्वान्।।3।।[10]

(ऋग्वेद, मण्डल–7, सूक्त–23)

अर्थ– गौ से तात्पर्य– किरणें व इन्द्रियाँ, के खेाजकर्ता देवता इन्द्र के रथ के हरे रंग के घोड़ों को सम्बोधित करते हैं। देवता इन्द्र अपनी महिमा के द्वारा आकाश व पृथ्वी पर व्याप्त होकर वृत्र को मारने वाले देवता कहलाते हैं।

(11) मर्ता अमर्त्यस्य ते भूरि नाम मनामहे। विप्रासो जातवेदसः।।5।।[11]

(ऋग्वेद, मण्डल–8, सूक्त–11)

अर्थ– हे अग्निदेव! आप पृथ्वी व आकाश के सभी पदार्थों को जानने वाले ज्ञानी है। आपके महान अविनाशी नाम का हम मस्तिष्क में चिन्तन करते हैं।

(12) ईके गिरा मनुर्हितं यं देवा दूतमरतिं न्येरिरे।
यजिष्ठ हव्यवाहनम्।।21।।[12] **(म०–8, सूक्त–19)**

अर्थ– हे अग्निदेव! यज्ञ में अर्पित हवि के वाहक, देवताओं के सन्देशक तथा सम्पत्ति के परिपूर्ण, आप मनुष्यों के समस्त दुखों को दूर करने वाले हैं, हम आपकी वन्दना करते हैं।

(13) त्रिमूर्धानं सप्तरश्मिं गृणीषेडनूनमग्निं पित्रोरुपस्थे।

निषत्तमस्य चरतो ध्रुवस्य विश्वा दिवो रोचनापाप्रिवांसम्।।[13]

(ऋ., मण्डल–1, सूक्त–146)

अर्थ– हे अग्निदेव! आप संसार के सभी माता–पिता के समान पृथ्वी और द्यौ लोक के बीच विराजमान होकर तीन मस्तिष्कों से युक्त–प्रातः मध्याहन, और सायं (ये अग्नि के शीष हैं। तथा सात ज्वालाओं से मुक्त–काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, उग्रा, और प्रदीप्ता (ये अग्नि की ज्वाला है) इस संसार के समस्त प्राणियों को प्रदान करके उनका कल्याण करते हैं। दिव्या लोक से प्रवाहित होने वाला दिव्य जड़ एवम् चेतन सृष्टि से समाहित हो। हम इस संसार का कल्याण करने वाले, नवीन चेतना से पूर्ण करने वाले अग्नि देव का स्मरण करते हैं।

(14) स जायमानः परमे व्योमन्वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः।

त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन्।।7।।[14]

(ऋग्वेद, म०–1, सूक्त–143)

अर्थ– हे ज्ञानस्वरूप अग्निदेव! आप अंतरिक्ष में स्थित सूर्य से निकले सोमरस को भाप द्वारा ग्रहण करके पृथ्वी पर बारिश करते हैं, आपका विद्युत रूप व बादल की गड़गड़ाहट सुनकर खेतों से अन्न प्राप्त करने वाले खुशी प्रकट करते हैं।

(15) स्वाध्योइ वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता।

पूर्वी शिशु न मातरा रिहाणे समग्रुवो न समनेष्वन्जन्।।5।।[15]

(ऋग्वेद–मण्डल–7, सूक्त–2)

अर्थ– देवत्व को प्राप्त करने वाले, रथ को प्राप्त करने वाले, श्रेष्ठ कार्य करने वाले मनुष्य यज्ञ का सहारा ले, क्योंकि यज्ञाग्नि को धृत से वैसे ही सींचें, जिस प्रकार नदियाँ आस–पास के क्षेत्रों को सिंचित करती है। यज्ञाग्नि को पुरोहित उस रूप में प्यार करे जिस रूप में गाय माता अपने बछड़े को प्यार करती है।

(16) पाहि नो अग्ने रक्षसो अजुष्टात् पाहि धूर्तेररुषो अघायोः।

त्व युजा पृतनोयूँरभि व्याम्।।13।।[16]

(ऋग्वेद, मण्डल–7, सूक्त–1)

अर्थः– हे अग्निदेव! आप हमारी बुरी शक्तियों से रक्षा करें। आक्रमण करने वाले शत्रुओं से आप बचायें, आपकी कृपा से हम उन पर विजय पाते हैं।

(17) अग्नि नरोदीधितिभिररण्योर्हस्तच्युती जनयन्त प्रशस्तम्।

दूरेदृशं गृहपतिमथर्युम्।।1।।[17]

(ऋग्वेद, मण्डल–7, सूक्त–1)

अर्थ– हे अग्निदेव! आप प्रशंसनीय, गतिपूर्ण, दूर से सदृश्य दिखने वाले आपको (गृहपति अग्नि) मनुष्य ने अपने हाथों और अंगुलियों की सहायता से प्राप्त किया है।

(18) प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्वयस्थात्।

आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति।।2।।[18]

(ऋग्वेद–मण्डल–7, सूक्त–3)

अर्थ– हिनहिनाते घोड़े घास को चरते हैं, उसी प्रकार दावानल (जंगल की आग) पेड़–पौधों को नष्ट करते हुए फैलती है। हे अग्निदेव! वायु के प्रभाव से काला धुआँ जहाँ–जहाँ जाता है, उसी मार्ग पर आप प्रशस्त होकर चलते हैं। आपके गगन का मार्ग काला धुआँ है। जो आकाश में फैलता है। इसी प्रकार समस्त लोक में आपका निवास है।

(19) वि यस्यते पृथित्यां पाजो अश्रेत्तृषु यदन्नासमवृक्त जम्भैः।

सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि।।3।।[19]

(ऋग्वेद–मण्डल–7, सूक्त–3)

अर्थ– हे अग्निदेव! आप जौ की तरह लकड़ियों का भक्षण करते हो, आप अपने ज्वाला युक्त दांतों से लकड़ी (अन्न रूपी) का भक्षण करते हैं जो आपका भोजन है।

हे अग्निदेव! इस प्रकार आपका तेज समस्त पृथ्वी पर तेजी के साथ फैलता है।

संदर्भ

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008, पृ०–52
2. वही, पृ०–94
3. वही, पृ०–223
4. वही, पृ०–133
5. वही, पृ०–158
6. वही, पृ०–4
7. वही, पृ०–15
8. वही, पृ०–26
9. वही, पृ०–29
10. वही, पृ०–31
11. वही, पृ०–35
12. वही, पृ०–52
13. वही, पृ०–225
14. वही, पृ०–222
15. वही, पृ०–5
16. वही, पृ०–2
17. वही, पृ०–1
18. वही, पृ०–6
19 वही, पृ०–6

वैदिक अग्नि मंत्र

1. **इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया।**

भद्रा हिं नः प्रमतिरस्य संसद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[1]

अर्थ– हे सर्वज्ञ अग्निदेव! आप हमारी सत्ता के विधान को जानते हो और अपने कार्यों के लिए स्वतः ही उपलब्ध रहतो हो। अपने विचार से हम आपके सत्य का आनन्द प्राप्त करते हैं। सत्य से तात्पर्य ऐसा रथ जिस पर आप (अग्नि देव) विराजमान रहते हैं। क्योंकि आप (अग्नि देव) हमारे साथ हमेशा निवास करके हमें कल्याणकारी बुद्धि और हमारी सम्पत्ति को बढ़ाते हैं। हे अग्निदेव! आपकी मित्रता से हमारे जीवन को कोई नष्ट व हमारा कोई नुकसान नहीं कर सकता है।

2. **विशां गोपा अस्य चरन्ति जन्तवो द्विपच्च यदुत चतुष्पदक्तुभिः।**

चित्रः प्रकेत उषसो महाँ अस्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[2]

अर्थ– हे अग्नि देव! समस्त संसार और उसके प्राणियों के आप संरक्षक होकर, संसार के पालक है। आप (अग्निदेव) द्विपद् और चतुष्पाद् दोनों प्रकार के प्राणियों और उनकी उर्जा और शारीरिक गति दोनों के साथ चलकर उनकी आन्तरिक शक्ति से प्रेरित होते हैं। इस प्रकार आप (अग्नि देव) हमारे

अन्दर की उर्जा को समृद्ध करके हमारे विचारों को उर्जावान बनाकर हमारे जीवन को समृद्धि प्रदान करे!

3. **पूर्वो देवा भवतु सुन्वतो रथोऽस्माकं शंसो अभ्यस्तु दूढयः।**
तदा जानीताते पुष्यता वचोऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[3]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप हमारे यज्ञ को सदा सुखी बनाने में अपना सहयोग प्रदान करके हमारे जीवन को सदा प्रसन्नता प्रदान करते हैं। क्योंकि हम (प्राणी) आपको प्रसन्न करने के लिए यज्ञ का आयोजन करते हैं इस यज्ञ के आयोजन से आप हमारे मस्तिष्क के अन्दर बुरे विचार व हमारी वाणी के अस्पष्ट शब्दों को नष्ट करके शुद्ध विचारो व शुद्ध वाणी का प्रवाह करते हुए हमें सत्य का मार्ग प्रशस्त करते है। हे अग्निदेव! आप हमारे हृदय के अन्दर असत्यता को दूर करके, हमारी वाणी दोष को भी दूर करें और वाणी उच्चारण को सही करके हमें सुखी बनायें।

4. **वधैर्दुः शसाँ अप दूढयो जहि दूरे वा ये अन्ति वा के चिदत्रिणः।**
अथा यज्ञाय गृणते सुंग कृध्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[4]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप वध करने वाले, आक्रमण करने वाली उन शक्तियों का विनाश करके जो हमारे विचारों को विचलित करती है जो हमारी शक्ति और ज्ञान का भक्षण करने वाली है उसको हमारे हृदय व मन से दूर करके

हमारे मार्ग से हटा देते हो। इस प्रकार हे अग्निदेव्! आप हमारे यज्ञ को एक सत्य मार्ग व इस पर चलने वाले मार्ग को सुखद व समृद्ध बना दो। हे अग्निदेव! हम आपकी याज्ञिक अग्नि द्वारा स्तुति करते हैं।

5. **त्वं हि विश्वतोमुख विश्वत: परिभूरसि।**

अप न: शोशुचदद्यम्।।[5]

अर्थ– हे अग्निदेव! आपके मुख चारो दिशाओं में फैले हैं। आप अपनी शक्ति के द्वारा हमें चारों दिशाओं से घेरे हुए हो, और हमारे चारो ओर जो पाप फैला है उन्हें जलाकर आप राख कर दो या हमसे दूर भगा दो।

6. **प्र यदभन्दिष्ठ एषा प्रास्माकसश्च सूरय:।**

अप न: शोशुचदधम्।।[6]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप पाप को जलाकर हमसे दूर कर दीजिए। क्योंकि आप का निवास हमारे हृदय में हो जिससे देवताओं में सबसे प्रिय देवता, अग्नि देवता का हमारे हृदय में निवास हो और आपको अपने मन के अन्दर समाहित करके अपने मन के विचारों को शुद्धि प्रदान करें। हे अग्निदेव! आप हमारे मन व हृदय के अशुद्ध विचारो को नष्ट करके उसमें शुद्धता का संचार करें।

7. तत्ते देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारूरध्वरे।

शर्मन्त्स्याम तव सप्रथस्तमेस्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[7]

अर्थ– हे अग्निदेव्! तुम देवताओं में सबसे श्रेष्ठ देवता हो, क्योंकि तुम अद्भुत प्रेमी और मित्र के रूप में विचरण करते हो। हे अग्निदेव! आप लोगों के घरों की धन दौलत व गृहस्वामी के रूप में लोगों को समृद्ध करते हो। देवता अग्नि तुम यज्ञ की ज्वलन्त तीव्र अग्नि के रूप में, यज्ञ में रमणीय हो, आपको प्राप्त करने के लिए किया गया प्रयास व तद्पश्चात मिली शान्ति ही आपकी विशालता व दूर घर माना जाता है।

8. तत्ते भद्रं यत्समिद्धः स्वे दमे सोमाहुतो जरसे मुस्थत्तमः।।

दधासि रत्नं द्रवणिं च दाशुषेस्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[8]

अर्थ– हे अग्निदेव! जब आप उच्च दिव्यता और पूर्ण ज्वाला के साथ लोगों के घरों में प्रज्जवलित होकर उन्हें सुख और आनन्द के विचारों से परिपूर्ण करते हो इसी प्रकार लोगों के विचारों द्वारा आप पूजित कहलाते हो। व्यक्ति को आप की कृपा व दया भाव से आनन्द प्राप्त होता है। हे अग्नि देव! आप अपनी मधुरता और रस को लोगो पर बरसाते हुए, उन्हें बदले में आप ऐश्वर्य और सारतत्व प्रदान करते हो।

9. स त्वमग्ने सौभगत्वस्य विद्वानस्माकमायुः प्र तिरहे देव।

(तन्नो मित्रो वरूणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः)।।[9]

अर्थ– हे अग्निदेव! परमानन्द के ज्ञाता होकर हमारी इस जगत में आयु को दीर्घायु में बदले वाले आप ही हैं! तथा हमारी इस जगत की सत्ता को पाने की इच्छा व प्रगति को प्रदान करने वाले आप ही हैं। हे अग्निदेव! आप इस सृष्टि को रचने वाले वास्तविक देवता है। हे अग्निदेव! आप महान देवता होकर इस संसार के पूजित देवता बन गये हैं आपकी सत्ता महान है।

10. यस्मै त्वं सुद्रविणो ददाशोस्नागास्त्वमदिते सर्वताता।

यं भद्रेण शवसा चोदयासि प्रजावता राधसा ते स्याम।।[10]

अर्थ– हे! अनन्त और अखण्ड सत्ता के स्वामी अग्निदेव आप यज्ञ के द्वारा अपने प्रिय लोगों के हृदय के बुरे विचार का अन्त करके उन्हें संसार में श्रेष्ठता प्रदान करते हो। हे अग्निदेव! आप अपने सुखमय प्रकाश तथा शक्तिशाली बल के द्वारा आनन्द फल–दायके धन–सम्पदा, प्रेरणा तथा अंतः शक्ति प्रदान करते हैं। आपकी कृपा से हमारा जीवन धन्य हो जाता है आप शक्तिशाली व महान देवता हैं।

11. स नः सिन्धुमिव नायाति वर्षा स्वस्तये।

अप नः शोशुचदघम्।।[11]

अर्थ– हे अग्निदेव! जिस तरह जहाज हमें समुद्र से पार करता है, उसी तरह से हे अग्निदेव! आप हमें जीवन रूपी भव सागर से पार कराकर आनन्द के मार्ग पर अग्रसर करें। आनन्द के मार्ग पर जो भी पाप उस मार्ग को रोके आप उस पाप को नष्ट कर दें और आनन्दमय मार्ग प्रदान करें। हे अग्निदेव! आप महान है आपकी सत्ता अनन्त है।

12. अध स्वनादुत बिभ्युः पतत्रिणो द्रप्सा यत्ते यवसादो व्यस्थिरन्।

सुंग तत्ते तावकेभ्यो रथेभ्योस्ग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[12]

अर्थ– हे अग्निदेव! आपके आकाश में आगमन से आकाश में उड़ने वाले सभी पक्षी भयंकर रूप से डर जाते हैं, मैदान में चरने वाले पशु तेज गति से दौड़ने लगते हैं। हे अग्निदेव! आप अपने रथो के द्वारा अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त करते हैं क्योंकि आपके मार्ग में आने वाले सभी जीव–जन्तुओं को आप हटाते हुए आप अपने लक्ष्य को प्राप्त होते हैं और इसी मार्ग पर चलकर प्राणी अपने लिए मार्ग का निर्माण कर सके। इस प्रकार आप सभी प्राणियों को एक नया जीवन प्रदान करने का नया मार्ग तैयार करते हैं।

13. यदुयुक्था अरूषा रोहिता रथे वातजूता वृषभस्यवे ते रवः।
आदिन्वसि वनिनो धूमकेतुनास्ग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[13]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप दिव्यता रूपी संकल्प से परिपूर्ण है। आपके लाल घोड़ों को तीव्र उज्जवल आवेग के द्वारा खींचा जाता है। खेत को जोतते समय वृषभ की गर्जना को आपके द्वारा ही पैदा किया जाता है। इस उत्पन्न शक्ति के द्वारा वृषभ पूरे खेतों को जोतते हुये चलता है। अग्निदेव आपके जीवन के मार्ग पर जो भी अवरोध पैदा करता है। उन सबको अपने आवेग के काले विकराल धुऐ से नष्ट करते हुए आप आगे बढ़ते हैं। हे अग्निदेव! आप विचारों के द्वारा तथा अपनी तीव्र दृष्टि के द्वारा इस समस्त जगत का कल्याण करने वाले कहलाते हैं।

14. शकेम त्वा समिधं साधया धियस्त्वे देवा हविरदन्याहुतम्।
त्वमादित्याँ आ वह तान् ह्याश्मस्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।[14]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप ही हमारे यज्ञ की अग्नि के रूप में, हमारे समक्ष उपस्थित होकर हमारे विचारों को पूर्ण बना देते हो। हे अग्निदेव! यज्ञ में हम जो भी अर्पित करते हैं वह आपके माध्यम से आकाश लोक के समस्त देवताओं के समक्ष पहुँचता है। क्योंकि हम जो कुछ भी अन्न अग्नि में डालते हैं वह आपके माध्यम से देवताओं के पास पहुँचता है और देवता ही

अन्न के रूप में ग्रहण करते हैं। इस प्रकार इस क्रिया के द्वारा मनुष्य अनन्त चेतना के देवताओं को अपने पास बुलाने का प्रयास आपके माध्यम से करता है। इसी माध्यम से ही मनुष्य लोको के समस्त देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त कर लेता है अत: स्पष्ट है कि हे अग्निदेव! आपकी महिमा लौकिक है आप अनन्न महिमा के स्वामी होकर पूजनीय कहलाते हैं।

15. भरामेध्मं कृणवामा हवींषि ते चितयन्त: पर्वणापर्वणा वयम्।

जीवातवे प्रतरं साधया धियोस्ग्ने सख्ये रिषामा वयं तव।।[15]

अर्थ– हे अग्निदेव! हम आपके लिए हवन सामिग्री इकट्ठी करके यज्ञ में हवि प्रदान करते हैं। इस हवि को ग्रहण करके आप हमारे विचारो को इस प्रकार बनाए कि हम अपनी सत्ता का विस्तार करके हमारे जीवन को एक नया निर्माण प्रदान करें। हे अग्निदेव! इस प्रकार आप हवि ग्रहण करके हमारे जीवन को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर कर देते हैं।

16. कथा दाशेमाग्नये कास्मै देवजुष्टोच्यते भामिने गी:।

यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा होता यजिष्ठ इत् कृणोति देवान्।।[16]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–77)

अर्थ– हे अग्निदेव! हम आपको हवि कैसे प्रदान करें? कौन सा देवताओं द्वारा स्वीकृति देदीप्यमान ज्वाला के अधिपति को शब्द बोला जाता है वो मैं

कहूँ। जो मर्त्यो लोक में अमर है, सत्यता से परिपूर्ण है, यज्ञ का पुरोहित होकर देवताओं को विचलित कर देने वाला महान देवता बन गया है।

17. यो अध्वरेषु शंतम ऋतावा होता तमू नमोभिरा कृणुध्वम्।
अग्निर्यद्वेर्मर्ताय देवान्त्स चा बोधाति मनसा यजाति।।[17]

(ऋग्वेद, मण्डल–1, सूक्त–77)

अर्थ– हे अग्निदेव! हम जो याज्ञिक अग्नि प्रज्जवलित करते हैं उसमें आप पुरोहित के रूप में शान्ति से उपस्थित होते हैं। हे अग्निदेव! आप सत्यता से परिपूर्ण होकर, हम जो भी आपके लिए अर्पित करते हैं उसे आप ग्रहण करते हैं। हे अग्निदेव आप मर्त्य लोक के देवो के अन्दर प्रविष्ट होकर हमें उनका बोध कराते हैं। इस प्रकार मनुष्य इन सब के द्वारा मन से आपका स्मरण करता है और हवि प्रदान करता है।

18. सह हि ऋतुः स मर्यः स साधुर्मित्रो न भूदद्भुतस्य रथीः।
तं मेधेषु प्रथमं देवयन्तीर्विश उप ब्रुवते दस्ममारीः।।[18]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–77)

अर्थ– हे अग्निदेव! आपकी महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि आप संकल्प पूर्ण हैं, बलशाली हैं, तथा हर कार्य को सिद्ध करने वाले, एक मित्र की तरह सत्ता के रथ पर सवार होकर हमारे समक्ष प्रस्तुत होने वाले देवता

हैं। आप हमारे यज्ञ में सबसे पहले उपस्थित होकर सर्वे याज्ञिक कार्य को पूर्ण करने वाले मनुष्य को उसके कार्य में सिद्धि प्रदान करते हैं। क्योंकि याज्ञिक क्रिया द्वारा मनुष्य अनेकों मंत्रों के द्वारा आपकी स्तुति करता है और आपसे कामना करता है कि आप समस्त लोकों के देवों को मेरी प्रार्थना उनके समक्ष उपस्थित होकर सुनाऐं। इस प्रकार हे अग्निदेव! हम आपकी स्तुति यज्ञ में हवि प्रदान करके करते हैं।

19. स नो नृणां नृतमो रिशादा अग्निर्गिरोस्वसा वेतु धीतिम्।
तना च ये मघवानः शविष्ठा वाजप्रसूता इषयन्त मन्म्।।[19]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–77)

अर्थ– हे अग्निदेव! आप इस संसार की समस्त शक्तियों में शक्तिशाली है, विनाशकों का विनाश करने वाले हैं आपकी उपस्थिति के बिना हमारे मन के विचार और वाणी के शब्दों को अभिव्यक्त नहीं कर सकते। हे अग्निदेव! आप ऐश्वर्य के अधिपति के रूप में सबसे अग्रणी व शक्तिशाली हैं। आप अपने ऐश्वर्य को फैलाने वाले प्रमुख देवता हैं, अपने विचार और अन्तः प्रेरणा के द्वारा इस समस्त संसार के प्राणियों का कल्याण करते हैं आप अपनी महानता और ऐश्वर्य के द्वारा ही इस संसार के अधिपति देवता के रूप में पूजित हैं।

20. एवाग्निर्गोमेभिर्ऋतावा विप्रेभिरस्तोष्ट जातवेदाः।

स एषु द्युम्नं पीपयत् स वाजं स पुष्टि याति जोषमा चिकित्वान्।।[20]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त-77)

अर्थ- हे अग्निदेव! आप सत्य से परिपूर्ण व प्रकाश के स्वामी द्वारा इस संसार में प्रकट होने वाले देवता हैं। आप समस्त लोगों को जानने वाले मन की दुर्बलता तथा हृदय के विचार, आप अपनी शक्तियों के द्वारा ज्ञात कर लेते हैं। हे अग्निदेव! जो प्राणी आपकी महिमा का गुणगान करता है उसे आप समृद्धि और बुद्धिमान तथा उसके जीवन को खुशहाली और वाणी के समस्वरता के रस से भर देते हो। हे अग्निदेव! आपकी महिमा अपार है। आप धन्य है प्रभु! आप महान है प्रभु! पुरोहित, दिव्य रूपी ज्वाला का आवाहन करते हुए कहता है कि हे अग्नि देव! मानव जीवन में दिव्य रूप से प्रज्जवलित होकर मनुष्य को सत्य तथा ईश्वर व देवताओं के निवास स्थान तक हमारे हृदय के विचारो को प्रस्तुत करें।

21. मनुष्वत्त्वा नि धीमहि मनुष्वत् समिधीमहि।

अग्ने मनुष्वदङ्गिरो देवान् देवयते यज।।[21]

श्री अरविन्द-वेद-रहस्य (उत्तरार्द्ध)

अर्थ- हे अग्निदेव! आप हमारे अन्दर मनुष्य रूप में समाहित होकर हमें मानवता का आवरण ओढ़ना सिखाते हो। क्योंकि देवतत्व मनुष्य के अन्दर अनादि

काल से पूर्ण एवं अजन्मा है, जो सत्य एवं आनन्द में प्रतिष्ठित होता हुआ मनुष्य रूप में पैदा हुआ है। हे ज्वाला रूपी अग्निदेव! हे दृष्टृ–रूपी शक्ति! आप इस संसार में आकर देवताओं को पाने की कामना करने वाले, आप मनुष्य में अग्निदेव देवताओं के प्रति यज्ञ का आयोजन करें।

22. त्वं हि मानुषे जनेस्ग्ने सुप्रीत इध्यसे।

स्त्रुचस्त्वा यन्त्यानुषक्सुजात सर्पिरासुते।।[22]

अर्थ– हे ज्वाला स्वरूप अग्निदेव! जब हम आपको यज्ञ में हवि प्रदान करते है, तो उस हवि से आप तृप्त होकर अपने भक्तों के हृदय में प्रज्जवलित होकर उस प्रज्जवलित ज्वाला को उन्नति प्रदान करते हैं इस प्रज्जवलित ज्वाला के द्वारा ही मनुष्य अपने हृदय व चित्त को एकाग्र करते हुये आपके स्मरण में लीन होता है। हे ज्वाला स्वरूप अग्निदेव! आप मनुष्य के जन्म लेने में, उसकी प्रवाहशीलता, ऐश्वर्य इत्यादि में उसके साथ रहते हैं। आपके (अग्निदेव) बिना इन सब रूपों को प्राप्त करना असम्भव है। हे अग्निदेव! आपकी महती कृपा मनुष्य पर हमेशा रहे।

23. त्वां विश्वे सयजोषसो देवासो दूतमत्रक।

सपर्यन्तस्त्वा कवे यज्ञेषु देवमीस्ते।।[23]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप प्रेम से परिपूर्ण व एक हृदय वाले कहलाते हैं क्योंकि आकाश लोक के सभी देवता आपको अपना दूत बनाना चाहते हैं। दूत से तात्पर्य है कि जब मनुष्य यज्ञ का आयोजन करता है तब आप साक्षात रूप से उपस्थित होकर उस हवि को आकाश लोक के देवताओं के समक्ष हवि प्रदान करने वाले के विचारों को प्रस्तुत करते हो। इस प्रकार मनुष्य अपने यज्ञ में देवता के रूप में आपकी स्तुति व हवि प्रदान करके सेवा करता है। आपकी (अग्नि देव) उपासना से मनुष्य का कल्याण होता है।

24. देवं वो देवयज्ययासग्निमीठीत मर्त्यः।

समद्धिः शुत्र दीदिह्युतस्य योनिमासदः ससस्य योनिमासदः।।[24]

अर्थ– मरणधर्मा को प्राप्त होने वाले मनुष्य, दिव्य शक्ति के द्वारा अग्निदेव के लिए यज्ञ का आयोजन कर। यज्ञ के आयोजन के द्वारा तू अग्निदेव की आराधना कर जिससे तेरे अन्दर देदीप्यमान अग्नि प्रज्जवलित होकर, तुझे सत्य के मार्गपर, आनन्द से सरावोर कर ईश्वर के घर भेज दें।

पुरोहित दिव्य ज्वाला का सामान्य गुणों में आवाहन करते हुए कहता है कि हे अग्निदेव! आप यज्ञकर्ता है, ज्योतिर्मय लोक के अन्तदर्शन से युक्त

प्रकाशमय ज्योति, का रूप धारण किए हुये है। हे अग्निदेव! आप आकाश लोक से देवताओं को पृथ्वी लोक तक लाने वाले आप ही एक देवता है। आप (अग्निदेव) यज्ञ में उपस्थित होकर भेटों का उपभोग, मनुष्य तथा देवताओं के मध्य दूत, और मनुष्य के हृदय में दिव्य क्रियाओं को बढ़ावा व जन्मों के ज्ञाता के रूप में प्रसिद्ध रहते हैं। इस प्रकार आप यज्ञ के द्वारा समस्त लोकों के देवों के अग्रणीय देवता के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं। इसी कारण आप आकाश लोक में अग्रणीय आवाहनीय व पूजनीय देव के रूप में मनुष्य के समक्ष प्रस्तुत रहते हैं।

25. अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया।

आ देवान वक्षि यक्षि च।।[25]

अर्थ– हे ज्वाला स्वरूप पावन अग्निदेव! आप संसार के समस्त प्राणियों को पवित्र करने वाले देवता है। हे अग्नि देव। आपकी प्रकाशमय पवित्र, आनन्द व उल्लास से परिपूर्ण जिहवा से आप संसार के समस्त देवताओं को हमारे समक्ष लाते हो। क्योंकि हम यज्ञ में आपका आवाहन करते हैं और आप तदपश्चात् आकाश लोक के देवताओं को हमारे सामने बुलाते हो और हमारे द्वारा जो भी भेट स्वरूप आपको दिया जाता है उसे आप देवताओं को भेट करते हैं।

26. तं त्वा घृतस्नवीमहे चित्रभानो स्वर्दृशम्।

देवाँ आ वीतये वह।।[26]

अर्थ– हे निर्मलताओं का भक्षण करने वाले, समृद्ध व विविध प्रकाश से परिपूर्ण है अग्निदेव। हम आपको सब देवताओं में अग्रणीय देवता मानते हैं। संसार के समस्त प्राणी चाहते हैं कि आप (अग्निदेव) सत्य से युक्त अन्तदर्शन से हमको सम्पन्न कराये और तीनो लोकों के देवताओं अभिव्यक्ति से इस संसार के प्राणियों को परिचित करायें। क्योंकि तीनों लोगों के देवताओं को मनुष्य या प्राणियों के समक्ष लाने की शक्ति आपके पास ही है।

27. वीतिहोत्रं त्वा कवे घुमन्तं समिधीमहि।

अग्ने बृहन्तमध्वरे।।[27]

अर्थ– हे दृष्टा! आप (अग्नि देव) प्रकाश और विशालता के युक्त है आपको जो भी मनुष्य हवि में भेट करता है उन भेटो को देवताओं के समक्ष ले जाते हो। हे अग्निदेव! यज्ञ की मात्रा में जो प्रज्जवलित ज्वाला है उस ज्वाला के द्वारा आप मनुष्य के मन और हृदय में चेतना उत्पन्न करते हैं।

28. अग्नि विश्वेभिरा गहि देवेभिर्हव्यदातये।

होतारं त्वा वृणीमहे।।[28]

अर्थ– हे संकल्प पूर्ण अग्निदेव! आप हमारे द्वारा प्रदान हवि को लेने के लिए यज्ञ में आकाश लोक के समस्त देवताओं के साथ आ गये हैं। हे अग्निदेव। आप आहुति के वाहक के पुरोहित के रूप में हमारे यज्ञ में समस्त प्राणी के समक्ष उपस्थित होते हैं और यज्ञ में प्राप्त आहुति को ग्रहण करते हैं।

29. यजमानाय सुन्वत आग्ने सुवीर्य वह।

देवैरा सत्सि बर्हिषि।।[29]

अर्थ– हे ज्वाला स्वरूप अग्निदेव! आनन्द व उल्लास के द्वारा अपने पुरोहित को प्रफुल्लित करने वाले, पूर्ण शक्तिशाली, आप (अग्निदेव) यज्ञ के समय पुरोहित के समक्ष सभी देवताओं के साथ आसन पर विराजमान है और पुरोहित के मन में आनन्द व उल्लास का संचार प्रवाहित करने वाले हैं।

30. समिधानः सहस्त्रजिदग्ने धर्माणि पुष्यसि।

देवानां दूत उक्थ्यः।।[30]

अर्थ– हे अग्निदेव! आप प्रदीप्तीमान होकर, मनुष्य के दिव्य नियमों को बढ़ाने वाले हैं इस दिव्यता के द्वारा मनुष्य को समस्त संसार का बोध होता है। हे

अग्निदेव! आप हजार गुणों से सम्पूर्ण होकर इस पृथ्वी लोक में विराजमान है आप देवताओं के दूत बनकर मनुष्य के सद्वचनों व आपके लिए की गयी स्तुति को देवताओं के समक्ष प्रस्तुत करते हो।

31. न्यग्निं जातवेदसं होत्रवाहं यविष्ठयम्।

दधाता देवमृत्विजम्।।[31]

अर्थ– पुरोहित मनुष्य से कहता है कि तुम अपने शरीर के अन्दर उस ज्वाला को प्रतिष्ठित करो जो जन्मों को जानने वाली है। हम उसे जो भी भेंट स्वरूप प्रदान करते हैं वह उसे वहन करने वाली शक्ति है। वह शक्ति जो तरूणतय से उत्पन्न होती है और सत्यता की ऋतुओं के द्वारा दिव्य यज्ञ को प्रज्जवलित करने वाली है। तुम अपने अन्दर ऐसी शक्ति का निर्माण करो।

32. प्र यज्ञ एत्वानुषगद्या देव्यचस्तमः।

स्तृणी बर्हिरासदे।।[32]

अर्थ– हे अग्निदेव! आज आपके यज्ञ के ज्ञान के द्वारा व्यक्ति निरन्तर प्रगति कर रहा है। आपके यज्ञ की अग्नि के द्वारा मनुष्य संसार के समस्त व्याप्त देवताओं का ज्ञान प्राप्त करता है। हे अग्निदेव! मनुष्य याज्ञिक क्रिया के समय अपने हृदय के अर्न्तभाव से आपका आसन लगा है जिससे आप

आकर उस आसन पर विराजमान हो सके। जिससे याज्ञिक क्रिया सम्पन्न करने वाला मनुष्य व इस संसार के समस्त प्राणियों का कल्याण हो।

33. एदं मरूतो अश्विना मित्रः सीदन्तु वरूणः।

देवासः सर्वया विशा।।[33]

अर्थ– पुरोहित याज्ञिक अग्नि का वर्णन करते हुए कहता है कि मनुष्य तू यज्ञ का आयोजन कर ताकि अग्निदेव के रूप में जीवन की समस्त शक्तियाँ यहाँ आकर अपना आसन ग्रहण करें। अग्नि देव शक्ति के रूप में अश्व पर सवार होकर, जो प्रेम सागर के अधिपति देवता हैं, यज्ञ के कार्य में उपस्थित हो। हे अग्निदेव! आप विशालता का अधीश्वर एवम् समस्त देवताओं तथा अपनी प्रजा के साथ यहाँ यज्ञ में आकर आसन ग्रहण करे और अपने आशीर्वाद से समस्त प्राणी का कल्याण करें।

34. वया इदग्ने अग्नयस्ते अन्ये त्वे विश्वे अमृता मादयन्ते।

वैश्वानर नाभिरासि क्षितीनां स्थूणेव जनाँ उपमिद् ययन्थ।।[34]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–59)

अर्थ– हे अग्निदेव! ज्वालाएँ आपकी शाखाएँ है जो लपटो के रूप में आकाश की ओर बढ़ती है, ये ज्वालाएँ आकाश लोक के समस्त देवताओं को हर्ष एवम् आनन्द का मार्ग प्रशस्त करती है। हे विश्वव्यापी अग्नि देव! आप पृथ्वी लोक के समस्त प्राणियों के नाभि चक्र में रहते हुए उत्पन्न मनुष्य को अपने

वश में करके उसे जीवन का आश्रय प्रदान करते हो। हे अग्निदेव! आपके कृपा के बिना मनुष्य इस संसार में जन्म नहीं ले सकता है।

35. मूर्धा दिवो नाभिरग्निः पृथिव्या अथाभवदरती रोदस्योः।

तं त्वा देवासोस्जनयन्त देवं वैश्वानर ज्योतिरिदार्याय।।[35]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–59)

अर्थ– हे दिव्य स्वरूप अग्नि देव! आप आकाश लोक का मस्तिष्क और पृथिवी लोक की नाभिर के रूप में इस संसार में व्याप्त हो। आप इस संसार की एक शक्तिशाली शक्ति के रूप में पृथ्वी और आकाश दोनों लोक में गतिक रूप में कार्य करते हुए दोनों लोगों के निवासियों की नाभि में रहते हो। हे वैश्वानर अग्नि! इस संसार के समस्त देवताओं ने तुझे जन्म दिया है ताकि तू (अग्नि देव) उन सब देवताओं का ज्योति के रूप में प्रज्जवलित होकर उनका कल्याण करें।

36. आ सूर्य न रश्मयो ध्रवासो वैश्वानरे दधिरेस्ना वसूनि।

या पर्वतेष्वोषधीष्वटसु या मानुषेष्वसि तस्य राजा।।[36]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–59)

अर्थ– हे अग्निदेव! जिस प्रकार इस संसार में व्याप्त सूर्य देव में किरणे दृढ़ता से स्थिर है उसी तरह आप इस जगत में भी प्रदीप्त हो रहे हैं। आपका रूप ज्वाला के समान है जो अग्नि के रूप में इस संसार में स्थापित है। हे

अग्निदेव! आप सब ऐश्वर्य के अधिपति हैं, जो पृथ्वी पर औषधि के रूप में, पर्वत पर जल के रूप में और उस सम्पदा के रूप में व्याप्त है जो इस जगत में प्राणी रूप में है।

37. बृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः।

स्ववर्ते सत्यशुष्माय पूर्वी वैश्वानराय नृतमाय यहवी।।[37]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–59)

अर्थ– हे अग्नि देव! आपकी कृपा से आकाश लोक व पृथ्वी लोक इस प्रकार उन्नति करते हैं जैसे इस संसार में सद्कर्मो के द्वारा पुत्र। यह कार्य सब आपकी कृपा के द्वारा होता है। हे अग्निदेव! आप हमारे यज्ञ के पुरोहित के रूप में विराजमान हैं। आप हमारे विवेकशील, सम्पन्नता से परिपूर्ण व्यक्ति की वाणी के द्वारा सद्वचन का विकास करते हो। हे अग्निदेव! जब मनुष्य यज्ञ के आयोजन में शक्तिशाली वैश्वानर अग्नि के लिए सद्मंत्रों की वाचन करता है तो उसे शक्ति आपसे ही प्राप्त होती है। वह अपनी वाणी के द्वारा सूर्य लोक से प्रकाश की धाराओं के साथ, बलशाली आवेश जो सत्य का बल कहलाता है, उस वाणी से आपका गुणगान करता है।

38. दिवश्चिते बृहतो जातवेदो वैश्वानार प्र रिरिचे महित्वम्।

राजा कृष्टीनामसि मानुषीणां युधा देवेभ्यो वरिवश्चकर्य।।[39]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–59)

अर्थ– हे वैश्वानर अग्निदेव! आप विश्वव्यापी देव है जो इस संसार में अपनी महिमा के द्वारा समस्त प्रजा में ज्ञान का संचार करके सब वस्तुओं के ज्ञाता के रूप में विख्यात है। आपकी महिमा इस आकाश लोक को भी पार कर जाती है। हे अग्निदेव! आप इस संसार में प्रत्येक श्रमिक के देवता हो क्योंकि आप उस मनुष्य के शरीर में अग्नि का संचार करते हो। युद्ध के समय देवताओं का कल्याण करते हो जिससे उन्हें युद्ध में विजय प्राप्त हो।

39. वैश्वानरो महिम्ना विश्वकृष्टिर्भरद्वाजेषु यजतो विभावा।

शातवनेये शतिनीभिराग्निः पुरूणीये जरते सूनृतावान्।।[39]

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त–59)

अर्थ– हे विश्वव्यापी अग्निदेव! आपकी कृपा के द्वारा संसार का प्रत्येक प्राणी ज्ञान व बल के साथ जो भी वो कार्य करता है। हे अग्निदेव! आप अपनी महती कृपा के द्वारा उसे शक्तिशाली शक्ति प्रदान करते हो। हे अग्निदेव! आप यज्ञ के देदीप्यमान स्वामी हो। आपकी वाणी सत्य की वाणी है, जिससे सत्य का संचार होता है।

संदर्भ

1. श्री अरविन्दो, वेद-रहस्य (उत्तरार्द्ध), पांडिचेरी, पृष्ठ-246
2. वही, पृ०-247
3. वही, पृ०-248
4. वही, पृ०-249
5. वही, पृ०-252
6. वही, पृ०-250
7. वही, पृ०-250
8. वही, पृ०-251
9. वही, पृ०-251
10. वही, पृ०-253
11. वही, पृ०-251
12. वही, पृ०-251
13. वही, पृ०-253
14. वही, पृ०-249
15. वही, पृ०-249
16. आचार्य, श्रीराम शर्मा, ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008, पृ०-247
17. वही, पृ०-108
18. वही, पृ०-108
19. वही, पृ०-108

20. वही, पृ०–108

21. पूर्वोक्त, पृ०–104

22. वही, पृ०–104

23. वही, पृ०–105

24. वही, पृ०–105

25. वही, पृ०–115

26. वही, पृ०–115

27. वही, पृ०–115

28. वही, पृ०–116

29. वही, पृ०–116

30. वही, पृ०–116

31. वही, पृ०–117

32. वही, पृष्ठ–117

33. वही, पृ०–114

34. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, पृ०–85

35. वही, पृ०–85

36. वही, पृ०–85

37. वही, पृ०–85

38. वही, पृ०–85

39. वही, पृ०–86

अग्निष्टोम / ज्योतिष्टोम

अग्निष्टोम के द्वारा अग्नि की स्तुति की जाती है और अन्तिम स्तुति भी अग्नि को सम्बोधित की जाती है। अग्निष्टोम सोमयज्ञ के अन्तर्गत किया जाता है। सोमयज्ञ को सात भागों में विभाजित किया जाता है जो इस प्रकार है–

अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र, एवम् अप्तोर्याम। (गौतम 8/21) एवं लाटयायन श्रो0 (5/4/34)।[1] अग्निष्टोम को सोमयज्ञ का ही स्वच्छ रूप माना जाता है जो ऐतिहासिक होते हुए एकाह अर्थात् एक दिन चलने वाला यज्ञ कहलाता है और जो पूर्णिमा के दिन होता है। सर्वप्रथम अग्न्याधान करने के उपरान्त पशु यज्ञ का विधान सुनिश्चित किया गया है।

इस अग्निष्टोम के द्वारा यजमान (गृहपति) अपने गृह में अग्नि को अरणियों में प्रज्ज्वलित कर लेता है और गृहपति अपनी पत्नी के साथ मण्डप में प्रवेश करके वहाँ घर्षण से उत्पन्न अग्नि को रखता है। गृहपति को गार्हपव्याग्नि तथा अपनी पत्नी को दक्षिणाग्नि सम्बोधित करता है। इस काम को पुरोहित करता है। इस प्रकार चार आहुतियां प्रदान की जाती हैं जो निम्न देवताओं को प्रदान की जाती हैं जो पथ्या,

---

1. काणे, पी०वी०–धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम भाग, लखनऊ, पृ०–508

स्वस्ति, अग्नि, सोम और सविता कहलाते हैं इनकी दिशाऐ पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, एवं उत्तर कहलाती है। इस अग्निष्टोम में अग्नि की उत्पत्ति घर्षण द्वारा की जाती है। इस प्रकार यजमान मन्त्र के साथ आहवनीयाग्नि व उसकी पत्नी गार्हपत्याग्नि में आहुति प्रदान करती है। इस प्रकार अग्निष्टोम क्रिया में शास्त्रों की अनुकरण (वाचन) को छः या सात भागों में विभाजित किया गया है, जो इस प्रकार है–

(1) मौन रूप से जप, (2) आहाव एवं प्रतिगर, (3) तूष्णीशंस, (4) निविद् या पुरोरूक्, (5) सूक्त, (6) उक्थं वाचि शब्दों का जाप (आश्व0 5/10/22–24) एवं (7) याज्या (आश्व0 5/10/21)

अग्निष्टोम में 12 स्तोत्र एवं 12 शस्त्र होते हैं। शस्त्र एवं स्तोत्र से तात्पर्य है स्तुति एवं प्रशंसा। स्तुति स्वर के साथ गायी जाती है, शस्त्र मात्र होता है– (शबर, जैमिनी 7/2/17)

शस्त्र का वाचन स्तोत्र के बाद होता है। अग्निष्टोम में आज्य–शस्त्र प्रथम शस्त्र है और अग्नि मारुत अन्तिम है।[2]

---

2. काणे, पी०वी०–धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम भाग, लखनऊ, पृ०–508

देवता ऋभु गण

वैदिक साहित्य में ऐसे देवता जिसकी उत्पत्ति अग्नि के द्वारा ही हुई ऐसे देवता ऋभुगण कहलाये। दिव्य गुण विकसित नहीं कर सके ऋभुगण को ऋभुक्षन, वाज और विभ्वन नामों से भी जाना जाता है। पर प्रसिद्ध नाम ऋभु है। (तद्वो वाजा ऋभवः सुप्रवाचनं देवेषु विभ्वो अभवन्महित्वनम् – (ऋ० 4.36.3)[1]

ऋग्वेद में भगवान ऋभु की महिमा का वर्णन अनेकों सूक्तों के द्वारा किया गया है क्योंकि भगवान ऋभु अग्नि के द्वारा ही प्राप्त किये गये हैं इनकी महिमा का वर्णन ऋग्वेद में निम्नवत है:–

''ऋभुगण पर्व वायु समान वेगवान सद्कर्म और मानव की प्रार्थना के वाहक देव लोक में प्रस्तुत करने वाले हैं। यह सोम रस के वाहक हैं ऋभुगण यजमान द्वारा प्रदान की हवि को ग्रहण करते हैं और उससे प्रेरित होकर देवताओं को उसकी प्रार्थना पहुँचाते हैं। ऋभुगण अमर हैं, अमरत्व को पाते हैं तथा श्वेत पक्षी की तरह आकाश में विचरण करते हैं वे ज्ञान और सम्पन्नता से परिपूर्ण है प्राणियों को भोजन, धन और बल प्रदान कर उनका कल्याण करते हैं। ऋभुगण युद्ध में मनुष्य की रक्षा करते हैं तथा इन्द्र और अग्नि के दुलारे हैं।''[2]

(1) **''प्र ऋभुभ्यों दूतमिव वाचमिष्य उपस्तिरे श्वैतरी धेनुमीस्टे।**

ये वातजूतास्तरणिभिरेवैः परि द्यां सद्यो अपसो बभूवुः।।''[3]

(ऋग्वेद, म0डल0–4, सूक्त–33)

अर्थ– हे भगवान ऋभुगण! आप वायु के सामान वेग वाले, सद्कर्म करने वाले, अपने चंचल वेगशील घोड़ों के द्वारा आकाश लोक में शीघ्र समाहित होकर हमारे सन्देशवाहक बनकर हमारी प्रार्थना को देवताओं के समक्ष प्रस्तुत करते हो। हे ऋभु! भगवान यजमान अपनी याज्ञिक क्रिया के द्वारा सोमरस को प्राप्त करने के लिए आपसे याचना करता है।

(2) **''अयं वो यज्ञ ऋभवोडकारि यमा मनुष्वत्प्रदिवो दधिध्वे।**

प्र वोस्च्छा, जुजुषाणासो अस्थुरभूत विश्वे अग्रियोत वाजाः''।।[4]

(ऋ० मण्डल–4, सूक्त–34)

अर्थ– हे ऋभुगण! यजमान जो यज्ञ का संचालन करता है वह सब आपके लिए ही सम्पन्न होता है। आप इस यज्ञ की हवि को एक ओजस्वी पुरूष के रूप में ग्रहण करते हो। इस यज्ञ में जो भी हवि प्रदान की जाती है वो हवि आपको प्रेरणा प्रदान करती है कि आप यजमान की प्रार्थना को आकाश लोक के देवताओं के समक्ष प्रस्तुत करें और यजमान को शक्ति प्रदान हो। हे बलशाली ऋभुगण! आप महान हैं, आप संसार में सर्वश्रेष्ठ हो।

(3) **''ये देवासो अभवता सुकृत्या श्येना इवेदधि दिवि निषदे।**

ते रत्नं धात शवसो नपातः सौधन्वना अभवतामृतासः''।[5]

(ऋ०, 4/36/8)

अर्थः– हे ऋभुगण! आप अच्छे कर्मो के द्वारा देवता कहलाते हो क्योंकि आपने अमरत्व को प्राप्त किया है व अमरत्व को प्रदान करने वाले सुधन्वा के पुत्र आप श्येन–पक्षी के समान आकाश में विचरण करके आप सभी प्रकार के ऐश्वर्य व धन प्रदान करने वाले हो, जिसे पाकर मनुष्य श्रेष्ठ कहलाए हैं।

(4) **''यूयमस्मभ्य धिषणाभ्यस्परि विद्वांसो विश्वा नर्याणि भोजना।**

द्युमन्तं वाजं वृषशुष्ममुत्तममा नो रमिमृभवस्तक्षता वयः।।[6]

(ऋ०, 4/37/4)

अर्थः– हे ऋभुगण! आप ज्ञान से परिपूर्ण है, हमारी कल्पना व आशा से कहीं अधिक सम्पन्नता रखने वाले हैं। मनुष्य को जिस वस्तु की अभिलाषा होती है आप उसे वो वस्तु प्रदान करते हो। आप मनुष्य को अन्धकार से दूर करके दीप्तिमान, ऐश्वर्यवान बनाते हैं आप संसार के समस्त प्राणियों को भोजन, धनवान व बलशाली बनाकर उनका कल्याण करते हैं। हे ऋभुग आपकी महिमा अपार है।

(5) **''पीवोअश्वाः शुचद्रथा हि भूतायः शिप्रा वाजिनः सुनिष्काः।**

इन्द्रस्य सूनो शवसो नपातोस्नु वज्रघत्यग्रियं मदाय।''[7]

(ऋ०, मण्डल–4, सूक्त–34)

अर्थः– हे! ऋभुगण आप बलशाली अश्वो, तेज़ी से पूर्ण रथ, लौह–कवचो को धारण करने वाले देवता है। आप मनुष्य को अन्नवान, धनवान व रक्षा प्रदान करने वाले हैं। हे! ऋभुगण आप इन्द्र के पुत्र के रूप में बल व अग्नि से उत्पन्न किये गये हो। हे! ऋभुगण यजमान आपको याज्ञिक क्रिया के समय हवि प्रदान करके आपको प्रसन्न करते हैं।

(6) **''ऋभुमृतभुक्षणो रयिं वाजे वाजिन्तमं युजम्। इन्द्रस्वन्तं हवामहे सदासातममश्विनम्।''** [8]

(ऋ०, मण्डल–4, सूक्त–37)

अर्थः– हे! देवता ऋभुगण हम सभी प्राणी आपकी संवर्धनशील ऐश्वर्य का आवाहन करते हैं। आप शक्तिशाली हैं, और अपनी शक्ति के द्वारा युद्ध में मनुष्य की रक्षा का कार्य करते हैं। संसार के सभी प्राणी आपका आवाह्न करते हुऐ कहते हैं कि आप इन्द्र के प्रिय, अग्नि के दुलारे, शक्तिशाली अश्वों वाले, हम सभी आपका गुणगान करते हैं आपकी महिमा अपार है।

संदर्भ

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008, पृ०–55
2. श्री अरविन्दो–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध) पांडिचेरी, 2003, पृ०–29
3. पूर्वोक्त, पृ०–55
4. वही पृ०–57
5. वही पृ०–60
6. वही पृ०–61
7. वही पृ०–62
8. वही पृ०–62
9. श्री अरविन्दो–वेद रहस्य (उत्तरार्द्ध) पांडिचेरी, 2003 पृ०–360
10. रेऊ, विश्वेश्वर नाथ–ऋग्वेद पर एक ऐतिहासिक दृष्टि, दिल्ली पृ०–

अग्नि कुल

वेदों में अग्नि के उपासक या अग्नि के अनुष्ठानों से जुड़े ऋषियों के सम्बन्ध में वी0जी0 रघुरकर द्वारा विशेष अध्ययन किया गया। उनके अनुसार आंगिरस अग्नि की उत्पत्ति और अग्नि सम्प्रदाय के प्रारम्भ से सम्बन्धित प्राचीनतम् ऋषि है। उन्होंने अंगिरस कुल की स्थापना की थी। बाल गंगाधर तिलक के अनुसार आंगिरस और अथर्वन दोनों ही सम्पूर्ण आर्य जाति के पुरोहित रहे होंगे। अथर्ववेद में अथर्वन, आंगिरस और भृगु तीनों ही अग्नि पुरोहित बताये गये हैं। बौद्ध साहित्य के *विनयपिटक* में आंगिरस को *अथर्ववेद* का रचयिता कहा गया है। *ऋग्वेद* में अथर्वन को अग्नि प्रज्जवलित करने वाला और यज्ञ अनुष्ठान का संस्थापक दर्शाया गया है। (RV. I, 85.5, VI 15.17, X 21.5, 92.10)[1]

भृगु कुल

भृगु एक कुल है जिसके पूर्वज भृगु ऋषि, ऋग्वेद काल से उल्लेखित है और यह उल्लेख अग्नि के सम्मान में लिखी ऋचाओ में मिलता है। भृगु अग्नि की उत्पत्ति कर सकते थे। विद्वानों का मत है कि मातरिश्वन नामक मनुष्य ने जल और वनस्पति में अग्नि के छिपे होने की खोज की थी। जो उसने भृगु को बता दी थी। भृगु ने लकड़ी के अधिमंथन द्वारा अग्नि को उत्पन्न किया और उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त की।

---

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008 पृ०–116, पृ०–24, पृ०–33,पृ०–170

ऋग्वेद के 9वें मण्डल के 65 ऋचा में तथा 10वें मण्डल की 19 ऋचा में भृगु को ऋषि बताया गया है। ऋग्वेद में इनके 21 उल्लेख है। *महाभारत* में भार्गवो की वंशावली दी गयी है। जिसमें देवगणों के उपरान्त भृगु और उनके वंशों का उल्लेख मिलता है। *महाभारत* के अनुशासन–पर्व में भृगु की उत्पत्ति यज्ञ–कुण्ड से बतायी गयी है। यज्ञ अग्नि की लपट से भृगु उसके जलते अंगारों से आंगिरस तथा बुझी राख से कवि की उत्पत्ति हुई है।

इतिहासकार पद्मनभैया द्वारा प्रतिपादित किया गया है कि दक्षिण भारत में द्रविड़ समुद्र मार्ग से पहुँचे और भृगु वंश उन्हीं का वंश था। किन्तु विचार को अधिकांश विद्वान ग्रहण नहीं करते भृगु वंश में भृगु के अतिरिक्त च्यवन, जमदाग्नि, प्रयोग, स्यॅमरस्मी, सोमआहुति, नीमा, कवि, ऊषाण, वेन, पृथु, तन्व, इटा, और राम वंश हुये थे।[1]

आंगिरस

वेदो में बहुल्लेखित ऋषि आंगिरस (ऋ०, 1.31.17, ऋ०, I. 45.3 I. 139.9) और *अर्थवेद* (IV.29.3)। वेदो में उल्लेखित आंगिरस कभी आर्य का पर्याय नाम भी है। आंगिरस के सम्बन्ध में विदित है कि उन्होंने वन के वृक्षों के पीछे

---

1. Rahurkar, V.G.-The Vedic Priests of the Fire- Cult, Aligarh, 1982, Page (1-25)

अग्नि को छिपा देखा और मंथन करके उसे प्राप्त किया। अत: अग्नि को भी आंगिरस कहा गया है। आंगिरस ऋषि पंज्र कुल में जन्मे थे। और सायण के अनुसार सप्त ऋषियों में श्रेष्ठ ऋषि थे। बाल गंगाधर तिलक के अनुसार आंगिरस यूनानी ऐगीलॉस अर्थात् संदेशवाहक और फ़ारसी अंगड़ अर्थात् घुड़सवार संदेशवाहक से जुड़ता प्रतीत होता है। वेदों में आंगिरस को आंगिरस कुल के साथ 90 स्तुतियाँ जुड़ी हैं। आंगिरस को देव-पुत्र भी कहा गया है। उन्हें सोम चढ़ाया जाता है और देवताओं की भाँति आवाहन किया जाता है। वे ब्राह्मण पुरोहित थे। आंगिरस यम से भी जुड़ते हैं। *ऋग्वेद*-10वें मण्डल 14.3 में कहा गया है कि यम आंगिरस के संग प्रसन्न रहते हैं। सोम, सावृत्र, मरुत, त्वसत्रि, जैसे ऋग्वैदिक देवता आंगिरस से सम्बन्धित थे। आंगिरस का ज़िक्र संहिताओं में तथा ब्राह्मण साहित्य में भरपूर मिलता है।[1]

अवेस्ता में अंगर शब्द अंग्र के समान है। यास्न-44.12[2] में दुष्ट और दुष्पुरूष से है। तारपुरवाला के अनुसार असत्य मार्ग पर चलने वाले अंग्र है। अवेस्ता के कुछ अंगों में अंग्रमैनियु यानि दुष्कर्म करने वाले से जुड़ता है। अंग्र को *दैएवाओमा* से जोड़कर धोखेबाज़ से तुलना की गयी है। विली मौर्या द्वारा जिस प्रकार वेदो का अथर्वन, *अवेस्ता* के अथर्वन के समतुल्य है। करिन्दकर के

---

1. Rahurkar, V.G.-The Vedic Priests of the Fire- Cult, Aligarh, 1982, Page (26-55)
2. Mills, L.H - The Zend Avesta, Secred Books of the East, Delhi, 1981 Page-88

अनुसार ईरान के अत्रि से आंगिरस वैमनस्य रहते थे। *ऋग्वेद* 6.6.51.14 में अत्रियों को *मिश्र* कहा गया है। किन्तु रघुरकर के अनुसार यह टिप्पणी ग़लत है। आंगिरस दैव उपासकों के सम्मानित थे। अत: ज़रथुस्त्र के धर्म में उन्हें दुष्टों की कोटि में रखते थे।

अथर्वन का उल्लेख *ऋग्वेद* में 14 बार हुआ है। जिसका सामान्य रुप से अभिप्राय: प्राचीन पुरोहित से हैं। अथर्वन ने अग्नि को पुष्कर से उत्पन्न किया था। अथर्वन ने सर्वप्रथम यज्ञ-परम्परा को स्थापित किया था। ऐसा कहा गया है *ऋग्वेद*, 10वे मण्डल-21.5, 92.10, I.83.5 में।[1]

अथर्वन

अथर्वन (अथर्व) वे पहला पुरोहित है जो स्वर्ग से अग्नि को उतार लाता है। यज्ञ अनुष्ठान स्थापित करता है तथा सोम और स्तुतियों की प्रस्तुति करता है। *अथर्ववेद* में इसका उल्लेख 23 बार आया है। उसे एक पित्र माना है जो आंगिरस के साथ रहता है। जो देवताओं और स्वर्ग राशियों का साथी होता है। *ऋग्वेद* में कहा गया कि ब्रह्मा द्वारा बनाये मनुष्य को अथर्वन ने और अधिक उत्कृष्ठ किया। इसने मनुष्य के हृदय और बुद्धि को जोड़ा और पवमान को मनुष्य के मस्तिष्क से हटा दिया। इसी से मनुष्य शीर्ष अथर्वन का ही शीर्ष है। अथर्वन और आंगिरस औषधि के दाता थे। *अवेस्ता* में आथर्वन अग्नि पुजारी है।[2]

---

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा, ऋग्वेद–संहिता, मथुरा–2008 पृ0–33, पृ०–33,पृ०–170, पृ०–116
2. Rahurkar, V.G.-The Vedic Priests of the Fire- Cult, Aligarh, 1982, Page (56-62)

पौराणिक काल में अग्नि की महत्ता में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ। इस काल में अग्नि का एक ब्राहमण के रूप में उल्लेख प्राप्त होता है। जड़ तथा चेतन रूप से मिलकर अग्नि का स्वरूप निश्चित होता है। अग्नि विषयक व्रत एवं कर्मकाण्ड की पूजा–विधि एवं उनके अनुशीलन से प्राप्त होने वाले फल से धार्मिक जीवन पर प्रकाश पड़ता है। *ऋग्वेद* एवं *अथर्ववेद* आदि में अग्नि विषयक अनेक मंत्रों का विवरण मिलता हैं अग्निष्टोम जैसे यज्ञों, एकादशी तथा अन्य अवसरों पर दीपदान की महत्ता का वर्णन मिलता है।

ऐतरेयब्राहमण में वर्णिन आता है कि प्रजापति के चिन्तन से अग्नि, अन्तरिक्ष से वायु, आकाश से सूर्य उत्पन्न हुए। भृगु, अङ्गिरस जैसे कुछ ऐतिहासिक एवं पौराणिक नाम भी प्राप्त होते हैं। यज्ञ सम्पन्न करना प्रमुख कार्य होने के फलस्वरूप वेदों मे अग्नि की ख्याति पृथ्वी के एक पुरोहित के रूप में हुई है।

वाजसनेयि संहिता में अग्नि के यज्ञात्मक रूप का उल्लेख मिलता है। ब्राह्मण ग्रन्थों में केवल अग्नि को ही अमर्त्य बताया गया है।

महाभारत के आदि पर्व में अग्नि की प्रार्थना पर अर्जुन द्वारा खाण्डव वन घेर लेने पर वन भस्म हो जाता है। *मत्स्य पुराण* का ईशानकल्प वृतान्त प्रसंङ्ग अग्नि द्वारा वशिष्ठ ऋषि के लिए कहा गया। अतएव *आग्नेय पुराण* कहलाता है। *मत्स्य पुराण* में अग्निवंश एवं अग्नियों के भेद का विशद वर्णन है। *वामन पुराण* में

सारस्वत स्रोत के प्रसंग में राक्षस वृत्तान्त तथा राक्षसगृहीत मुनि द्वारा अग्नि की प्रार्थना एवं सारस्वत स्रोत मिलता है अग्नि से भृगु, अङ्गिरा, अत्रि मरीचि, पुलह, वशिष्ठ इत्यादि ऋषियों के उत्पन्न होने का विवरण प्राप्त होता है वेदों और महाकाव्यों में अग्नि की मानवाकृति न होकर मात्र एक आलंकारिक कल्पना मिली है। *मत्स्यपुराण* एवं *अग्निपुराण* में अग्नि का महत्वपूर्ण वर्णन मिलता है। अग्नि का प्रारम्भिक स्वरूप पांचाल सिक्कों पर प्राप्त होता हैं मथुरा के संग्रहालय से कुषाणकालीन अग्नि प्रतिमा प्राप्त हुई है जो मथुरा कला शैली की बुद्ध प्रतिमा के समान प्रतीत होती है। मथुरा के कङ्काली टीले से भी गुप्तकालीन अग्नि का चित्र प्राप्त होता है। लखनऊ का राजकीय संग्रहालय अग्नि की खड़ी–मुद्रा को दर्शाता है। इलाहाबाद जिले में लाक्षागृह से गुप्तकालीन दो हाथों वाली अग्नि की प्रतिमा तथा दूसरी मध्ययुगीन प्रतिमा जो मथुरा के नाराड़ा कुण्डा से प्राप्त हुई है, जो कलात्मक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। लाक्षागृह के अग्नि चित्र में लपटों को उनके सिर के चारो ओर दिखाया गया हैं। बिहार के शाहाबाद से प्राप्त पीली बलुई मिट्टी की अग्नि प्रतिमा में देवताओं को ललितासन रूप में चित्रित किया गया है। पहाड़पुर से प्राप्त अग्नि के चित्र में पृष्ठभूमि में आग की लपटें दर्शायी गयी है। विष्णुपाड़ा मन्दिर की बाहरी दीवार पर पत्थर पर अंकित अग्निचित्र पाल कालीन है। भुवनेश्वर के राजा–रानी मन्दिर में भी अग्नि का चित्रण प्राप्त होता है।

खजुराहो के पार्श्वनाथ मन्दिर एवं कन्दारिया महादेव मन्दिर में भी अग्नि प्रतिमा का उल्लेख मिलता है। दक्षिण–भारत में अग्नि प्रतिमा का अंकन श्रावणकोर के कान्दियार मन्दिर और चिदम्बरम् से मिलता है। उत्तर भारतीय अग्नि प्रतिमा प्रायः एक सिर वाली दर्शायी गयी है। जबकि दक्षिण भारत में वे दो सिरों वाले हैं। अग्नि प्रतिमा के माध्यम से उत्तर भारतीय कलाशैली एवं दक्षिण भारतीय कलाशैली में मिलती है। अग्नि प्रतिमा के निर्माण का आधार वेदो, महाकाव्यों एवं पुराणों में वर्णित उसका रूप था। जैन एवं बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के अनन्तर शुंग काल में ब्राह्मण धर्म के पुनरुद्धार के साथ ही पुराणों में वर्णित देवताओं की मूर्ति पूजा अस्तित्व में आयी। त्रिदेव के रूप में ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव का महत्व स्थापित हुआ। इसी समय अग्नि प्रतिमाओं का भी निर्माण प्रारम्भ हुआ। महाभारत में अग्नि को वायु पुत्र, सात जिह्वाओं, सात मुखों वाला लालग्रीवा, तथा चमकीले केश से युक्त बताया गया है। पुराणों में अग्नि का रूप और अधिक स्पष्ट हो गया हैं। *विष्णु धर्मोत्तर* के अनुसार वायुदेव के सारथी युक्त चार तोतों से खींचे जाने वाले धूम्र रथ पर सवार चार भुजाओ वाले अग्नि देव को चार दाँतों, तीन आँखों से मुक्त दाढ़ी के साथ और उनकी पत्नी स्वाहा का बायीं ओर होने का उल्लेख मिलता है। अग्नि के हाथों में ज्वालापुंज, त्रिभुज एवं अक्षमाला का उल्लेख किया गया है। *अग्निपुराण* के अनुसार अग्निदेव के दाये हाथ में अक्षमाला एवं बाये हाथ में कमण्डल उनकी लम्बी दाढ़ी एवं ज्वाला प्रभामण्डल का प्रतिमा निर्माण में होने का उल्लेख मिलता

है। *अग्निपुराण* एवं *मत्स्य पुराण* दोनों में अग्नि देवता के वाहन के रूप में मेष का उल्लेख मिलता है।

आगम ग्रन्थों में अग्नि की विशेषताओं में चार भुजा, त्रिनेत्र, एवं लाल जटाओं का उल्लेख किया गया हैं। साथ में यह भी कहा गया है कि हाथ वरद एवं अभय मुद्रा में हो। पार्श्व भुजाओं में स्त्रुक एवं शक्ति का अंकन हो। परवर्ती शिल्प ग्रन्थों यथा अपराजितपृच्छा, रूप-मण्डन एवं शिल्प रत्न में भी अग्नि प्रतिमा के निर्माण के विधान का विवरण मिलता है। रूप मण्डल में अग्नि देव की शक्ति-कमण्डल लिये मेष पर आरुढ़ ज्वालापुंज से घिरा हुआ बनाने का निर्देश है। *अपराजितपृच्छा* में भी ऐसा ही विवरण प्राप्त होता है। शिल्प रत्न में अग्नि देव का रक्त वस्त्र, यज्ञोपवीत, लम्बी दाड़ी युक्त मेष पर आरुढ़ और साथ में अग्नि के दाये हाथ में अक्षमाला एवं बाये हाथ में कमण्डल बनाने का निर्देश दिया गया है। उनका शीर्ष भाग सप्तज्वाला युक्त होना चाहिए। बायी ओर कुमकुम के लेप से युक्त देवी स्वाहा की उपस्थिति का भी उल्लेख मिलता है। अग्नि का सर्वप्रथम अंकन पांञ्चाल मुद्राओं पर देखने को मिलता है। अग्नि मित्र की मुद्राओं में एक जगती पर बने स्तम्भ गवाक्ष में द्विभुजी अग्नि को पाँच ज्वालाओं सहित दिखाया गया है। अग्नि की प्राचीनतम प्रतिमा मथुरा संग्रहालय में प्रदर्शित है। कुषाण कालीन यह प्रतिमा द्विभुजी स्थानक उन्नतोदर है, इस पर यक्ष मूर्तियों का प्रभाव है। गुप्तकाल

की अग्नि प्रतिमायें लखनऊ संङ्ग्रहालय, पटना संङ्ग्रहालय में प्रदर्शित है। ये सभी द्विभुजी प्रतिमायें दाढ़ीविहीन हैं। इन पर वाहन मेष का भी अंकन नहीं मिलता है।

दशपुर अञ्चल में अग्नि की कोई गुप्तकालीन अथवा उससे पूर्व की अग्नि प्रतिमा प्राप्त नहीं हुई है। उत्तर गुप्तकालीन गौरी प्रतिमा में अग्नि का प्रतिनिधित्व परिकर पर दोनों ओर बने अग्नि कुण्डों के रूप में मिलता है। गुप्तोत्तरकाल से परमारकाल तक की महत्वपूर्ण अग्नि प्रतिमायें मन्दसौर एवं भानपुर संङ्ग्रहालय में प्रदर्शित है। इन प्रतिमाओं में 4 प्रतिमायें अग्निदेव के सामान स्वरुप की तथा एक प्रतिमा दिक्पाल के रूप में अङ्कित है। ये प्रतिमायें वैदिक देवता अग्नि की पूजा के अस्तित्व में रहे होने का साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं। इनसे विदित होता है कि दशपुर अञ्चल में अग्नि का सातत्य था। इन प्रतिमाओं के निर्माण में वैदिक विवरण, पौराणिक विवरण, महाकाव्यों का विवरण एवं शिल्पशास्त्रीय निर्देशों का अनुकरण किया गया मिलता है। यहाँ इन प्रतिमाओं का विवरण उपयोगी होगा–

यशोधर्मन् पुरातत्त्व संङ्ग्रहालय, मन्दसौर में सङ्ग्रहीत महत्त्वपूर्ण अग्नि प्रतिमा शैलीगत आधार पर आठवीं शती ई० की है, इसमें अग्नि की द्विभुजी स्थानक दिखाया गया है। सिर पर ज्वाला का त्रिशिखा का सुन्दर अङ्कन है। अग्नि की दायीं भुजा में शक्ति एवं बायीं भुजा में कमण्डल है। अग्नि को दाड़ी एवं मूँछ युक्त नहीं दिखाया गया है। वस्त्राभरण में लम्बे कुण्डल, गले में एकावली, धोती

एवं कटिबन्ध का सुन्दर प्रदर्शन है। धोती की सलवटों का पारदर्शी आलेखन उच्च कोटि का है। यह महत्त्वपूर्ण है कि इसमें प्रतिमा में जलपात्र या कमण्डल का आलेखन बायें हाथ की हथेली पर किया गया है, इसी प्रकार जलपात्र युक्त द्विभुजी अग्नि प्रतिमा पटना सङ्ग्रहालय में भी प्रदर्शित है। यद्यपि गुप्तकाल की यह प्रतिमा ललितासीन है। इस प्रकार का जलपात्र लिये अग्नि प्रतिमा का का अङ्कन प्रायः दुर्लभ है। उक्त प्रतिमा में भी अग्नि की दाड़ी एवं वाहन मेष का अभाव हैं इससे स्पष्ट होता है कि गुप्तकालीन कला का ही दशपुर के शिल्पी ने अनुकरण कर उक्त प्रतिमा का निर्माण किया और यही कारण है कि इसमें वाहन एक दाड़ी का अङ्कन नहीं किया गया। प्रतिमा का आकार 22×9×5 से0मी0 तथा माध्यम स्लेटी बेसाल प्रस्तर है।

यशोधर्मन संग्रहालय मन्दसौर के रिजर्व सङ्ग्रह की एक अन्य अग्नि प्रतिमा विशेष उल्लेखनीय है, इसमें लघु आकृति वाले अग्नि देव को दीर्घ मेष की पीठ पर बैठा दिखाया गया है। मेष की घुमावदार सींगें, ग्रीवा के अलंकृत केश तथा गले की कण्ठीमाला आकर्षक हैं। मेष का मुख व पैर भग्न हैं। मेष की पीठ पर आरूढ़ लघुकाय अग्नि द्विभुजी हैं, यह प्रतिमा शैलीगत आधार पर 10वीं शती ई० की प्रतीत होती हैं प्रतिमा का आकार 28×34×12 से०मी० है।

अग्नि की एक उत्कृष्ट अष्टभुजी प्रतिमा भानपुर सङ्ग्रहालय में भी प्रदर्शित है। स्तम्भ गवाक्ष में त्रिभंग में शिल्पाङ्कित यह अग्नि प्रतिमा शैलीगत आधार पर लगभग 11वीं शती ई० की लगती है। अग्नि की भुजाओं में दक्षिण अधः क्रम से वरद मुद्रा, अक्षमाला, बाण, ज्वालापुञ्ज, वेद, धनुष, खप्पर एवं कमण्डल दिखाया गया है। यद्यपि द्वितीय भुजा की अक्षमाला अस्पष्ट है। सिर पर सुन्दर जटामुकुट है जिसके पीछे अलंकृत ज्वाला मण्डित प्रभामण्डल है। लम्बी दाड़ी मूँछ युक्त अग्नि–प्रतिमा को चक्र, कुण्डल, ग्रैवेयक, यज्ञोपवीत, केयूर, कटिमेखला, कङ्कण, पादवलय, लम्बी वनमाला आदि से सुसज्जित दिखाया गया है। प्रभामण्डल के दोनों ओर उड़ते हुए विद्याधर अङ्कित हैं। नीचे दोनों ओर एक–एक द्विभुजी अनुचर हैं। बायीं ओर के अनुचर के पीछे उठती हुई ज्वाला दिखाई गयी है। दायीं ओर गवाक्ष में सुन्दर केश–विन्यास युक्त जटाभार, कुण्डल, ग्रैवेयक, केयूर, कटिबन्ध एवं अधोवस्त्रों में सुसज्जित स्थानक द्विभुजी स्वाहा का प्रदर्शन है।

उक्त प्रतिमा के शिल्पाङ्कन के शिल्पी ने अपनी कल्पना शक्ति का प्रयोग करते हुये अभिनव प्रयोग किये हैं। यद्यपि वेदों, पुराणों, महाकाव्यों, शिल्पग्रन्थों में अग्नि के सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न विवरण दिया गया, किन्तु धनुष बाण का उल्लेख कहीं भी नहीं है। शिल्प ग्रंथों में भी अग्नि की दो अथवा अधिक से अधिक चार भुजाओं का उल्लेख है, किन्तु दशपुर अञ्चल के शिल्पी ने अष्टभुजी प्रतिमा का निर्माण कर शिल्पशास्त्रीय बन्धनों से मुक्त स्वच्छन्द निर्मित का उदाहरण प्रस्तुत

किया है। प्रतिमा में वाहन मेष का आलेखन अवश्य नहीं है। निश्चय ही इस प्रतिमा को परमार कला की महत्वपूर्ण कृति कहा जा सकता है। यह 49×45×29 सेमी० की है बलुआ प्रस्तर पर निर्मित यह प्रतिमा प्रतिमाशास्त्र की दृष्टि से द्रष्टव्य है।

अग्नि की एक अन्य स्वतन्त्र चतुर्भुजी प्रतिमा मन्दसौर सङ्ग्रहालय के मुक्ताकाश प्रदर्शन में प्रदर्शित है। इस चतुर्भुजी अग्निदेव को स्तम्भ गवाक्ष में एक ऊँची चौकी पर समभगङ्ग स्थानक मुद्रा में दिखाया गया है। अग्नि के नीचे के दोनों हाथ अंशतः भग्न है, इनमें क्रमशः वरद–अक्ष एवं कमण्डल की सम्भावना है। नीचे दोनों ओर ज्वाला युक्त एक–एक कुण्ड है। ऊपरी दायें हाथ में ज्वाला पुंज तथा बायें में स्त्रुवा हो सकता है, यद्यपि भग्न होने के कारण स्पष्ट नहीं है। जटा मुकुट, दाढ़ी मूँछ युक्त अग्निदेव, चक्र, कुण्डल, माला, यज्ञोपवीत, कटिसूत्र, वनमाला, अधोवस्त्र आदि से सुसज्जित हैं। प्रतिमा में वाहन मेष का अभाव है। 40×54×35 सेमी० की यह प्रतिमा शैलीगत प्रतिमा आधार पर कदाचित् 13वीं शती ई० की हो सकती है। इसका आकार मन्दसौर नगर से संग्रहीत काले बलुआ प्रस्तर पर निर्मित अग्नि के दिक्पाल स्वरूप का न होकर यज्ञ के होतृ का है और सम्भवतः यही कारण है इसमें यज्ञकुण्ड ज्वालापुंज स्त्रुवा आदि का भी अङ्कन किया गया है।

रामपुरा से प्राप्त एवं सम्प्रति मन्दसौर सङ्ग्रालय में प्रदर्शित दिक्पाल अग्नि की द्विमूर्तिका में एक ओर इन्द्र एवं दूसरी ओर द्विभुजी अग्नि का अङ्कन है। अग्नि का दायाँ हाथ अभय मुद्रा में है तथा उनके भग्न बाये हाथ में कमण्डल है। प्रतिमा का मुकुट, एवं पैर भी भग्न हैं। सिर के दोनों ओर स्कन्धों से सात ज्वालायें, दायें स्कन्ध से चार एवं बायें से तीन, निकलती दिखाई गई हैं। दाढ़ी–मूँछ युक्त प्रतिमा को चक्र कुण्डल, एकावली, यज्ञोपवीत, कटिसूत्र, अधोवस्त्र, वनमाला से सज्जित दिखाया गया है। नीचे सम्भवत: वाहन मेष का अङ्कन रहा जो अब भग्न हो चुका है। शैलीगज आधार पर यही प्रतिमा 12वीं शती ई० की हो सकती है।

दशपुर अञ्चल की 8वीं शती ई० से 13वीं शती ई० के मध्य उपलब्ध पाँच प्रतिमायें, यह सिद्ध करती हैं कि भले ही दिक्पाल रूप में सही वैदिक देवता अग्नि की पूजा का इस क्षेत्र में कम से कम 13वीं शती तक सातत्य विद्यमान रहा। निश्चय ही इनमें अष्टभुजी अग्नि का शिल्पांकन विशेष महत्त्व का है। अपने उपलब्ध रूप में यह प्रतिमायें अग्नि के विराट स्वरूप का निदर्शक कही जा सकती हैं।

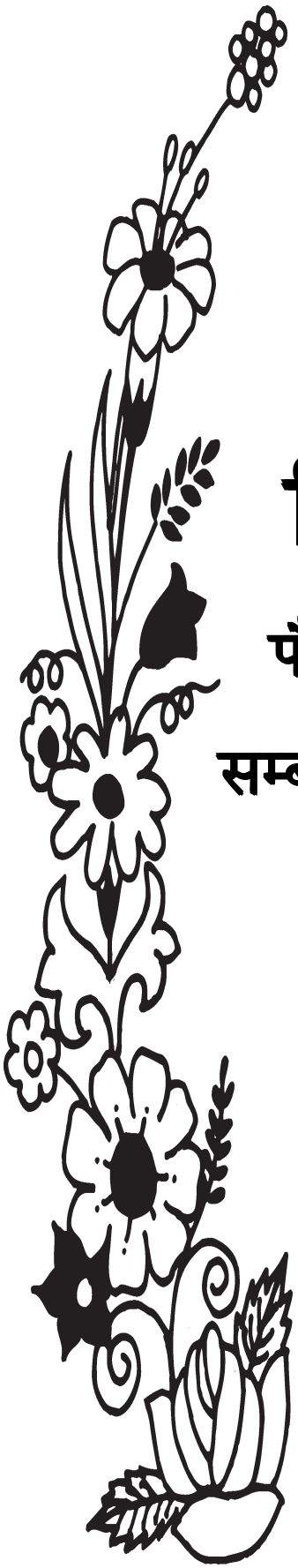

द्वितीय अध्याय

पौराणिक–काल में अग्नि सम्बन्धी अनुष्ठान, मिथक व अग्नि–कुलीन राजवंश

देवता रूप में अग्नि

देवता रूप में अग्नि : निराकार व साकार

वैदिक साहित्य में ऋषि अग्नि को *ऋतुर्हदि* का उच्चारण करके वर्णन करते हैं। ऋतु का शाब्दिक अर्थ कर्म या यज्ञा, प्रज्ञा, बल या निश्चय, और विशेषतया प्रज्ञा वह है जो बल के कर्म का निर्धारण करता है, जो अग्नि देव द्वारा मनुष्य को याज्ञिक क्रिया करने के पश्चात् प्रदान किया जाता है। ऋतु का दूसरा अर्थ ''संकल्प'' भी होता है क्योंकि अग्नि द्रष्टृसंकल्प, कविऋतु, आदि शब्दों से विख्यात है। अग्नि को ''हृदय का संकल्प'' (*ऋतुर्हदि*) विशेष रूप से कहा जाता हैं वेदो में सतत रूप से प्रयोग होने वाला शब्द ''श्रव:'' है इसका अर्थ- अन्त: प्रेरणा या अन्त: प्रेरित माना जाता है। अग्नि की ज्वाला एक संकल्प की ज्वाला है। अग्नि की सप्त जिह्वा-शक्ति, ईश्वर की एक ज्ञान प्रेरित शक्ति है। जो हमें जागृत करके बलशाली संकल्प के द्वारा मर्त्य लोक से अमर्त्य लोक को पहुँचाती है।[1] अग्नि की ज्वाला एक पवित्र पुरोहित तथा दिव्य कार्यकर्ता है जो पृथ्वी और आकाश के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने वाली एक पुरोहित का कार्य करती है। हम यज्ञ में जो कुछ हवि प्रदान करते हैं उसे यह ज्वाला उच्चतर शक्तियों के साथ आकाश तक ले जाकर, बदले में हमें शक्ति, प्रकाश और आनन्द का मार्ग हमारे

अन्दर प्रविष्ट करती है। इस प्रकार अग्नि एक ध्रुव है, जो ज्ञान से आविष्ट शक्ति का ध्रुव है जो अपनी धारा को पृथ्वी तथा आकाश की तरफ भेजती है।[2] ऋषि अग्नि के विषय में कहता है–सत्य का चमकीला संरक्षक जो आपके घर में देदीप्यमान हो रहा है (गोपामृतस्य दीदिपिम्, वर्धमान स्वे दमे) (*ऋग्वेद* 1–1–8)[3]

''सत्य'' अर्थात् ''ऋतम्'' से तात्पर्य है कि एक आध्यात्मिक या आन्तर सत्य, हमारे अपने आपका सत्य, वस्तुओं का सत्य, जगत् एवं देवताओं का सत्य, हम जो कुछ है और वस्तुओं जो कुछ हैं उन सब के पीछे का सत्य, इन सबका बोध हमें अग्नि के आत्मिक बोध से प्राप्त होता है सत्य के मन की चेतना का विकास होता है। इन सब कार्य को दधिक्रावा जो दिव्य अग्नि की दिव्य युद्धाश्व एक शक्ति है और मनुष्य के अन्दर चेतना जाग्रत करती है।[4] इसी प्रकार याज्ञिक अग्नि के रूप में यज्ञ का वर्णन करते हुए ऋषि कहता है कि यज्ञ एक आंतरिक कर्म का तथा देवताओं और मनुष्यों के बीच एक आंतरिक लेन–देन का बाह्य प्रतीक है जो मनुष्य को वह सब कुछ प्रदान करता है वह जो यज्ञ में अर्पित करता है जो उसके पास उपलब्ध है तथा बदले में देवता उसे शक्ति के घोड़ों को, प्रकाश की गौओं (किरण) को, अनुचर होने के लिए बल वीरों को उत्पन्न करते हैं। अग्नि, वह ऋत्विक है जिसक कर्म यज्ञ का कर्म है। अग्नि ''सत्य'' है, सच्ची है क्योंकि वह हमें फल प्रदान करती है। अग्नि की अत्यन्त चित्र–विचित्र कीर्ति है। अग्नि होता

के रूप में यज्ञ में, कर्मशील है जो विविध सम्पत्ति से परिपूर्ण होकर अपने यज्ञकर्ता को सच्चा फल प्रदान करते हुए संसार के समस्त देवताओं के साथ यज्ञ स्थल में उपस्थित है।

सायण के शब्दों में:

''हे अग्ने, त्वं दाशुषे हविर्दत्तबते यजमानय् तत्प्रीत्पर्थ, यद भद्र वित्त यह–प्रजा–पशुरूपं कल्याणं करिष्यसि तद् भदं तवेत् तवैव सुखहेतुरिति शेषः। हे अंग्रिोऽग्ने! एतच्च सत्यं, न त्वत्र विसंवादोऽस्ति, यजमानस्य वित्तादिसम्पत्तौ सत्यामुत्तरऋत्वनुष्ठानेन अग्नेरेव सुखं भवति।''

अर्थात् ''हे अग्निदेव! विविध सम्पत्तियों के रूप आप, जो हवि देने वाला आप से प्राप्त करता है वह आपके द्वारा ही प्रदान किया जाता है आप उसे धन दौलत देकर भला करते हो। हे अग्निदेव! आप जो भलाई स्वरूप प्रदान करते हो वह सत्य से पूर्ण है। हे अंगिर! आप सत्य से परिपूर्ण हैं यज्ञकर्ता के लिए निश्चित रूप से बदले में उसका भला ही करते हैं। आप यज्ञकर्ता को सुख सम्पत्ति प्रदान करते हो।

''हे अग्नि देव! तुम्हारी यज्ञ रूपी अग्नि जो यज्ञ की रक्षक, सदा प्रकाशमान, तथा घरों में वृद्धि प्रदान करने वाली अग्नि जिसका घर यज्ञशाला है। मनुष्य को उसके प्रत्येक कार्य में वृद्धि प्रदान करती है।''[5]

वेद में ऋषि स्वयं विचार प्रकट करते हुए कहता है कि अग्नि के लिए ''नमः धारण करने'' की बात कही गयी है क्योंकि 'नमस्' को आध्यात्मिक तौर पर आन्तरिक नमस्कार कहा जाता है जो देवताओं के प्रति हृदय से नत हो जाने या आत्म-समर्पण के अर्थ में प्रयुक्त होता है-

इसी क्रम में अग्नि जो यज्ञ होता के रूप में पूजित है, जिसका संकल्प दृष्टा है, जो सत्य होकर, हमें अन्तःप्रेरणा प्रदान करती है। वह याज्ञिक क्रिया के समय समस्त लोक के देवताओं के साथ उपस्थित होती है। हे अग्निदेव! आप जो हवि प्रदान करने वाली की भलाई करते हो वह सत्य से परिपूर्ण है। हे अग्निदेव! हम दिन-प्रतिदिन, रात्रि और प्रकाश में अपने विचारों के द्वारा हम अपनी आत्मा का समर्पण आपके लिए करते हैं। हे अग्निदेव! तू यज्ञों में देदीप्यमान होते हुए सत्य की ज्योति का तू संरक्षक है। आपकी स्थापना अपने घरों में करके हम अपने विचारों व कार्यों में वृद्धि करते हैं। क्योंकि सत्य की ज्योति के द्वारा आप मनुष्य के हृदय के विचारों को बढ़ाकर उसे एक नवीन जीवन प्रदान करते हो। हे अग्निदेव! आप महान देवता हैं। हे अग्निदेव! आप वेद में हमेशा शक्ति और प्रकाश के विविध रूपों में प्राप्त होते हो। आपकी शक्ति दिव्यता से पूर्ण है जो लोको का निर्माण करती है। आपकी शक्ति सर्वदा पूर्ण ज्ञान के साथ क्रिया करती है। क्योंकि हे जातवेदस् अग्निदेव! आप समस्त संसार के प्राणियों के जन्मों के ज्ञाता के रूप में अग्रणीय है

आपकी संज्ञा ''विश्वानि वयुनानि विद्वान'' के रूप में की जाती है क्योंकि आप संसार की समस्त घटनाओं को दिव्य बुद्धि से ज्ञात कर लेते हैं। हे अग्निदेव! आप को देवो ने मर्त्यों में अमृत रूप से स्थापित किया है। आप मनुष्य में दिव्य शक्ति के रूप में, कार्य को सिद्ध करने वाली शक्तियों के रूप में, समाहित होकर मनुष्य का प्रत्येक कार्य करने वाले हैं। कार्य से तात्पर्य मनुष्य द्वारा आपके प्रति एक यज्ञ का आयोजन करके आपको हवि प्रदान करना। इसी प्रकार अग्नि का अर्थ ''दिव्य संकल्प'' होता है क्योंकि दिव्य संकल्प पूर्ण रूप से दिव्य बुद्धि है। दिव्य बुद्धि वह शक्ति है जिससे द्वारा सत्य चेतना क्रिया व सत्य प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है। इसी क्रम में वेद में अग्नि के लिए ''कविऋतु'' शब्द का प्रयोग किया गया है इसका शाब्दिक अर्थ ''क्रियाशील संकल्प'' या प्रभावशील दृष्टा (विचारशील और निरीक्षण शील) की शक्ति अर्थात् वह ज्ञान जो सत्य-चेतना से उत्पन्न होने वाला ज्ञान।[6]

इसी प्रकार अग्नि सत्य है इसकी सत्ता सच से परिपूर्ण है। इसलिए अग्नि के पास ''सत्यम'' व ''ऋतम्'' दोनों गुण पाये जाते हैं।

''ऋतम'' से तात्पर्य है अत्यधिक प्रकाशपूर्ण तथा अन्तः प्रेरणओं से पूर्ण। जिसमें कि किसी कार्य को सिद्ध करने की क्षमता होती है इसीलिए अग्नि होता, यज्ञ का पुरोहित, हवि प्रदान करने वाली कही जाती है और याज्ञिक अग्नि की

महत्ता यज्ञ में एकीभूत ज्योति तथा शक्ति का आन्तरिक बल से की जाती है। अग्निदेव का यज्ञ के द्वारा मर्त्य और अमर्त्य में परस्पर संसर्ग और एक दूसरे के साथ आदान-प्रदान होता है इसलिए अग्नि देव को ''दूत'' तथा संसर्ग और आदान-प्रदान का माध्यम कहा जाता है।

यजा नो मित्रा वरूणा यजा देवाँ ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षिस्वं दमम्।[7]

(*ऋग्वेद*, 1/75/5)

अर्थ:-हे अग्निदेव! हम यज्ञ आपके लिए करते हैं, देवता वरूण के लिए करते हैं, इस संसार के समस्त देवताओं के लिए, सत्य के लिए, और स्वयं अपने गृह की अग्नि के लिए यज्ञ करते हैं ताकि हमारा जीवन सुखमय हो जाये। अग्निदेव का अपना घर ''अग्नि-गृह'' है। चाहे दिन हे या रात अग्नि-गृह में अग्नि प्रदीप्त होती रहती है। यही अग्नि मनुष्य के अन्दर सत्य का ''ऋतम'' की रक्षक है। और अंधकार की शक्तियों से उसकी रक्षा करती है। हे अग्नि देवता! आप वेदों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण देवता हो, सबसे अधिक व्यापक हो। आप (अग्निदेव) भौतिक जगत् में सामान्य भक्षक और उपभोक्ता के साथ-साथ एक पवित्रकर्ता भी हो वो अग्नि जो तैयार करती है पूर्णतया लाती है, वह अग्नि जो सात्म्य करती है, शक्ति की उष्णता है और रूप बनाती है। अग्नि द्वारा वस्तुओं में रस को, तात्त्विक सत्ता के सार को और उसके आनन्द को बढ़ाती है। अग्नि हमारी हृदय में स्थित

संकल्प है, इसके द्वारा प्राणों को पवित्र करती है। अग्नि मन में स्थित संकल्प भी है जो अभीप्सा द्वारा मन को निर्मल करती है। क्योंकि यह बुद्धि के अन्दर प्रविष्ट होकर विचारों को फलदायक शक्ति की तरफ ले जाकर शक्तियों को प्रकाशवान बनाती है। हे अग्निदेव! आपका सर्वत्र जन्म है। आप सभी वस्तुओं में निवास करते हो। आपका दिव्य जन्मस्थान ''सत्य'' का घर है। अग्निदेव अपने स्वयं के घर (यज्ञशाला) में पहुँचकर सत्यरूपी, ऋत रूपी, वृहत रूपी शक्तिशाली हो जाते हैं। मनुष्य की अभीप्सा, आर्य की आत्मा, विराट यज्ञ की मूर्धा को अग्निदेव आकाश लोक में ले जाते हैं। अग्नि वह देव हैं जो मर्त्य के अन्दर सचेतन करता है। अन्त:प्रेरित शब्द को हृदय में जाग्रत करता है। अग्नि का देदीप्यमान ज्वाला का देवता, द्विविध स्वरूप में अपने को प्रकाशित करने वाला कहा जाता है। इसी क्रम में ''भाम'' का शाब्दिक अर्थ ''ज्ञान का प्रकाश'' और ''कर्म की ज्वाला'' है इसलिए अग्नि को एक ज्योति तथा एक ज्वाला तथा एक शक्ति के रूप में जाना जाता है अग्नि विशेष रूप से मर्त्यों में अमर है, अग्नि वह दिव्य संकल्प है जो सदा सब वस्तुओं में उपलब्ध रहकर सदा विनाश तथा उसका निर्माण कर सकती हैं। अग्नि मृत्यु और परिवर्तन के बीच स्थिर रहती है। अग्नि शाश्वत् तौर पर अविच्छेद रूप में सत्यता से पूर्ण है। यही अग्नि बीच के अनुसार वृक्ष को उगाती है और प्रत्येक कर्म के अनुसार उसका उचित फल प्रदान करती है। अग्नि की ''दिव्य संकल्प'' ही मनुष्य को शासन का पथ प्रदर्शन करना सिखाती है। उसे अज्ञानता

से ज्ञानता की ओर अग्रसर करती है। अग्नि दिव्य संकल्प वह है जो हमारे कर्मो को मानवीय कर्मो के लिए प्रेरित करती है। अग्नि ''ऋत्विज्'' होकर हमारे सामने पुरोहित के रूप में खड़ा रहता है, जो हवि का रास्ता दिखाने वाला, उसका फल प्रदान करने वाला, तथा निर्णायक की भूमिका निभाने वाला कहलाता है। अग्नि देव मृत्यु से परिवेष्टित शरीर के अन्दर देवतत्व को प्रविष्ट कर देती है। अग्निदेव देवतत्व को प्रज्जवलित करके अमरत्व को प्रवाहित कर देता है। अग्निदेव हमारे शरीर में तब प्रविष्ट होते है जब हम अपने अन्दर का अहंकार पूर्णतयः नष्ट कर देते है ओर संकल्प करें की प्रत्येक कार्य को करने से पहले अहंकार को नष्ट करना है। अर्थात् यही दिव्य संकल्प ही मनुष्य के अन्दर साक्षात् उपस्थित होकर, सचेतन होकर दिव्य ज्ञान से आलोकित कर देता है। अग्नि सचेतन हृदय (सत्ता) की शक्ति है, जिसे हम ''संकल्प'' के नाम से पुकारते हैं। यह संकल्प मन तथा शरीर के कर्मो के पीछे कार्य करता है। अग्नि हमारे शरीर के अन्दर निवास करने वाला मर्यः अर्थात् मजबूत पुरूष देव है, जो बल द्वारा बुरी शक्तियों का सामना करता है। हृदय की असमर्थता को शक्ति के साथ दूर करता है। अग्नि किसी वस्तु को वास्तविक रूप देता है, सिद्ध करता है जो उसके बिना एक असिद्ध, अभीप्सा या निष्फल विचार प्रस्तुत करती है। वैदिक अग्नि वह शक्ति जो दिव्य क्रिया का आलिंगन करती है, और इस क्रिया द्वारा किसी कार्य को परिपूर्ण करती है। वह कार्य जो दिव्य संकल्प व अग्नि से रहित है। अग्नि उस संकल्प को कार्य द्वारा

करके जीतता है। संकल्प वह कहलाता है जो सभी शक्तियों को उच्छिन्न कर देता है। यही वह संकल्प है जो सब दिव्य शक्तियों में सबलतम है।

हे वैदिक अग्निदेव! आप दिव्य सत्य के स्वामी हैं। हे जातवेदस् अग्निदेव! आप समस्त लोकों में जन्म लेने वालों को जातने हो। हे अग्निदेव! आप पाँचों लोकों के स्वामी हो, पाँचों लोकों को भली भाँति जानने वालो हो। हे अग्निदेव! आप अपनी तीन अवस्थाओं (दिव्य सत्त, चैतन्य, आनन्द), रहस्यमयी गौ (अदिति, असीम चेतना, लोकों की माता) तथा चार सींगो वाले बैल दिव्य पुरूष सच्चिदानन्द, तीन उच्चतम अवस्थाऐं (दिव्य सत्य, चैतन्य, आनन्द) सत्य) के साथ ऐश्वर्य जीवन में प्रवेश करते हो।

''हे जाज्वल्यमान अग्नि देवता! आप ऐसी धातु से बने हो जिसमें शक्ति, तीव्रता, गति और वह चाहे किसी भी अवस्था में हो संवेदीनशील हो।''

''आप की ज्वाला में उज्जवलता जिसका प्रयेाग आग के लिए हो। गति में विशेषकर वक्र या सर्पिल गति हो। इस गति में रहकर अग्नि देव बल, शक्ति, सौन्दर्य, शोभा, नेतृत्व एवं प्रधानत्व का बोध कराते हैं। वैदिक अग्निदेव प्राचीन और प्रधान शक्तियों में प्रथम है जो बृहत् और रहस्यमय देवाधिदेव से उद्भूत हुये हैं। अग्निदेव का आकार एवं तेजस्वी रूप अन्दर शासित होता है, जो शक्तिशाली

तपस् और ज्वालामय संकल्प है, जो जगत के निर्माण के लिए ज्ञान की एक प्रज्जवलित शक्ति के रूप में इस संसार में अवतरित है। यह दिव्य शक्ति संसार के सब देवताओं की शक्ति अपने अन्दर धारण किये हुये हैं।

अग्नि देव सबसे पहले एक दिव्य शक्ति की मुखाकृति लिए हुये इस संसार में प्रकट होते हैं। यह दिव्य शक्ति जाज्वल्यमान ताप और प्रकाश का घनीभूत पुंज होता है जो जड़ प्रकृति तथा संसार के सब पदार्थों को आकार प्रदान करती है। अग्नि की ज्वाला एक शक्तिमय ज्वाला, दिव्य ज्ञान के प्रकाश से परिपूर्ण ज्वाला है, अग्नि देव विश्व में विद्यमान द्रष्टा– संकल्प (कविऋतुः) जो अपने सब कार्यों में भली भांति संकल्प रहित है, अग्नि ही जगत् के प्रतीयमान प्रमादो और संभ्रमों के बीच सत्य के विधान की रक्षा करता है।

अग्नि के बिना कोई यज्ञ कार्य सम्भव नहीं है। यज्ञवेदी की ज्वाला और आहुति का वहन करने वाला पुरोहित ही होता है। अग्नि एक ऐसा ऋत्विक् है जिसे मनुष्य अपने आध्यात्मिक प्रतिनिधि के रूप में अपने सामने स्थापित करता है। अग्नि एक ऐसा संकल्प एवं शक्ति है जो अपने संकल्प एवं शक्ति से ज्यादा उच्च, महान और निर्भ्रान्त है। जो यज्ञ के लिए कार्य करती है। हवि के द्रव्यों को शुद्ध करती है। अग्नि यज्ञ का अग्रणीय व्यक्ति है जो अंधकार की शक्तियों के विरूद्ध यज्ञ की रक्षा करता है।

अग्नि अन्य देवताओं की तरह माता–पिता, द्यौ, पृथ्वी, मस्तिष्क और शरीर, आत्मा और जड़, प्रकृति के शिशु के रूप में प्रतिमूर्त है। यह पृथ्वी के हृदय में गुप्त रूप में धारण है। अग्नि का जन्म पार्थिव जन्मो में सबसे महान है। अग्नि की द्रष्टा संकल्प ज्ञान की दीप्तियों, सूर्य की गौ का रक्षक बन जाती है।

वैदिक अग्नि यज्ञ करने वाले मनुष्य को आकाश लोक ले जाती है। जिससे वह अमर देव मर्त्य में यज्ञ द्वारा विजय होता है। इस प्रकार एक मनुष्य विचारक, योद्धा, श्रमशील, आत्म–शासक, प्रकृति का राजा, एक दृष्टा बन जाता है। वैदिक अग्नि मनुष्य के लिए देवताओं का एक सहायक बन जाती है यह अग्नि पृथ्वी और आकाश के मध्य दूत का कार्य करती है यह अग्नि निष्काम, अनिद्र, अजेय, दिव्य संकल्प शक्ति, शक्तिशाली विश्वात्मा के रूप में इस संसार में वैश्वानर अग्नि के रूप में कार्य करती है। यह अग्नि इस संसार में सबसे शक्तिशाली, तेजस्वी और सर्वाधिक निर्वैयक्तिक है। इस प्रकार अग्नि शक्ति, बल, संकल्प, ज्वाला का नाम है।

अग्नि एक अत्रि है वह एक अंगिरस् भी है जो इस जगत् में सर्वग्रासी कामनाओं, अनुभव और उपभोग से अपनी अनन्त सत्ता की आत्मा के द्वारा आनन्द की ओर अग्रसर करती है। अग्नि, अग्नि का अधिपति देव है जो इस भौतिक रूप में यज्ञिक ज्वाला का देवता है, और अरणियों, पौधों और जलो में पाया जाने वाला देवता अग्नि है जो विद्युत है। संसार में सूर्य रूपी अग्नि है जो ताप और प्रकाश देता

है। तपस् और तेजस् इसी के आग्नेय तत्व है! अग्नि वह ऋत्विक् है जो सही विधि–विधानों के साथ सही ऋतु में यज्ञ करता है, वह पोता (पोतृ) नामक पुरोहित है जो पवित्र करता है। अग्नि दूत है जो पृथ्वी को जानता है, वह आकाश लोक (आरोधनं दिव्यः) अर्थात् मनुष्य के चित्त को आकाश लोक तक ले जाता है। अग्नि मनुष्य और ईश्वर के बीच मध्यस्ता स्थापित करती है। अग्नि पृथ्वी का देवता अर्थात् पार्थिव हृदय की शक्ति है। अग्नि की कामनाओं के अन्दर प्राणिक इच्छा शक्ति प्रतीत होती है। अग्नि अपने धूम के द्वारा भक्षण करते हुए जलता है, इस प्रकार अग्नि मानसिक शक्ति भी है। क्योंकि मनुष्य अग्नि को तारो से युक्त आकाश लोक के समान देखता है। आकाश लोक अन्तरिक्ष लोक, और पृथ्वी इसके अंश हैं।

अग्नि यज्ञ का विरोध करने वाले राक्षसों का संहार करने वाली कही जाती है। अग्नि मर्त्यों के लिए भौतिक सत्ता (पृथ्वी) तथा दिव्य सत्ता (आकाश) के रूप में उपस्थित है यह पौधों में, अरणियों में, जलो में, पायी जाती है। अरणियों से तात्पर्य है पृथ्वी लोक तथा दिव्य लोक (आकाश) की क्रियाओं से उत्पन्न अग्नि।

इसी क्रम में अग्नि को ''स्वर'' का देवता कहा जाता है अग्नि को अन्य नामों से भी जाना जाता है। वैदिक अग्नि यजुः कहलाती है अग्नि को सूर्य का रूप कहा जाता है क्योंकि वह चर अचर का ज्ञाता है इस कारण अग्नि को ''जाति

वेदस्'' सूर्य के समान सर्वद्रष्टा होने के कारण ''भुवन चक्षु'' कहा जाता है। अग्नि को विभु, वसु, प्रजापति, भी कहा जाता है-(खिल सूक्त, 1.53,4.9.6,5.5.1)

देवता अग्नि को ''सुप्रतीक'', ''ज्योतिनिश्चय'', ''अजस्त्र दैवी ज्योति'' नामों से सम्बोधित किया जाता है। (खिल, सूक्त 4.9.1)[9]

देवता अग्नि को औवे, भृगु, जमदाग्नि के समान ''धूमकेतु'' उषर्बुध, अग्रमुख्य कहा गया है (वही, 4.9.2)

देवता अग्नि को ''समतात्मा'' व्रत का निर्वाह करने के कारण ''व्रतभृत'' ''व्रतपा''- (खिल, सूक्त 4.9.5), कहा जाता है। ''चिकित'', इसका अर्थ उर्द्धवस्तर पर ले जाना आदि नामों से पुकारा जाता है शंतम, देववीतम भी अग्नि के लिए प्रयुक्त हुए हैं क्योंकि अग्नि शांति और स्वास्तिकारक है-(वही, 2.13.5)[11]

देवता अग्नि को शत्रुओं पराजित करने के कारण चित्रभानु, स्वनीक, घृताह्वन, बहुलवर्त्मा, तृतमज्वा आदि नामों से जाना जाता है। (वही, 5.5.10)[12]

देवता अग्नि को दक्षिण पूर्व दिशा-कोण का दिक्पाल कहा जाता है।

देवता अग्नि पृथ्वी का प्रधान देव है, अन्तरिक्ष का देवता वायु, स्वर्ग का देवता आदित्य, ये सब अग्नि के स्वरूप है इसलिए इसे पवमान, पावक, और शुचि की प्रतिष्ठा प्राप्त है। इसी तरह ''सत्य'' शब्द अग्नि का विशेषण के रूप में प्रयुक्त है इसका तात्पर्य है कि अग्नि सत्य है और सत्य-फल जो यज्ञ के द्वारा प्रदान करने वाली है।

संदर्भ

1. श्री अरविन्दो–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध) पॉडिचेरी, 2003, पृ०–11
2. वही, पृ०–28
3. वही, पृ०–28
4. वही, पृ०–30
5. वही, पृ०–103
6. वही, पृ०–19
7. आचार्य, श्रीराम शर्मा–ऋग्वेद संहिता, मथुरा, 2008 पृ०–107
8. पाण्डेय, ओमप्रकाश–वैदिक विचार धारा खिल सुक्त, पृ०–107
9. वही, पृ०–108
10. वही, पृ०–108
11. वही, पृ०–108

12 वही, पृ०–108

13 श्री अरविन्दो–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध) पांडिचेरी, 2003, पृ०–102

पौराणिक मिथक में अग्नि

दक्ष का यज्ञ व सती

शिव पुराण में उल्लेखित कथा का संक्षिप्त उल्लेख प्रस्तुत किया है।

सती, राजा दक्ष की पुत्री और भगवान शिव की पत्नी के रूप में *शिव पुराण* में उल्लेखित है। सर्वप्रथम सती की महिमा का वर्णन *शिवपुराण* के अनुसार करते है। सती देवी सत्पुरूषो की आराध्या देवी हैं, आराध्या से तात्पर्य है कि वह देवी जो सदा आराधना करने योग्य है, इनके द्वारा संसार के पुण्यों का फल प्रदान किया जाता है, सतीदेवी तीनों लोकों की माता, जो भगवान शिव के आधे अंग में बसकर कल्याण रूपी देवी, समस्त् संसार पर कृपा प्रदान करने वाली हैं। सती देवी सम्पूर्ण सौभाग्य प्रदान करके शिव की शक्ति, पूजित होकर संसार का भय दूर करती हैं। सतीदेवी संसार के समस्त उपद्रवों का संहार करके कीर्ति और सम्पत्ति प्रदान करती है। सतीदेवी का गुणगान इस रूप में भी किया जाता है सती देवी के द्वारा पराशक्ति, भोग और मोक्ष प्रदान करने वाली परमेश्वरी कही जाती है। देवी सती संसार को जन्म देने वाली माँ, संसार की रक्षा करने वाली अनादि शक्ति व प्रलयकाल में संसार का संहार करने वाली कही जाती है। देवी सती विष्णु की माता के रूप में स्वीकार होकर ब्रह्मा, इन्द्र, चन्द्रमा,अग्नि– और सूर्य देवता की माता कही जाती है।

देवीसती के द्वारा तप, धर्म, और दान आदि मनुष्य को फल प्रदान किये जाते है। देवी सती, शिवशक्ति महादेवी होकर दुष्टों का संहार करने वाली शक्ति कहीं जाती हैं। देवी सती की कृपा से ब्रह्माजी ब्रह्मात्व को प्राप्त हुऐ थे।[1]

शिवपुराण में उल्लेखित पौराणिक कथा सती का यज्ञ में भस्म हो जाना, यह कृत्य भगवान शिव को राजा दक्ष ने अपने यज्ञ में न बुलाकर, सती द्वारा अपना अपमान महसूस करके अपने शरीर को यज्ञ रूपी अग्नि को समर्पित करके भस्म कर दिया। इस प्रकार इस कथा का शिवपुराण में प्रारम्भ होता है। देवी सती जो राजा दक्ष की पुत्री थी, और भगवान शिव की पत्नी के रूप में शिवपुराण में उल्लेखित हुई हैं। कथानुसार–शिवजी को यज्ञ, यज्ञवेत्ताओं में श्रेष्ठ, यज्ञ का अंग, यज्ञ की दक्षिणा एवम् यज्ञ का पुरोहित आदि भाषाओं से अलंकृत किया गया है जो सती के मुख से भी सम्बोधित किया गया है। राजा दक्ष ने देवी सती से कहा कि शिव (रूद्र) भूत–प्रेतों, पिशाचों के स्वामी होकर कुवेष धारण किये हुये है। इस प्रकार इस यज्ञ में उद्ण्ड और दुरात्मा को नहीं बुलाया जा सकता क्योंकि उनके आने से यह यज्ञ व यज्ञशाला अपवित्र हो जायेगी। अपने पति शिवजी का अपमान सुनकर देवी सती ने अपने पति का चिन्तन करते हुए प्राणायाम द्वारा अपमान और अपने प्राणों को नाभि चक्र में एकत्र करके, अपने सम्पूर्ण

---

1. शिव–पुराण–गीता प्रेस, गोरखपुर,रूद्र संहिता, द्वितीय खण्ड (सती), पृ०–211

अंगों में वायु और अग्नि का संचारण करके योगाग्नि से जलकर अपने शरीर को भस्म कर लिया। इस प्रकार मनस्विनी सती देवी, भगवान वृषभध्वज की प्रिय सती देवी का अन्त हो गया। तद्पश्चात् इसके बाद भगवान भृगु ने यज्ञ में विध्न पैदा करने वाले का नाश करने के लिए यजुर्मन्त्र द्वारा दक्षिणाग्नि में आहुति प्रदान, उपरान्त यज्ञ के कुण्ड से ऋभु देवता[1] (देवता ऋभुगण मानवीय शक्तियाँ जिन्होंने यज्ञ के संपादन से, सूर्य के ऊँचे निवास स्थान को उज्जवल आरोहरण के द्वारा अमरत्व प्राप्त किया, अपनी इस सिद्धि की पुनरावृत्ति किये जाने में मनुष्य जाति की सहायता करते हैं। देवता ऋभु गण मन के द्वारा युद्ध के समय देवताओं के समस्त शस्त्रों, तथा साधनों का निर्माण करते हैं) हाथों में जलती हुई लकड़ियों के साथ प्रकट हुए।[2]

बलपूर्वक नाभिचक्र से उठकर बुद्धि के साथ हृदय में प्रवेश किया, हृदय स्थित वायु को कण्ठ मार्ग से भौं के बीच ले गयी। और सती ने सम्पूर्ण अंगों में योगमार्ग के द्वारा वायु और अग्नि को स्थापित किया। इस प्रकार सती का चित्त योगमार्ग में लीन हो गया। तद्पश्चात् (भगवान वृषभध्वज की प्रिय देवी) सती का निष्पाप शरीर योगाग्नि से जलकर भस्म हो गया। चारों तरफ हाहाकार होने पर भगवान भृगु ने यज्ञ में विध्न डालने वाले का नाश करने के लिए *''अपहता असुराः रक्षा ँसि वेदिषदः''* यजुर्मन्त्र से दक्षिणाग्नि

---

1. श्री अरविन्द–वेद रहस्यत (पूर्वार्द्ध), पांडिचेरी, 2003 पृ0–29
2. शिव पुराण–ग्रीता प्रेस, गोरखपुर, रूद्र संहिता, द्वितीय खण्ड (सती), पृ०–214

आहुति प्रदान की, भगवान भृगु के आहुति प्रदान करते ही यज्ञ कुण्ड से ऋभु नामक हजारों वीर देवता हाथ में जलती लकड़ियाँ लेकर प्रकट हुऐ इस प्रकार बह्मा तेज से मुक्त बलशाली ऋभुओं ने यज्ञ में विघ्न पैदा करने वालों से युद्ध करके यज्ञ कार्य को सम्पन्न कराया।[1]

कामदेव दहन

भगवान रूद्र (शिव) मन में पार्वती के प्रति आकर्षण उत्पन्न करके तपस्या में लीन थे, तद्परान्त काम ने वहाँ आकर भगवान रूद्र (शिव) पर बाणों की बौछार करके उनकी तपस्या में विध्न उत्पन्न किया, काम अपने मन में अपार घमंड पैदा किये हुऐ था, क्योंकि वह भगवान शिव को अपने सामने तुच्छ (निमित्र मात्र) सा व्यक्ति समझता था।

जब कामदेव भगवान मृत्युंजय के ऊपर बाणों की बौछार कर रहा था उस समय उसके चित्र में भगवान इन्द्र व समस्त देवताओं का स्मरण था। कामदेव के स्मरण करने पर इन्द्र समस्त देवताओं के साथ उपस्थित होकर भगवान शिव (रुद्र) की स्तुति करने लगे। तद्पश्चात् इन्द्र व समस्त देवताओं ने भगवान शिव से विनम्र निवेदन के साथ माफ़ करने का प्रयास करते हुए कहने के चेष्टा की ही थी कि तब तक बाणों की बौछार से कुपित होकर भगवान शिव (रूद्र) के

---

1. शिव पुराण–ग्रीता प्रेस, गोरखपुर, रूद्र संहिता, द्वितीय खण्ड (सती), पृ०–214

ललाट के मध्य भाग से भारी आग अग्नि प्रकट हुई और ज्वालाएँ ऊपर की ओर उठी और प्रभा प्रलयाग्नि के समान थी, अग्नि शीघ्र ही आकाश में चारों ओर चक्कर काटते हुऐ पृथ्वी पर आकर कामदेव के चारों ओर घूमती हुई कामदेव के शरीर को जलाकर भस्म कर दिया इस प्रकार नेत्राग्नि से उत्पन्न अग्नि के द्वारा कामदेव के शरीर को जलाकर भस्म कर दिया था।[1]

---

1. शिव पुराण–ग्रीता प्रेस, गोरखपुर, रूद्र संहिता, द्वितीय खण्ड (सती), पृ०–210

इन्द्र वज्र में अग्नि

ऋग्वेद के लगभग चौथाई सूक्त इन्द्र को समर्पित किये गये हैं। इस प्रकार *ऋग्वेद–संहिता* में इस देवता(इन्द्र) के अलावा इतने सूक्त किसी और देवता को समर्पित नहीं किये गये हैं। वेदानुसार इन्द्र को देवराज व अग्नि से तुलना की गयी है। इन्द्र के कार्य का निरूपण किसी कार्य को सम्पूर्ण रस प्रदान करना व वृत्र का अंत करना।[1] *'ऋग्वेद* में कहा जाता है कि जो कार्य शक्ति से पूर्ण है, वह इन्द्र द्वारा ही संचालित होते हैं क्योंकि इन्द्र बल के देवता होकर वृत्र का अंत करके सम्पूर्ण पृथ्वी को आनन्दित रस से सराबोर करते हैं। अग्नि को प्रकाश और ज्ञान के रूप में भी वैदिक मनीषियों ने माना है। इसी क्रम में अग्नि को ज्ञान, प्रकाश से जोड़ते हुए इसे गृहपति, पुरोहित, की संज्ञा से अलंकृत किया जाता है। इन्द्र बल का देवता है, जो विजेता होकर आध्यात्मिक ज्योति (ज्ञनता) और तम ;अज्ञानता के क्षेत्र में नेतृत्व करता है। इसी को वृत्र के नाम से *ऋग्वेद संहिता* में जाना जाता है। वृत्र से तात्पर्य है कि संरक्षण में रखने वाला/ढकने वाला।[2]

उल्लेखित *ऋग्वेद संहिता* के अनुसार इन्द्र ने वज्र से गौ का वध किया था क्योंकि गौ का तात्पर्य प्रकाश से परिपूर्ण रश्मि या ज्ञान रूपी

---

1. श्री अरविन्दो–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध), पांडिचेरी, 2003 पृ०–21
2. वही, पृ०–29

ज्योति को अंधकार का मार्ग दिखाया इस कारण इन्द्र ने अपने वज्र द्वारा वृत्र(अज्ञानता) का अंत किया। दूसरे तात्पर्य में गौ का अर्थ जलधारा से है।[3] वृत्र ने भूमि की उर्वरता एवं सम्पूर्ण संसार के रस का हनन किया, इस प्रकार इन्द्र ने हृदय रूपी गुफा को अज्ञानता से हटाकर अपने वज्र से नष्ट कर दिया। इस प्रकार इन्द्र ने सात नदियों से जलधारा का प्रवाह किया। इसी प्रकार इन्द्र ने बादल रूपी चट्टान व उससे निकलने वाली बिजली को वज्र की संज्ञा प्रदान की है।[4] वज्रपात के द्वारा ही वर्षा का प्रवाह व अन्धकार रूपी अज्ञानता का अन्त होकर ज्ञानता का प्रवाह होता है। इसलिए ऋग्वैदिक इन्द्र भगवान, महान देव है।

---

3. श्री अरविन्दो–वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध) पांडचेरी, 2003 पृ०–26
4. वही, पृ०–28

अग्नि पुराण

अग्नि पुराण में अग्नि देव की महिमा का वर्णन परम्परानुसार भगवान अग्नि ने महर्षि वसिष्ठ को अग्नि पुराण सुनाकर किया। वेदव्यास द्वारा अठारह महापुराणों में अग्नि पुराण को विशेष स्थान प्रदान किया गया है जो 383 अध्यायों में विभक्त होकर भगवान अग्निदेव द्वारा महर्षि वसिष्ठ जी के प्रति *अग्निपुराण* को ब्रह्मस्वरूप समर्पित किया गया है।

अग्नि और वसिष्ठ की वार्तालाप से अग्निपुराण आरम्भ

अग्नि और वसिष्ठ की वार्तालाप के आरम्भ में वसिष्ठ ने कहा– ''मैं लक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती, गणेश, कार्तिकेय, महादेव, ब्रह्मा, अग्नि, इन्द्र, भगवान वासुदेव को नमस्कार करता हूँ।''

भगवान अग्निदेव महर्षि वसिष्ठ जी से कहते हैं कि मुझे विष्णु का स्वरूप प्रदान है, काली अग्नि के रूप में मुझे (अग्निदेव) ''रूद्र'' की संज्ञा से अलंकृत किया गया है। वसिष्ठ ने कहा–*अग्निपुराण* अति उत्तम है, क्योंकि इसका एक–एक अक्षर ब्रह्माविद्या से परिपूर्ण है।

अग्निदेव महर्षि वसिष्ठ से कहते हैं मैं संसार में विष्णु रूप में व्याप्त हूँ, जो कालिख एवं धुंऐं से परिपूर्ण है, इस प्रकार मैं तुम्हें और सम्पूर्ण संसार को विधाओं का उपदेश प्रदान करता हूँ। वह ब्रह्मा जो इस संसार का

कल्याण करते है, वो *अग्निपुराण* में व्याप्त ब्रह्मा (अग्निदेव) से भिन्न नहीं है। इस ब्रह्म रूपी(अग्नि देव) को *अग्निपुराण* में सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, मत्स्य–कूर्म का रूप धारण करने वाला कहा गया है।[1]

कुण्ड–निर्माण एवं अग्नि–स्थापना सम्बन्धी कार्य का वर्णन

अग्नि देव को प्रसन्न करने के लिए *अग्नि पुराण* में कुण्ड निर्माण के द्वारा अग्नि स्थापना का विधान है। इस विधान के द्वारा सर्वप्रथम अग्निकुण्ड का निर्माण किया जाता है जो चौबीस अंगुल चौकोर भूमि को खोदकर कुण्डली मेखला का निर्माण किया जाता है, मेखला को तीन नामों से जाना जाता है, जो सत्व, रज, तम कहलाते है। मेखला की ऊँचाई बारह अंगुल रखी जाती है। इसकी चौड़ाई आठ, दो, चार अंगुल होती है। अग्निकुण्ड में एक सुन्दर योनि का निर्माण किया जाता है, जिसकी आकृति पीपल के पत्ते जैसी होती है, जिसका कुछ भाग अग्निकुण्ड में प्रविष्ट रहे। जब किसी वस्तु को अग्निकुण्ड में प्रविष्ट किया जाता है जो उसका गुण दो गुना या तीन गुना बढ़ जाता है। इस प्रकार चिन्तन द्वारा अग्नि को प्रकट कर रहे हैं और जो कुछ भी इस अग्नि में प्रविष्ट किया जा रहा है, वो भस्म हो रहा है, चाहे वो पर्वत के समान विशाल क्यों ही न हो। तत्पश्चात् कुण्ड के पास

---

1. अग्नि पुराण–गीता प्रेस, गोरखपुर,, पृ०–17

उपस्थित जल के द्वारा अग्निकुण्ड को शुद्धि करके, कुण्ड में उपस्थित देवता अग्निदेव को आत्मसात् करके अपने चित् को शुद्ध करके पुरोहित जो भी कामना करेगा, वह फल उसे प्राप्त हो जायेगा।

इस प्रकार अग्निकुण्ड के निर्माण में पुरोहित अनेक विधि–विधानों के द्वारा अग्निदेव को प्रसन्न कर सकता है। इस प्रकार वह अग्निदेव की स्थापना अपने हृदय, चित् में कर सकता है। भगवान विष्णु स्वरूप अग्निदेव को दो विधाओं परा और अपरा से परिपूर्ण कहा गया है। देवता अग्निदेव को परा विधा से पूर्ण है जो अदृश्य, अग्राह्मा, गोत्ररहित, चरणरहित, नित्य, अविनाशी स्वरूप ब्रह्मा के गुणों से परिपूर्ण है। इस कारण अग्निदेव को ब्रह्मा स्वरूप पराविद्या से मुक्त माना गया है। *अग्निपुराण* में भगवान विष्णु तथा भगवान ब्रह्मा ने सम्पूर्ण संसार के देवताओं से मेरा (अग्निदेव) वर्णन किया है, इसलिए मैं इस संसार में मत्स्य तथा अन्य अवतारों का रूप धारण करने वाले ईश्वर का वर्णन आपको बताऊंगा जो इस जगत में व्याप्त हैं।[1]

होम प्रकार–भेद एवं विविध फलों का कथन

भगवान शिव *अग्निपुराण* के माध्यम से उपदेश देते हैं, पूर्वाह्न काल में अग्नि में आहुति अथवा पूजन करने से युद्ध–विजय, राजप्राप्ति, बुराई का

---

1. अग्नि पुराण–गीता प्रेस, गोरखपुर,, चौवीसवां अध्याय, पृ०–39

अन्त होता है। इस प्रकार जातवेद– अग्निहोत्र करने का भी विधान है। इस प्रकार अग्निदेव को प्रसन्न करने के लिए अयुत–होम, लक्ष–होम, कोटिहोम, आदि का विधान है जो घृत (घी) से होम करने का विधान प्रस्तुत करते है।

इस प्रकार अग्नि का पूजा कर विधान होम पूजन विधि में विद्यमान है, जो हमें विभिन्न फलों से लाभान्वित करते हैं। इन लाभों के द्वारा मनुष्य को युद्ध में शत्रु से, राज्य में अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूत–राक्षस आदि भयंकर बाधाओं से मुक्ति प्राप्त होती है क्योंकि देवता अग्नि इन सभी बुराइयों से मानवीय जीवन का बचाव करते हुए मनुष्य को तेजस् प्रदान करके नवीन जीवन प्रदान करते हैं।[1]

भगवान महेश्वरी (शंकर जी) ने *अग्निपुराण* में होम पर सम्बोधित करते हुए कहा है कि *अग्निपुराणों* में उल्लेखित देवी–देवताओं होम करने से मनुष्य, देवी–देवताओं को तेजस्, एवं युद्ध में विजय, राज्य को प्राप्त करने की शक्ति, दैत्यों का विनाश करने की शक्ति प्रदान करता है। होम करने की विधि–विधान करने का तरीका पहले ''कृच्छव्रत'' द्वारा अपने शरीर को शुद्धि प्रदान करे, तद्पश्चात् सौ बार प्राणायाम करके शरीर को तेज प्रदान करे। प्राणायाम के समय गायत्री–जाप करके, सोलह बार पुनः प्राणायाम करें।

---

1. अग्नि पुराण–गीता प्रेस, गोरखपुर,, चौवीसवां अध्याय, पृ०–70

प्रातःकाल अग्नि को आहुति प्रदान करे। होम यज्ञ के दौरान देवी–देवता एवं मनुष्य को भिक्षा से प्राप्त यव निर्मित्त भोजन, फल, मूल, दूध, सत्तू, जो घी से निर्मित हों आहार में ले सकता है।

इन सब चीजों का सेवन करने से उसे शक्ति एवं अपने शत्रुओं का विनाश करने में तेज प्राप्त होगा।

माता पार्वती ने तत्पश्चात् *अग्निपुराण* में कहा है कि कोटि होम की समाप्ति के बाद ही भोजन ग्रहण करें। होम की आहुति के पश्चात् गौ, वस्त्र, सोना दान करें। बाद में पाँच या दस पुरोहितों के द्वारा यज्ञ करना चाहिए क्योंकि यज्ञ से संसार की समस्त बुरी शक्तियाँ शान्त हो जाती हैं।

इस प्रकार कोटि होम कराने से अच्छा इस संसार में कोई परम मंगलकारी कार्य नहीं जो व्यक्ति या राजा इस कार्य को पूर्ण करता है। कोई भी शत्रु उसके सम्मुख नहीं ठहर सकता। होम को सम्पन्न करने से राज्य में अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चूहों का प्रकोप (मूषकोपद्रव), टिड्डीदल, शुकोपद्रव एवं भूत पिशाच, राक्षस तथा पुत्र में समस्त शत्रु शान्त हो जाते हैं।

होम को सम्पन्न करने में सौ ब्राह्मणों को शामिल किया जाता है। इसमें पुरोहित अपनी इच्छानुसार धन वैभव को प्राप्त करता है, जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इस होम यज्ञ को सम्पन्न कराता है वह जिस वस्तु की कामना

करता है, उसे प्राप्त करता है। उसका शरीर स्वर्ग लोक को प्राप्त होता है क्योकि होम के द्वारा मनुष्य अग्निदेव के माध्यम से सम्पूर्ण जगत के देवों को प्रसन्न करता है। (4–9$^{1}/_{2}$)

होम पूजा में गायत्री मंत्र, गृह संबंधी मंत्र, कूष्माण्ड मंत्र, जातवेदा, अग्नि, इन्द्र, वरूण, वायु, यम, अग्नि, विष्णु, शाक्त, शैव और सूर्य देवता के मन्त्रों से होम पूजन किया जाता है।

होम पूजन भी विभिन्न प्रकार से होता है और उनसे प्राप्त होने वाले फल भी विभिन्न होते हैं, जो निम्नवत हैं–

1. ***होम पूजन–*** इस पूजन में अग्निकुण्ड द्वारा देवता अग्नि को प्रसन्न किया जाता है।

2. ***अयुत होम–*** इसके पूजन से अल्प सिद्धि होती है।

3. ***लक्ष होम–*** इस पूजन विधि में सम्पूर्ण दुखों का निवारण होता है।

4. ***कोटि होम–*** समस्त क्लेशों का नाश करने वाला व समस्त तत्वों को प्रदान करने वाला है।

होम पूजन में निम्न चीजों को होना आवश्यक है जो निम्नवत हैं–

यव(जौ), धान, तिल, दूध, घी, कुश, छोटे दाने वाला चावल, कमल,

खस, बेल और आम के पत्ते होम के योग्य होते हैं।

कोटि होम में आठ हाथ और लक्ष होम में चार हाथ गहरा कुण्ड बनाया जाता है। इस प्रकार कोटि होम, अयुत होम, लक्ष होम में घी का हवन करना चाहिए। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के होम के पूजन के द्वारा मनुष्य और देवी–देवता अपने–अपने लक्ष्यों को प्राप्त करते हैं।[1]

पवित्रारोपण के लिए पूजा– होमादि की विधि का वर्णन

अग्निपुराण में अग्निदेवता ने होम पूजा विधि में मन्त्रों का उच्चारण करते हुए ऋषि मुनियों को सजावट से परिपूर्ण द्वार से प्रवेश करके यज्ञ स्थल पहुंचाने के लिए निर्दिष्ट किया है। इस प्रकार मनुष मण्डल की रचना करके पूजन सम्बन्धी द्रव्य को एकत्र करे और हाथ में अर्ध्य लेकर जल से अपना सिर धोये। इसके बाद देवताओं का पूजन प्रारम्भ करे। वासुदेव मंत्र से गोमूत्र, संकर्षण–मंत्र से गोमय, प्रद्युम्न मंत्र से गोदूध, अनिरूद्ध मंत्र से दही और नारायण मंत्र से घी लेकर सबको एक स्थान पर एकत्र करें और जो वस्तु तैयार होती है, वो घी से तैयार होती है, उसे 'पंचगव्य' कहते हैं।

इसके पश्चात् दस कलशों को स्थापित करते हैं और भगवान इन्द्र की पूजा की जाती है। पूजा के बाद श्रीहरि की आज्ञा सुनते हैं– हे अग्नि

---

1. अग्नि पुराण–गीता प्रेस, गोरखपुर,, एक सौ उनचासवॉ अध्याय, पृ०–314

देव! (लोक पालक) आपको इस यज्ञ की रक्षा के लिए श्रीहरि की आज्ञा से यहाँ हमेशा रहना चाहिए। कमल,श्यामाक, दूर्वादल, विष्णुक्रान्ता चीजों का मिश्रण से प्रयुक्त जल ''पाद्य'' कहलाता है। इसी क्रम में अर्ध्य के भी आठ अंग है जो निम्नप्रकार है– जौ, गन्ध, फल, अक्षत, कुश, सरसों, फूल और तिल इन सब चीजों का मिश्रण अर्ध्य में प्रयोग किया जाता है।

हवन की विधिः– कुण्ड या वेदी पर तीन रेखाऐ खीचे, ये रेखाये दक्षिण से प्रारम्भ करें और उत्तर तक खीची जायें। इसके पश्चात् इन रेखाओं का प्रोक्षण करके उन्हें योनि की मुद्रा का रूप प्रदर्शित करें। इसी क्रम में अग्नि देव का आत्मा से चिन्तन करके मनुष्य योनि निर्मित कुण्ड में उसकी स्थापना करे। इसके बाद दर्भ,स्त्रुक, स्रुवा आदि के साथ पात्र प्रस्तुत करें। पात्र को जल से भरकर अग्नि के पश्चिम तथा अपने आगे आसादित द्रव्य के मध्य रखें। इसी क्रम में अग्नि के दक्षिण दिशा में ब्रह्माजी को स्थापित करें। कुण्ड या वेदी के चारों ओर कुश (बर्हिष्) बिछाकर अग्नि देव का स्वागत् करें। तद्पश्चात गर्भाधान संस्कारों के द्वारा अग्नि का वैष्णवीकरण करें। कुण्ड के अन्दर जो लक्ष्मी है उन्हें लक्ष्मीकुण्ड कहते है। में लक्ष्मी कुण्ड भूतों की, विद्या की, मन्त्र योनि कहलाती है।

अग्नि देव को ईश्वर के रूप में मोक्ष का कारण एवं मुक्ति दिलाने वाले देव की संज्ञा प्रदान की जाती है।

कुण्ड की पूर्व की दिशा को कुण्डलक्ष्मी का सिर, ईशान और अग्निकोण उसकी भुजाएँ हैं। वायव्य और नैर्ऋत्यकोण उसकी जंघा का रूप है। पेट (उदर) को कुण्ड की संज्ञा प्रदान की जाती है। इस प्रकार पन्द्रह समिधाओं द्वारा होम करने का विधान है। वायु से अग्निकोण तक आधार नामक दो आहुतियाँ प्रदान की जाती है। इसी क्रम में अग्निकोण से ईशान तक आज्य–भाग नामक आहुतियाँ प्रदान की जाती है। अतः आज्य–भाग स्थल से उत्तर व दक्षिण और मध्य भाग से घी बारह बार जाप कर अग्नि को आहुति प्रदान करें। इसके बाद ''भूः– स्वाह'' रूप से व्याह्मति–होम का प्रारम्भ करें। कमल रूपी मध्य भाग में अग्नि देव को विष्णु का रूप मानकर चित् एकांग्र करे। क्योंकि अग्नि देव को सात जिह्वा से युक्त माना गया है। अग्निदेव का मुख चन्द्रमा के समान है। अग्निदेव के नेत्र सूर्य के समान देदीप्यमान है।

इस प्रकार देवता अग्निदेव को प्रसन्न करने के लिए आठ आहुतियाँ प्रदान करें। अग्निदेव के अंगों को प्रसन्न करने के लिए दस–दस आहुतियाँ प्रदान करें। इस प्रकार अग्निदेव हमारे जीवन में उज्जवलता प्रदान कर सकते है।

पवित्र रोपण के लिये पूजा–होम की विधि

अग्नि पुराण में अग्नि देवता ने पूजा–विधि में मन्त्रों का उच्चारण करते हुये ऋषि–मुनियों को सजावट से परिपूर्ण द्वार से प्रवेश करके यज्ञ स्थल पर पहुँचने के लिए निर्दिष्ट किया है। यज्ञ स्थल के दक्षिण की दिशा में अग्नि स्वरूप ब्रह्माजी की स्थापना करें। तद्पश्चात् गर्भाधान संस्कार के द्वारा अग्नि का वैष्णवीकरण होता है। होम पूजन विधि में पंद्रह समाधियों द्वारा ही होम की पूजा की जाती है।

इस होम पूजा के माध्यम से विष्णुस्वरूप अग्निदेव का स्मरण करते है। जो सात जिह्वा धारण किये हुये है। अग्निदेव का मुख चन्द्रमा के समान कान्तिमय है अग्निदेव के नेत्र सूर्य के समान देदीप्यमान हो रहा है। इस प्रकार अग्नि का ध्यान करने के लिए 108 बार आहुतियाँ प्रदान करें जिससे आपको बल एवं तेजस् प्रदान हो।

शक्ति के रूप में अग्नि

ज्वाला देवी, कांगड़ा (हिमाचल प्रदेश)

ज्वाला देवी के इस स्थान को धूमा देवी के नाम से भी जाना जाता है। ज्वाला देवी की मान्यता 51 शक्ति पीठों में है। ऐसा कहा जाता है कि यहाँ देवी भगवती सती की जिह्वा गिरी थी! इस तीर्थ स्थल पर देवी के दर्शन एक ''ज्योति'' के रूप में किये जाते हैं। यहाँ पर पर्वत की चट्टान से नौ विभिन्न स्थानों पर ज्योति बिना किसी ईधन के स्वत: प्रज्ज्वलित होती है। इसी कारण देवी को ज्वाला देवी के नाम से पुकारा जाता है और यह स्थान ज्वाला माई के नाम से प्रसिद्ध है।

ज्वाला देवी का यह स्थान हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा में स्थित है। जो पंजाब के होशियारपुर गोपीपुर डेरा नामक स्थान से 20 किलोमीटर की दूरी पर ज्वाला देवी का मंदिर स्थित है। श्री ज्वाला देवी मंदिर में देवी के दर्शन नौ ज्योतियों के रूप में होते हैं। यह ज्योतियाँ कभी कम प्रज्ज्वलित कभी अधिक प्रज्ज्वलित के रूप में भी विद्यमान रहती हैं।

भाव इस प्रकार माना जाता है कि माँ दुर्गा देवी के नव रूप में जो नव दुर्गा कहे गये हैं वो ही चौदह भुवन हैं जो सृष्टि की रचना करने वाली है! मंदिर की भव्यता के रूप में मंदिर के मुख्य द्वार के सामने चाँदी के आले में जो मुख्य ज्योति

सुशोभित है उसको महाकाली का रूप कहा जाता है जो पूर्ण ब्रह्म ज्योति तथा भक्ति और मुक्ति प्रदान करने वाली है। ज्योतियों के पवित्र नाम व दर्शन निम्नलिखित हैं।

(1) मंदिर के मुख्य में चाँदी के आले में सुशोभित मुख्य ज्योति का पवित्र नाम महाकाली है जो मुक्ति और भुक्ति प्रदान करने वाली।

(2) दूसरी ज्योति जो सुशोभित है वह महामाया ''अन्न पूर्णा माँ'' की ज्योति, जो माता भंडार भरने वाली है!

(3) तीसरी ज्योति शत्रुओं का संहार करने वाला माता चंडी की है!

(4) चौथी ज्योति व्याधियों का नाश करने वाली है जो हिंगलाज भवानी माँ की है!

(5) पंचम ज्योति विन्ध्यवासिनी है, जो शोक से छुटकारा प्रदान करने वाला माँ की ज्योति है!

(6) छठी ज्योति महालक्ष्मी की है जो धन-धान्य देने वाली है। यह ज्योति कुण्ड में विराजमान है!

(7) सातवीं ज्योति विद्यादात्री माता शारदा की है जो कुण्ड में सुशोभित है!

(8) आठवीं ज्योति, जो संतान सुख देने वाली अम्बिका माई की ज्योति है जो कुण्ड में दर्शन दे रही है!

(9) नौवीं ज्योति अंजना माता की है जो यहीं पर कुण्ड में दर्शन दे रही है। यह भक्तों को आयु व सुख प्रदान करती है!

ज्वाला देवी, मसूरी

यह भी ज्वाला देवी का प्रसिद्ध मंदिर मसूरी में प्रसिद्ध धार्मिक केन्द्र है जो समुद्र स्तर से 2100 मीटर की ऊँचाई पर बेनॉग हिल्स के शीर्ष पर स्थित है। ज्वाला देवी के मंदिर तक पहुँचने के लिए क्लाउड आउस एंड और पाइन व देवदार के मोटे वृक्षों से होकर गुजरना पड़ता है। इस मंदिर में देवी माता की पत्थर से बनी मूर्ति स्थापित है यह मंदिर देवी दुर्गा को समर्पित है भक्त यहाँ आकर देवी के दर्शन के अलावा एक तरफ यमुना घाटी और दूसरी तरफ शिवालिक पर्वतमाला के आकर्षक दृश्यों का दर्शन करते हैं।

अग्नि कुण्ड वंशोंत्पत्ति

चाहमान तथा परमार

वैदिक साहित्य के उपरान्त पौराणिक काल में भी अग्नि-देव की महिमा को निरन्तर बनाये रखा गया पर यहाँ जिसका रूप मूर्त रूप प्राप्त होता है। अग्नि का पौराणिक रूप एक ज्योति के रूप में प्राप्त होता है। इस रूप को ज्वाला देवी का रूप कहा जाता है। क्योंकि यहाँ बिना किसी ईधन के स्वत: ज्योति प्रज्जवलित होती है। इसलिए इस देवी को ज्वालादेवी कहा जाता है। ज्वाला देवी भक्तों को मुक्ति और भक्ति, भंडार भरने वाली, शत्रुओं का संहार करने वाली, व्याधियों का नाश करने वाली, विद्यादात्री, संतान सुख देने वाली, आयु व सुख प्रदान करने वाली माता के रूप में विख्यात है। यह ज्योति (अग्नि) पौराणिक काल की अग्नि के महत्व को सिद्ध करती है। पौराणिक काल में अनेक अग्नि कुल (ऋषि कुल) ने ऋषियों को उत्पन्न किया जिन्होंने अग्नि की खोज की और अग्नि से सम्बन्धित अनुष्ठान स्थापित कराये। इसमें प्रमुख्यत: से आंगिरस, भृगु, अर्थवन, है। जिन्होंने ने अग्नि को अधिमंथन से प्राप्त किया था। पौराणिक काल में अग्नि-कुण्ड से भी कई कुलो की स्थापना हुई है जिसमें चाहमान वंश, अर्बुद पर्वत से परमारों (अग्नि संस्कार से) को उत्पन्न किया। इस अग्नि-कुण्ड की स्थापना मुनि वशिष्ठ ने अपनी कामधेनु गाय की रक्षा हेतु एक सेना निर्माण में की थी। यह एक पौराणिक प्रकरण है जो पौराणिक काल में अग्नि के महत्व को सिद्ध करती है।

राजपूत युग में विभिन्न राजवंशों को, जोकि वास्तव में विदेशी मूल के भारत में शक–हूण या कुषाण काल में आयी हुयी जातियों से थे राजपूत युग में उनकी वंशावलियों को अग्नि से जोड़ा गया जैसे–चाहमानों को अग्नि कुण्ड से प्रकट योद्धा चाहमान के वंशज बताया गया है। या फिर परमारों की परमारण योद्धा की संतान कहा जो कि अर्बुद पर्वत में अग्नि संस्कार में प्रकट हुए। यह अग्नि कुण्ड की उत्पत्ति, मुनि वशिष्ठ ने अपनी कामधेनु गाय की रक्षा हेतु एक सेना निर्माण हेतु की थी, जिस गाय को विश्वामित्र ने चुरा लिया था। यह सेना निर्माण एक पौराणिक प्रकरण है। गुप्तकाल के बाद अग्नि अनुष्ठान से हिन्दू धर्म में विदेशी जोड़े गए।

तृतीय अध्याय

अवेस्ता में अग्नि स्वरूप, उपासना व अनुष्ठान

अवेस्ता

अवेस्ता पारसियों का पवित्र धर्म ग्रन्थ है जिसकी प्राचीनता आर्यों के काल तक मानी जाती है। इसमें ईरान के प्राचीन धर्म के सिद्धान्त निहित हैं। *अवेस्ता* की रचना अग्नि उपासक वर्ग ने की थी। इसके अन्तर्गत सबसे प्राचीन गाथ, का अनुभाग है। जिसमें ईश्वर के प्रति प्रार्थना है। फिर *यास्न* है। जिसका अर्थ उपासना है। इस उपासना के साथ यज्ञ सम्पादित होते थे। यह अनुष्ठानों से जुड़ा है। तीसरा मुख्य अंग *वेन्दीदाद* है। *अवेस्ता* की अधिकांश सामिग्री ज़रथ्रुस्त्र के काल यानि सातवीं सदी ईसा पूर्व में रचित मानी जाती है। *अवेस्ता* के मानने वाले एक साधारण सी जीवन शैली में जीते थे और उनका सत्ता में बने रहने का कदापि रूझान नहीं था। किन्तु उनके धर्म का मूल सिद्धान्त यह कहता था कि विश्व में दो प्रमुख शक्तियाँ हैं। शुभ शक्ति एवं अशुभ शक्ति और मनुष्य का दायित्व है। कि सभी सम्भव प्रकारों से शुभ शक्ति का सहयोग करें!

अवेस्ता की शब्दावली

1. *अहुर* – विभिन्न जीवन दायक।
2. *माज़दा* – ईश्वर या महान।
3. *यास्न* – उपासना।
4. *उपसऐनि* – आहुति।
5. *आतर* – ईरानी अग्नि।
6. *यज़त* – उपासक।
7. अग्नि/*आतर* – अहुर माज़दा का पुत्र।
8. *अपांन्पात* – जलो का देवता।
9. *मित्र* – पशुओं का स्वामी।
10. *स्पेन्ता मइन्यु* – मृत्यु रुपी शिव का रुप जो सृष्टि का नाश करता।
11. *दएव* – दुरात्मा
12. अश्वहरित – अग्नि तत्व की रक्षा करने वाला।
13. *वोहुमनह्* – पशुओं के समूह का संरक्षक।
14. *अंगरामेइन्यु* – देवों की सृष्टि का रक्षक।
15. *तउर्वि* – अधोगति या क्षति का देवता।
16. *जउर्वि* – सम्वर्धन तथा सत्कर्म करने वाला देवता।
17. अएष्म – क्रोध करने वाला का स्वामी।

18. हउव्र – कुशासन, विद्रोह, मद्यपान, काम का देवता।

19. *अवेस्तीय यम* – पोशादादिय साम्राज्य का तृतीय शासक

20. *प्रदाक्षि खुम्भ्य* – पति–पत्नी के मधुर सम्बन्धों का स्वामी।

21. ऋति – उर्वरा देवता।

22. *नईर्योसंघ* – मनुष्यों के मध्य अहुर माज़दा का दूत।

23. कृशानु *(करैंसानि)* – सोम विरोधी।

24. *अेरेद्वी सूरा अनाहिता* – दिव्य जल की स्वामी।

25. ग्ना – अपवित्र चरित्र वाली रुपवती।

26. *अवेस्तीय श्येन* – शुत्र हन्ता, पक्षियों को मारने वाला।

27. *वोहूफ्रायन* – अच्छा मित्र (अग्नि के रुप में)

28. *वेरेजिसवनह* – अत्यन्त उपयोगी।

29. *उर्वाज़िस्त* – पेड़–पौधों की अग्नि।

30. *वाज़िस्त* – बादलों की अग्नि।

31. *स्पेनिश्त* – संसार में व्याप्त अग्नि।

32. *स्पेतमा* – मनुष्य के स्वास्थ्य की सुरक्षा करने वाला।

33. *हुमत* – अच्छे विचार।

34. *हुउक्त* – अच्छे वचन।

35. *हुवर्षत्* – अच्छे कर्म।

36. *आतिश बहरम* – विजयी अग्नि।

37. *आतिश अदारण* – अग्नियों की अग्नि

38. *आतिश ददगॉह* – घरेलू अग्नि।

39. *सितायि* – प्रशंसा की स्तुति।

40. *नियायि* – माँगने के लिए।

41. *खुर्शीद* – सूर्य।

42. बरेसम – पवित्र लकड़ियाँ।

43. *गाथा* – प्राचीन धार्मिक वंदनाये।

44. *विस्पर्द* – आहुतियाँ अर्पित करना।

45. *अथर्वन* – अग्नि पुरोहित।

46. *वेन्दीदाद* – पापमुक्ति, प्रायश्चित, पवित्रीकरण का विधान।

अहुर माज़्दा के रूप में अग्नि

ईरान में माज़दा का सम्प्रदाय प्राचीन वैदिक धर्म से बहुत निकट रूप से सम्बन्धित था। इसी सम्प्रदाय का *अवेस्ता* में अर्थ होता है ईश्वरों उपासना। माज़दा माने ईश्वर और यास्न माने उपासना।[1]

अहुर का अर्थ होता है जीवनदायक। अहुर = विभिन्न जीवनदाता। संस्कृत में *माज़दा* को महद कहा जाता है। मह मतलब महान और द मतलब देना। इसलिए महद भी कहा जाता है। ज़रथुस्त्र ने मज़द यस्न धर्म का पुरोउद्धार किया और उसके वचन को दो भागों में विभाजित है एक रहस्यवाद।[2]

1. अहुर *माज़दा* में पूर्ण विश्वास
2. आत्मा का अविनासी होने और मृत्यु प्राप्त जीवित होना।
3. अग्नि का दैविक रूप होना।

ज़रथुस्त्र के वचन का दूसरा भाग दर्शन से जुड़ा है जिसमें

1. अच्छे और बुरे का अन्तर और महत्व स्पष्ट है।
2. जीवन अच्छे और बुरे के बीच का सास्वत सच है।

ज़रथुस्त्र ने नैतिकता के विषय में तीन बाते कहीं थी। जिसे पवित्र तिगड़ी कहते हैं।

1. *हुमत* अर्थात् अच्छे विचार।
2. *हुउक्त* अर्थात् अच्छे वचन।
3. *हुवर्षत्* अर्थात् अच्छे कर्म।

इस कसौटी के माध्यम से किसी भी वस्तु, विचार या कर्म की परख की जा सकती है और जो विपरीत हो तो तज्जय होगा।[4] अग्नि के सम्बन्ध में ज़रथुस्त्र के विचार शिक्षा में।

1. बहुत पवित्र मन से अग्नि की रश्मियों पर ध्यान केन्द्रित करें।

2. जो मनुष्य जिज्ञासु मन से इन रश्मियों पर चिंतन करता है उसे अग्नि अनेक शिक्षायें प्रदान करती है।

3. अग्नि ऊपर की ओर उठती है और मज़्द यस्नी के विचारों को भौतिक भूमि की कीचड़ और गंदगी से ऊपर उठाती है।

   अग्नि जिसे छूती है उन सभी को पवित्र करती है और स्वत: भी पवित्र रहती है। अग्नि को कोई भी अपवित्र नहीं कर सकता है।

4. जिस प्रकार अग्नि आधार पर चौड़ी होती है और ऊँचाई पर नुकीली बन जाती है बताया है कि निचले स्तेह पर मतभेद और भिन्नतायें, ऊँचाई पर पहुँचते समाप्त हो जाती हैं इसअग्नि में एकता और समरूपता नज़र आती है जिसे दिव्यता कहते हैं। ज़रथुस्त्र के धर्म में तीन प्रकार की अग्नियों को श्रद्धा अर्पित की जाती है।

(1) *अतिश बहरम* अर्थात विजयी अग्नि जो कि सर्वोच्च श्रेणी की पवित्र अग्नि है। ऐसी कुल आठ अग्नियों में चार मुम्बई में, दो सूरत में, एक नवसारी में और एक उद्वदा में है।

(2) दूसरी *आतिश अदारण* अर्थात् अग्नियों की अग्नि। यह अग्नि मन्दिर या अज़ारी में प्रज्जवलित है।

(3) *आतिश ददगॉह* अर्थात् घरेलू अग्नि।

आतिश बहरम की प्रतिस्थापना में अनेक प्रार्थनाऐं और अनुष्ठान आवश्यक है जो एक वर्ष तक चलते हैं। आकाश से बिजली गिरना अथवा प्राकृतिक रूप से प्रज्जवलित घास या लकड़ी इस आतिश को तैंतीस से इक्यानवे बार तक पुनः जलाकर पवित्र किया जाता है इस प्रकार सोलह अग्नियों के स्थानान्तरण और पवित्रीकरण की प्रक्रिया से कुल एक हजार एक सौ अट्ठाईस (1128) कार्य होते हैं। इसके उपरान्त सोलह स्थापित अग्नियों को दो याओज़दाथगर बरशेनम और खूब से मिला देते हैं। इसके उपरान्त 33 दिनों तक यस्न और वेन्दीदाद की प्रार्थनायें करने के उपरान्त 34वें दिन सरोशयाज़द का यस्न पाठ करके आतिश बहरम की स्थापना हो जाती है। पवित्र अग्नि को आध्यात्मिक राजा माना जाता है और उसकी तख़्तनशीनी का विधान है।

2. *आतिश अदरन* की स्थापना इससे कम कठिन है इसके लिए चार प्रकार की अग्नि चाहिए। एक अथोरनन अर्थात् पादरी से एक रथेशतरन, वस्त्रयोसन तथा हतोकुशन से अग्नियाँ प्राप्त करके दो–तीन सप्ताह में आतिश अदारण की स्थापना कर दी जाती है। इस अज्ञारी में जहाँ किवला या गर्भ गृह होता है वहाँ अग्नि पोषित करने के लिए केवल पुजारी ही जा सकते हैं अन्य कोई नहीं। इस अग्नि की सुरक्षा और प्रदूषित होने से बचाना अग्नि उपासकों का एक गम्भीर सरोकार था।[6]

संदर्भ

1. Surti, B.S. - *Thus Spake Zarathushtra*, Sri Ramakrishna Math Mylapore, Madras, 1978, Page- 5.
2. ibid, Page No.-6
3. ibid, Page No.-11
4. ibid, Page No.-12
5. *The Holy Fire*, Gatha Ahuvaiti, Yasna 34.4, Page - 43
6. ibid, Gatha Ushtavaiti, Yasna, 43.9, Page (44-51)

नियायि

प्राचीन ईरानी धर्म *सितायि* प्रशंसा की प्रार्थना अर्थात् स्तुति है इसके विपरीत *नियायि* अभिलाषा पूर्ण करने या माँगने के लिए है।

अवेस्ता के अनुसार–आठ वर्ष से अधिक आयु के प्रत्येक व्यक्ति को कोष्टी बाँधकर खड़े होकर प्रार्थना करनी पड़ती है। नियायि खुर्शीद, मिहिर, माह, ऑबान, आतश के लिए है। आतिश नियायि प्रतिदिन अग्नि के निकट होने की स्थिति में पढ़ी जाती है। इसके अनुसार हे अहुर! मुझे बचाओ और पूर्ण पवित्रता और शक्ति दो! हे अहुर माज़दा! प्रसन्न हो! हे आतश! अहुर माज़दा के पुत्र हे दाता!

महानत्तम मज़द तुम्हे प्रणाम! हे आतर! तुम्हे माज़दा ने बनाया। तुम्हें वैभव और कीर्ति प्राप्त हो! तुम आर्यों की शान हो! तुम कवियों की शान हो! राजा खुशरवाह तक, खुशरवाह की झील तक, मज़द द्वारा निर्मित आसनवन्त पर्वत तक, माज़द द्वारा निर्मित कायकस्त झील तक तुम्हारी शान हो! उस आतर को जो कल्याणकारी है, जो योद्धा है, जो पूर्ण कीर्ति के स्रोत तक ईश्वर है, जो दुखों को भरने के स्रोत का स्वामी है उस आतर को जो *नैरियोसंघ* और अन्य अग्नियों के साथ शासकों की नाभि में वास करता है। मैं इस यज्ञ और आवाहन और पवित्र भेट, कल्याणकारी भेंट,आपको करता हूँ। हे आतर! आप भी यज्ञ और आवाहन के योग्य है और आप सभी घरों में यज्ञ और आवाहन प्राप्त करें। वे मनुष्य जो आपकी उपासना, यज द्वारा

करता है और अपने हाथ में पवित्र लकड़ी बरेसम, गोष्ट, और होम, कुचलने वाला मूसल लेकर यज्ञ करता है उसका कल्याण होता है। आपको सही मात्रा और गुण वाली लकड़ी प्राप्त हो, आपको सही सुगन्ध मिले, आपको सही भोजन मिले, आपको सही *उपसऐनि* (आहुति) मिले। आप इस घर को संरक्षण देने के लिए पूर्ण रूप से विकसित हो। आप इस घर में सदैव प्रज्ज्वलित रहे, प्रदीप्तमान रहे। एक लम्बे समय तक जब तक दुनिया की पुनः स्थापना हो। हे आतर! मुझे जीवन्त कल्याण जीवन और जीवन की पूर्णतम दे! ज्ञान, समझदारी, वाक् चातुर्य, आत्मा की पवित्रता, अच्छी स्मरण शक्ति दो और वे समझ, बूझ दीजिए जो बढ़ती जाती है। और जो अध्ययन से प्राप्त नही होती है और मुझे पुरूष योग्य साहस दीजिए! मुझे दृढ़ता, जागृति और जागरूकता केवल तीसरे पहर और रात्रि में सोना, बिस्तर को शीघ्र तजना, जैसी शक्ति दीजिए! मुझे ऐसी संस्कारी संतान दीजिए जो देशों और समाजों पर शासन कर सके, संरक्षक हो! अच्छी बने और हमें नरक से मुक्त करें। जो अच्छी बुद्धि रखे वो संतान मेरे घर, मेरे शहर, मेरे देश, और मेरे साम्राज्य में बढ़ती जाये। हे आतर! मैं कितना ही अयोग्य हूँ, फिर भी मुझे पवित्र लोक में एक अच्छा स्थान दीजिए। मैं एक पुरुस्कार सुकीर्ति, और अखण्ड आत्मिक आनन्द प्राप्त कर सकूँ। आतर सदैव उसके पक्ष में बोलते हैं जो सांझ और सवेरे उनके लिए भोजन पकाते हैं। वे उनसे एक अच्छी भेंट की अपेक्षा करते हैं। आतर उन सभी के हाथों को देखते है जो उसके पास से गुजरते हैं। और यदि कोई उनके

लिए पवित्र लकड़ी या बरेसम या *हधानेपद* की डंडिया लेकर आते हैं और प्रसन्नता से उनको प्रस्तुत करते हैं। उन्हें आतर आशीष देते हैं। जो आतर के लिए दिन की रोशनी में ध्यानपूर्वक ईश्वरीय भाव से साफ़ करके प्रस्तुत करते हैं उन्हें आतर आशीर्वाद देते हैं कि तुम्हारे बैलों के झुंड बड़े, पुत्र बड़े, तुम्हारा मन, तुम्हारे संकल्पों की स्वामी बने, तुम्हारा जीवन प्रसन्नता से और आत्मिक आनन्द, तुम्हारी जीवन की रातों में प्रसन्नता बनी रहे। हे अहुर! तुम्हारी शक्तिशाली अग्नि जो कि उनकी सहायक है जो इसको सुख देता है। पर उनके प्रति शत्रुतता रखती है जो मनुष्य उसका नुकसान करता है तुम्हारी ऐसी अग्नि के गुणों से हमें बहुत प्रसन्नता होती है।

अग्नि जो है वे अदृश्य रूप सब जगह विद्यमान है किन्तु एक अन्य लकड़ी या पत्थर से घर्षण लेकर उसे जलाया जा सकेगा।

5. अग्नि को जैसा अर्पित किया जाता है वैसा ही मिलता है। संदल (चंदन) और खुशबू, सब ओर खुशबू फैलाती है किन्तु बहुत से जानवर इत्यादि जीव हत्या करके जलाते हैं जो पर्यावरण को दूषित करता है।

6. अग्नि की रश्मियाँ एक साथ जुड़ जाती हैं। उसी प्रकार सब मनुष्यों की आत्माऐं एक जीवित इंसान में विलीन हो जाती हैं।

सूर्य जो अग्नि का हिस्सा हैं वे समस्त अच्छे, बुरे, सुन्दर, कुरूप सभी पर चमकता है। अपनी पवित्र रोशनी से सड़ते हुऐ और अपवित्र कूड़े आदि को भी पवित्र कर देता है।

1. अग्नि की निरन्तर शोधित रश्मियाँ हमें जीवन की क्रियाशीलता, मृत्यु की निष्क्रमता को बताती हैं।

2. अग्नि निष्पक्ष है वे एक संत और पापी के बीच सेवा अन्तर नहीं मानते थे।

3. सभ्यता का आरम्भ अग्नि के विकास से हुआ। जब कोई मनुष्य सूर्य अथवा अग्नि की ओर अपना मुँह करता है तो वह असल में अहुर माज़दा की ओर माँगता है।

यास्न-34.4 की *गाथा अहुन्न वैति* में लिखा है। ''हे अहुर! तुम्हारी दिव्य अग्नि जो अर्स के माध्यम से विकट रूप में बढ़ी है उसे हम सत्यता से चाहते हैं गतिशील से भी तेज और महती बलवान यह हर समय विश्वासियों को सहायता प्रदान करती है। किन्तु माज़दा तुम्हारी अग्नि दुरात्मा और उनकी ईर्ष्या को देखते हुये भस्म कर देती है।''

इस प्रकार ज़रथुस्त्र ने पवित्र अग्नि अतर (अथर) की प्रशंसा की है।

परम्परानुसार ज़रथुस्त्र से भी 3000 हज़ार वर्ष पहले राजा होशांग ने अग्नि की खोज की थी। दैवयास्नी समुदाय (वैदिक आर्य) ने अग्नि को अपने धर्म में देव का दर्जा दिया और ज़रथुस्त्र के धर्म में अतर को अलौकिक और लौकिक तथा आध्यात्मिक पक्ष में एक विशिष्ट स्थान दिया। आध्यात्मिक कोटि में अतर को सर्वोच्च यज़ातो में (उपासनीय पूज्य) की श्रेणी में रखा गया है। *आतरा नियायेश* में ज़रथुस्त्र वहुमनो से पूछते हैं। कि मुझे गम्भीरता और भक्ति से किसकी प्रार्थना

करनी चाहिए और स्वयं ही उत्तर देते हैं कि आप की अग्नि को मैं सादर श्रद्धा अर्पित करता हूँ और सद्कर्मों के साथ अपने अन्तिम दिन तक अर्पित करूँगा। (गाथा उष्ठवैति, यास्न-43.9)

इसी *अतिश नियायेश अथरो अहुराहे माज़दाओं पुथ्रष्ठ* सम्बोधित करके अतर को अहुर माज़दा का पुत्र कहा गया है। लौकिक आधार पर अग्नि को अहुर माज़दा की सातवीं और अन्तिम रचना या कृति माना जाता है। जोकि *अमेषा स्पेन्ता अर्श वहीश्त* के संरक्षण में रहती है यह स्वदैदीप्यमान, पवित्र, स्वर व मुख, तथा पवित्र करने वाली है। अत: अग्नि प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में महत्व रखती है। ज़रथुस्त्र के धर्म में अग्नि अहुर माज़दा का एक जीवन्त प्रतीक है। सभी प्रार्थनाऐं अग्नि की ओर देखकर की जाती हैं।[1]

---

1. James Darmesteter - Sacred Books of the East Voll. XXIII, Part II, Varanasi, 1965, Page (349-361)

गाथा

यस्न-31, में ज़रथुस्त्र द्वारा विशिष्ट और व्यवहारिक धार्मिक पक्षों पर केन्द्रित होकर अहुद माज़दा को प्रार्थना की गयी है। एक ओर पवित्र अग्नि और पवित्र संस्कार को सामान्य अनुष्ठान में तो दूसरी ओर धार्मिक जगत में अहुर माज़दा की सबल और सामान्य उपासना की ओर है।

1. जहाँ धर्म परिवर्तन की बात है। वह महान राज्य की स्थापना के लिए प्रार्थना करते हैं। जिसके द्वारा वे झूठ तथा दैव उपासकों के रूढ़ीवादी और पिछड़े नकारात्मक चलन को समाप्त कर सकें।

2. अपने ध्येय की पूर्ति के लिए वह विवेकशक्ति और भविष्य में देखने की शक्ति के लिए प्रार्थना करते हैं। वे खगोलीय या नक्षत्रीय मंडल को ईश्वर के ज्ञान का प्रमाण मानते हैं जिसने अर्श और वहूमना को बनाया है। पुनः कहते हैं कि माज़दा वहूमना का पिता है और अर्श का जनक है और दोनों ही मनुष्य के कर्मों को नियन्त्रित करते हैं।

3. यस्न-31 में, अहुर से प्रार्थना करते हुये एक उग्र धर्म प्रचारक भाव से प्रार्थना की जाती है कि पवित्र अग्नि और पवित्र अनुष्ठानों के माध्यम से अहुर द्वारा दिये गये आदेश को मनुष्य की मानसिक तल्लीनता में स्थापित किया जाये जो अच्छी और बुरी शक्तियों के बीच में संघर्ष के लिए

आवश्यक है। इस यस्न के प्रसंग में पहले दो छन्दों में उद्द्योषक कहता है कि जो सत्य व उद्घोषित कर रहा है उसे माज़दा के श्रद्धालु अच्छे मन से अति उत्तम सत्य मार्ग पर शीघ्र अति शीघ्र ग्रहण कर रहे हैं। किन्तु शत्रु और उसको बेमन सुन रहा है किन्तु यदि उद्घोषित सत्य लोगों के समझ नहीं आ रहे हैं तो वे अहुर माज़दा द्वारा दिये गये विशेष नियम और आध्यात्मिक नेतृत्व के शक्तियों के उपयोग से उसे समझाने का प्रयास करेगा। क्योंकि यह धार्मिक नियम सत्य की विजय का कारण बनेगा। फिर वह अहुर को सम्बोधित करते हुये कहता है। हे अहुर! संघर्षरत् शक्तियों के बीच तूने जो हमें दर्शन की मानसिक ज्योति दी है जो कि तेरी पवित्र आत्मा, (ईश्वरीय तत्व) तेरी अग्नि और तेरी सत्यता (सत्य तत्व) के द्वारा प्रदत्त दी गयी है और जो तेरे द्वारा घोषित किया गया है जिससे हमें ज्ञात हो सके जो तेरे मुख द्वारा या तेरी जिह्वा द्वारा कहा गया है। जो हमें उत्साह और अन्तिम सन्तुष्ट का निर्णय है उस महती सत्य को मैं सभी जीवित मनुष्यों में विश्वासियों बना सकूँ।

यस्न–34, में पैग़म्बर द्वारा कहा गया है कि वह जिस प्रकार के भेंट प्राप्त करता है उसी के परिमाण में प्रसाद देगा। जो भेंट दी जाये उससे अभिप्राय फल अथवा पशुबलि नहीं है बल्कि पवित्र श्रद्धालुओं के कर्मों से अभिप्राय है जिनकी आत्मा सत्य, उपासना, प्रार्थना और स्तुति से एकीकृत है क्योंकि कोई पवित्रता बिना

अनुष्ठानिक समयबद्धता और नियमता के बिना सम्भव नहीं है अत: दान और श्रद्धा के बिना कोई अनुष्ठान भी पूर्ण नहीं है। ईश्वर को मांस की बलि अर्पित करने को रित् और दैवीय समप्रभुता के समर्थन के लाभ के लिए उपयोगी बताया गया है। इस यास्न के चौथे छन्द में अग्नि का उल्लेख है!

(ऐघसपरवरिस्न वमिन फ्ररूहनिह)–''जहाँ अग्नि को एक मित्र देव या चूल्हे या वेदी की अग्नि के अधिष्ठाता के रूप से अधिक एक मन्दिर की अधिष्ठाता के रूप में सम्बोधित या प्रस्तुत किया गया है। उस वेदी की अग्नि की भाँति से भिन्न यहाँ अग्नि को आन्तरिक, आत्मिक शक्ति और सांसारिक आशीषों के विभिन्न रूप प्रदान करने वाले और वज्र के रूप में प्रतिशोध निकालने की शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है या स्वीकारा गया है। छन्द के शब्दों में हे अहुर! हम इसी प्रकार तेरी अग्नि की जो कि सत्य तत्व के माध्यम से शक्तिशाली है बहुत त्वरित है, सर्वाधिक शक्तिशाली है की उपासना करते हैं। यह अग्नि जिन घरों में प्रसन्नता से स्वागत पाती है वहाँ आश्चर्यजनक माध्यम से बहुत मदद देती है। जो तेरी अग्नि से प्रेम नहीं करते हैं उनके लिए वे निरन्तर हानि कारक हो। जैसे कि वह कोई अस्त्र हो।

यस्न–43 में छन्द 4 अहुर माज़दा से कहते हैं ''कि यह तुम्हारी अग्नि प्रज्वलित है उसके द्वारा सत्य में निहित रहने वाले की शक्ति पोषित रहती है'' और हे! अहुर माज़दा मैने आपको एक वरदाता के रूप में माना है। और आपने मुझसे

पूछा कि तुम क्या पाना चाहते हो। तो मैंने तुम्हारी अग्नि के लिए एक स्तुति और पवित्रता की कामना की, और जब तक मुझमे शक्ति और मनन करने की इच्छा रहेगी मैं इसी वरदान के लिए प्रार्थना करता रहूँगा और इसकी पवित्र शक्ति के लिए तुम्हारे श्रद्धालुओं के प्रति नियोजन करता रहता रहूँगा।

यास्न–46 छन्द–7 वक्ता अपना ध्यान अग्नि की ओर केन्द्रित करता है। संस्कारिक अग्नि, आंतरिक सौन्दर्य (पवित्रता) का बाहरी प्रतीक है। यदि यह प्रतीक न हो तो सामान्य जन को किसी तरह ध्यान केन्द्रित करने और श्रद्धा केन्द्रित (प्रणाम करने) से तो कुछ नहीं होगा। अत: वक्ता अत्यधिक भक्ति भाव से प्रकट करता है कि तूफानों में तुम्हारे और तुम्हारी ज्वाला के अतिरिक्त मुझे किसने सामान्य जनों के लिए शक्ति दायक (प्रेरक) बताया है। हे अहुर माज़दा तुमने उन सभी के संरक्षण के रूप में समक्ष रहा है जबकि वह दुष्ट अभी भी मुझे संतुष्टता से पकड़े हैं। मेरे पास तुम्हारे, तुम्हारी अग्नि और *वहूफ्रायन* के अतिरिक्त क्या है। जिसके द्वारा वो कृत किये जाते हैं, जिसके द्वारा शासक और सुशासन सुरक्षित रहता है।

यास्न–47, छन्द–6 की व्याख्या में एच.एल. मिल्स का मत है कि भव्य प्रशंसा और उत्तम प्रार्थनाऐं भी अनुष्ठान के सहयोग से निर्थक है। अत: अनुष्ठान अति आवश्यक है। किन्तु आपकी अग्नि, ईश्वर ने दोनों को प्रदान किया है श्रद्धालु और धर्महीन विरोधियों को है और इस संदर्भ में ईश्वरीय वरदान उन्हीं को प्राप्त होंगे जो उसकी पवित्रता और अर्श को बढ़ाते हैं क्योंकि यह पवित्रता के निकट जो कोई

आता है और उससे रोशनी की मांग करता है वह (यास्न–30 छन्द–1) (यास्न–45, छन्द–1) उसको आश्रम प्रदान करती है और उसका ईश्वर में विश्वास दृढ़ करती है–(यास्न 31, छन्द–3) अनुवादित पाठ के अनुसार और यह वस्तुऐं ''हे! अहुर माज़दा तू उनको देगा जो तेरी पवित्रता और सत्य तत्व में अनुष्ठान, नैतिक सत्यतत्व में बढ़ोत्तरी करेंगे तू उन्हें अपनी असीम परमात्मिक तत्व और अपनी अग्नि से प्रदान करेगा।''

(यास्न,–51)– में मिल्स के अनुसार–धर्म श्रद्धालुओं के प्रति कुछ निर्देश दिये गये हैं जिसमें मुख्यत: यह भाव है सर्वशक्तिमान समप्रभु अहुर का अपने श्रद्धालुओं के मन तथा मस्तिष्क पर राज्य स्थापित है। इसके द्वारा उसकी शक्ति हर अच्छी वस्तु प्रदान करेगी और हर बुराई का दमन करेगी। रचयिता द्वारा प्रार्थना की गयी है कि वे बिना क्षण अवरोधक के निरन्तर अहुर की सत्ता स्थापित करने में प्रयत्न करें। वे अहुर के आशीष तथा संरक्षण की याचना करता है और अहुर के प्रतिनिधि के रूप में *आरममैति* के नाम का उल्लेख करता है जोकि ईश्वरीय सत्ता को स्थापित करें। रचयिता के अनुसार दैन्य ना तो रहस्यमयी है न जादूभरा। उसकी शक्ति तो समस्त श्रद्धालु जन के बीच विज्ञप्त है। इसीलिए सभी लोग अनेक अवसरों पर एकत्रित होकर गाथ्न/गाथ का पाठ सुनते हैं। रचयिता ने आगे अहुर माज़दा को सर्वोच्च कल्याण और सबसे गहरा नाशकारी परिणाम देने वाला बताया है।[1]

---

1. Mills, L.H. - Sacred Books of the East, Vol. XXXI, Motilal, Delhi, 1981, reprint Page (1-194)

यास्न

यास्न का अर्थ उपासना है, जिसके अन्तर्गत यज्ञ, सम्मिलित है। यह *अवेस्ता* या ज़रथुस्त्र के अनुयायियों का मुख्य साहित्य है जो अनुष्ठानों से जुड़ा है इसके बीच में गाथ गाये जाते हैं। *वेन्दीदाद–सादह* के अन्तर्गत *विस्पर्द* को भी पढ़ा जाता है।

यज्ञ शुरू होता है तो याज्ञिक कहता है। कि मैं संकल्प करता हूँ कि मैं अहुर माज़दा की सेवा में अपना यस्न पूरा करूँगा। (यास्न–1)

वह अपने यास्न के पवित्र मन (वहू) को, अर्श को,..... (अनेकों उल्लेखों के उपरान्त) (छन्द–2)

अहुर माज़दा की अग्नि को समर्पित करता हूँ। यहाँ कहा गया है कि अहुर माज़दा की पवित्र अग्नि में *अमेषा अस्पेन्ता* की भाँति हमारे कल्याण के लिए सर्वाधिक यत्न किये हैं।

पुनः अग्नि को अहुर माज़दा का पुत्र कहा गया है। यास्न को अग्नि और सभी प्रकार ज्वालाओं की अग्नि को समर्पित किया गया है। (यास्न–1, छन्द–12)

यह याद दिलाते हुये कि दुष्टता से बदला लिया जायेगा वे रचयिता अहुर से प्रार्थना करता है कि वे कोई ऐसा लक्षण दर्शाये या अपनी पवित्र अग्नि से ऐसा औज़ार जोकि न्याय की धार पर झगड़ो का निष्पादन करें। और मैं संकल्प करूंगा कि आपकी ज्वलन्त् अग्नि के माध्यम से, हाँ मैं संकल्प करूंगा कि न्याय की

तलवार जो इस्पात से निर्मित है वह दोनों दुनिया के लिए बनी है और हे! अहुर माज़दा वह काश आप उसके द्वारा बुरे लोगों को घायल करें और आपके संत जन प्रसन्न और समृद्ध हो! (यास्न, 51, छन्द-9)

यज्ञ अभी चल रहा है और उसी के मध्य याज्ञिक द्वारा छन्द-4 में उद्घोषित किया जाता है कि मैं इस बरिष्मान के साथ, प्रशंसा करते हुये, सर्वश्रेष्ठ और सबसे सत्यता से पूर्ण, का आवाहन करता हूँ और उसके साथ अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि को प्राप्त करना चाहता हूँ। (यास्न-2)

मैं इसी संदर्भ के साथ अग्नि जो कि अनुष्ठानों की रीति या अनुष्ठानों की सत्ता का पवित्र स्वामी है उसके साथ उसकी सभी अग्नियों के प्रति आवाहान किया गया है उल्लेखनीय है। (छन्द-11)

यस्न 3.31-2, और मैं इच्छा करता हूँ कि पवित्र लकड़ी और सुगन्ध व मेरी स्तुति के साथ आप अग्नि अहुर माज़द के पुत्र संतुष्ट हो! यस्न 3.31-6, अनुष्ठानों के स्वामी रपित बिन तथा फ्रॉदाशफू ज़न्तुम तथा सच्चाई के साथ अहुर माज़दा की अग्नि का उल्लेख किया गया है। यस्न, 3.14- में भी अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि को यस्न द्वारा पूजित करने का उल्लेख है। इसी यस्न, 3.31-21 में अग्नि के संतुष्ट करने के लिए सुगन्ध सहित यस्त के साथ समर्पित किया गया है।

यस्न, 4.2- अहुर माज़दा की अग्नि को अन्य फ्रॉवर्शी, श्रौशा इत्यादि के साथ संतुष्ट करने के लिए समर्पित करने की बात है। यस्न, 4.9- में भी रपितबिन, फ्रॉदाशफू, ज़न्तुम के साथ अहुर माज़दा की अग्नि का उल्लेख है।

इसी प्रकार यस्न, 14.17– में अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि को सभी प्रकार की अग्नियों जिनके द्वारा यज्ञ सर्मपण, संतुष्टि और प्रशंसा की जा सकती है। उसके संदर्भ में उद्द्योषित किया गया है कि उनकी भक्ति की जा रही है। और इसमें से एक महान सेवा प्रदान करने वाले सेवक जिनके त्याग को अहुर माज़दा पहचानते हैं उसकी हम उपासना करते हैं!

यस्न, 6.....उपरोक्त की भाँति है यह .....की अग्नि को अहुर माजदा का पुत्र तथा अनुष्ठानों प्रक्रिया का पवित्र स्वामी कहा गया है। यस्न, 6.11 में वही बात है जो यस्न, 3.14– में थी। 6.18 में वही है जो कि यस्न–3.21 में कही गयी है। यस्न, 7.2, उसी प्रकार माज़दा पुत्र अग्नि को संतुष्ट करने के लिए यस्न 6.18– की बात कही गयी है। यस्न, 7.6– में माज़दा पुत्र अग्नि को उपरोक्त की भाँति है यह सिर्फ इसमें *अर्शवहिष्ट* का नाम जोड़ा है। यस्न, 7.14–में भी अग्नि को बलि देते हुए यस्न 6.11 की बात कही गयी है। यस्न, 7.21– पुनः यस्न 3.21 और 7.2 जैसी बात है। यस्न, XVII-इसमें अहुत माज़दा पुत्र अग्नि की उपासना की बात कही गयी है एक अग्नि की बात नहीं बल्कि अलग नामों की अग्नि का जैसे:-

(1) *वेऐज़ीसवंग*–जो माज़दा और शासक के समक्ष होती थी।

(2) *वोहू फ्रॉहान*–जो मनुष्य और जीवों के शरीर में बसती है का अर्थ उनको उर्जा प्रदान करती है।

(3) *उर्वाज़िस्त*–जो पेड़ो और पौधों में होती है फिर अग्नि वाज़िस्त यामिनी बादलों में रहने वाली।

(4) *स्पेनिश्त* वह अग्नि है जो संसार में उपयुक्त है।

इसी यस्न के यज़्द के घराने से सम्बन्धित *नैरयसंघ* जोकि पूजा स्थल के बहराम से सम्बन्धित है और माज़्दा द्वारा निर्मित घरों में स्वामित्य रखने वाली अग्नि का उल्लेख है। साथ ही अहुर माज़्दा के पुत्र पवित्र अग्नि के अनुष्ठानों की व्यवस्था और समस्त अग्नियों की उपासना का उल्लेख है। यस्न XIIX.1 ज़रथुस्त्र अहुर माज़्दा से प्रश्न करते समय अग्नि का उल्लेख करते हैं और XIIX-3 में अहुर माज़्दा अग्नि को अपना पुत्र बताते हैं। *यस्न, XXII* जिसमें यज्ञ चल रहा है। जिसमें लकड़ी के टुकड़े, सुगन्ध और अपनी स्तुति द्वारा अग्नि को समर्पित कर रहा है। यस्न XX*II* ·*22* पुनः अग्नि को सम्बोधित किया गया है और ऐसे ही 26 में अहुर माज़्दा के पुत्र अग्नि पाज़्न्द और समस्त अग्नियों को सम्बोधित किया गया है। यस्न XXI*V* – *24.3* अग्नि को माज़्द द्वारा निर्मित उन सभी कल्याकारी वस्तु के द्वारा जिसमें सच्चाई के बीज छुपे हैं समर्पित किया है। पुनः लड़की और सुगन्ध तथा अग्नि के पिता अहुर माज़्द के द्वारा निर्मित सभी अच्छी वस्तुओं से भेंट की जाती है। यस्न, 25.1–में अग्नि को अहुर माज़्दा का पुत्र बताते हुये माज़्द द्वारा निर्मित अच्छी वस्तुऐं जिनमें समर्पित की गयी है। यस्न, 25.7–में और हम माज्द के पुत्र अग्नि की उपासना करते हैं और हम उन सभी अग्नियों की उपासना करते

हैं और पर्वत *उशीदारेण* (जो रोशनी रखता है) की उपासना करते हैं इसका अर्थ है वो सूर्योदय और या सूर्य अस्त का पर्वत है। यस्न, XXXV–*यस्न हफ़्तान्गहैती* इस यस्न में 7 अध्याय है जो गाथ के पश्चात् रचित है इसमें भाषा तो समान है परन्तु अभिप्राय: बदल रहे हैं यहाँ स्पेन्थ का मूर्तिकरण किया गया है। *अमेषा स्पेन्था, फ्रॉवशी* का नाम उल्लेख होता है और अग्नि की उपासना स्पष्ट है।

यस्न XXXVI- यह अहुर अग्नि को समर्पित यस्न है कि पहले श्लोक में ही स्पष्ट है

(I) ''ओ अग्नि! जो कि तेरी ज्वाला की लपट को गंदा करेगा उसको तू गंदा कर देगी।''

(II) एक मित्र के रूप में तू हमें उत्साह प्रदान करती है और हमारे महानतम कार्यों में हमारी मदद के लिए आ!

अहुर माज़दा की अग्नि जो कि अपने स्वभाव में बहुत दानशाली है सबसे ज्यादा इसलिए तुम्हारा नाम सभी नामों में शक्तिशाली है!

---

1. Mills, L.H. - Secred Books of the East, Vol. XXXI, Delhi, 1981, Page - 191.

यस्न–*L X I*

हे अग्नि! मैं तुम्हें बलि और श्रद्धा अर्पित करता हूँ! क्योंकि आप उसके हक़दार हैं।ओ! अहुर माज़दा के पुत्र आप माज़दा के उपासक के घर में सदा विराजमान रहे।[1] उस व्यकित को मुक्ति प्राप्त हो जो सत्यभाव आपकी उपासना करें अपने हाथ में लकड़ी, बरेसमन, गोश्त, तथा मूसल लेकर तत्पर हो और आप सदैव ही नियमों के अनुसार लकड़ी द्वारा पोषित की जा सके और आपको सदैव सुगन्ध पवित्र घी प्राप्त होता रहे।[2] और पूर्ण आयु की ओर पोषित होते रहे। अहुर माजदा के पुत्र अब आप ज्वाला बन जायें (रोशनी फैलाइऐ)। इस घर को और चमकाईए।[3] आप बढ़ते रहिए और शानदार तरक्की के लिए बढ़िए जब तक कि हे! अहुर माज़्द के पुत्र त्वरित चमक, त्वरित पोषण, त्वरित लाभ, अत्यन्त वैभव, अभूतपूर्व चमक अभूतपूर्व, धन सम्पत्ति के लिए एक विस्तारित मन और आत्मा, और समझ के लिए ज़बान (जिह्वा) मधुरता दीजिए और इसके बाद वो समझ जो निरनतर बढ़ती जा रही हो और भटकती न हो वो दीजिए, और बहुत समय तक चलने वाला पौरूष व शक्ति दीजिए, और मुझे ऐसा पुत्र दीजिए जोकि पहरे से हटता न हो और जल्दी जागता हो, और इसी तरीक़े से एक जाग्रत संतान दीजिए।[4] जो मनुष्य की सभाओं में न्याय संगत, वैध स्थितियाँ पुनः प्राप्त कर सकें। यह अपने प्रभाव, वचन और अपने प्रभाव और वचन (भाषण) से मनुष्यों को सभाओं में ला सके, और शक्ति में सम्पन्न हो चतुर बन कर लोगों को दमन से बचा कर

बहुत से अनुयायी प्राप्त करके जो कि मेरी तरह सम्पनन और कीर्ति में आगे बढ़ते जायें और विष, मेरे ज़न्त और मेरे प्रदेश.....[5]

एक ऐसा पुत्र जो दृढ़ और न्यायपूर्ण शासकों की भांति देश को आदेश पारित कर सके![6] और अहुर माज़दा मुझे दे! विष के द्वारा शिक्षक मुझे दिए जायें अभी और आगे भी बहुत से जो मुझे दिव्य रोशनी प्रदान करें और सन्तों की उज्जवल जीवन प्रदान करें और मुझकों मिले अच्छा पुरस्कार, अच्छा नाम, अच्छा आत्मिक उद्धार की तैयारी।[7]

यस्न, LXI.7- अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि उन सब के बारे में बताती है जो सुबह और शाम का भोजन बताते हैं इन सब के साथ वह प्रार्थना करता है कि ओ स्पेतमा! कि वो उसकी व उसके स्वास्थ्य की सुरक्षा करें।[8]

यस्न, LXI.8 -अहुर माज़दा की अग्नि इस चेतावनी द्वारा उन सभी को सम्बोधित करती है।[9] जो सुबह और रात को भोजन पकाते हैं इन सभी से इच्छा करता है कि हे! स्पेथमा हमें आप अच्छी सुरक्षा, अच्छा स्वास्थ्य और सच्चा प्रशंसक (मोक्ष को सुरक्षित करने के लिए) उसकी आप सुरक्षा करें और जो मुझे प्राप्त करना चाहते हैं[10] उसके दोनों हाथों में अग्नि को उत्सुकता पूर्वक देखता हूँ।[11] और जो एक साथी को उसके साथी के पास लाता है। इस प्रकार मैं उससे कहता हूँ, ऐसा आदमी जो स्वतंत्रतापूर्वक घूमता है और जो घर की सुरक्षा करता है। हम प्रदाता अग्नि की पूजा करते है।[12] अहुर माज़दा की अग्नि जो तेजी से रथ को

हाँकने वाले सारथी के रूप में पूजित है और अगर यह आदमी जो उसे लकड़ी रीतिपूर्वक और पवित्र भावना के साथ लाता है अथवा वह बरेसम की लकड़ी पवित्रता के साथ फैलाता है या *हथानेफ़ता* के पौधे का प्रयोग करता है इसके बाद अहुर माज़दा की अग्नि उसे आशीर्वाद प्रदान करती है।[13] उसका अहित नहीं करेगी।[14] उसे प्रसन्न करेगी। अहुर माजदा की अग्नि पुनः सम्बोधित करती है कि तेरे साथ गाय का एक झुंड़ हो, बहुत सारे आदमियों की भीड़ हो, तेरे साथ एक सचेत मस्तिष्क रहे, और उसके साथ सचेत आत्मा भी।[15] यह पवित्र अग्नि का वरदान है कि जो उसके लिए अच्छी तरह सूखी हुई लकड़ी लाते हैं जो जलाने के लिए उपयुक्त हो, जो पवित्र कर्मकाण्ड के द्वारा पवित्र की गयी हो। पानी में तैरने के लिए और साथ–साथ पानी की तरंगों की थाह लेने के लिए, उस विक्षोभ की शांति की इच्छा के लिए, अहुर माज़दा की अग्नि कहती है कि मैं प्रशंसक के पास पहुँचने की इच्छा रखता हूँ अपनी पूर्ण प्रशंसा के साथ![16] यस्न, LXV.12 इसमें भी अग्नि को अहुर माज़दा का पुत्र सम्बोधित किया गया है।[17] यस्नए LXV 13- में अन्य दिव्य शक्ति के साथ में भी उसे पवित्र जल, और भूमि का वरदान माना गया है।[18] यस्न, LXVI- अहुर माज़दा की अग्नि को अनुष्ठानों का महान स्वामी कहा गया है।[19] यस्न, LXXI.23- में भी अग्नि अहुर माज़दा का पुत्र हवन पवित्र, अनुष्ठानों का प्रमुख स्वामी है कहा गया है।[20]

विस्पर्द–5 ने पुनः अग्नि को अहुर माज़दा का पुत्र सम्बोधित करके बरेसमन ज़ओद्र, जनेऊ और पवित्रता से फैलाकर भेंट किया गया है।[21]

उल्लेखनीय है कि अन्य प्रसंगों की भाँति अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि के उल्लेख के निकट ही पवित्र जल का उल्लेख भी किया जाता रहा है। यहाँ पर अपान्पात जल के पुत्र की उपासना करना त्वरित ही किया गया है।

विस्पर्द XI.2-में ताज़े दूध को अर्पित करने की बात कही गयी है इसमें म्याज़द अर्थात पत्थर जोकि सृष्टि की सबसे पुरानी वस्तु है। पत्थर के मूसल और पुनः लोहे के मूसल का उल्लेख है आगे पत्थर और लोहे के मूसलों को ह्वोम–जल चढ़ाने का उल्लेख भी मिलता है इसके बाद अग्नि का उल्लेख मिलता रहा है।[22]

विस्पर्द XI.11 में 1 से 6 तक जो आहुतियों भेंट दी गयी हैं वो सभी प्रार्थना समस्त पवित्र सृजित सृष्टि के प्रति श्रद्धा उसके प्रति त्याग उसकी प्रशंसा और उसकी संतुष्टि के लिए किया गया है, ऐसा घोषित किया गया है। विस्पर्द, XI.16 में भी अग्नि के संदर्भ कही गयी है।[23]

विस्पर्द, XVI.1- के अन्तर्गत अग्नि को कई रूप में पूजित किया गया प्रथम अहुर माज़्द के पुत्र अग्नि के रूप में दूसरा उस यज़्दो के रूप में जिसके अन्दर अग्नि का बीज है और तीसरा उन रश्नु के रूप में जो अग्नि भी छिपाये हैं एक अर्थ में ये रश्नु अग्नि की पूजा को प्रचारित करने की शक्ति रखते हैं या फिर दूसरे अर्थ में अग्नि को बुझने से रोकने की क्षमता रखते हैं। एक तीसरे अर्थ में यह अग्नि की भाँति चमकदार है। यह विस्पर्द का अंश वेन्दीदाद–सादह के अन्तर्गत *हफ़्तान्गहैती* के साथ पठनीय प्रतीत होता है।[24]

विस्पर्द, XIX.2- के अन्तर्गत हम उन पशु झुंडों के प्रति यज्ञ करते हैं जिनके पास अग्नि और उसके वरदान है इसका अर्थ भ्रामक है, और विस्पर्द के सम्पादक ने अग्नि निर्मित को अग्नि से निर्मित सम्पन्नता और समृद्धि से जोड़कर किया है।[25]

इस अफ़रीनग़ान में व्यक्ति स्वयं को माज़्द का पुजारी और ज़रथुस्त्र के समप्राय का अनुयायी जो कि रपितबिन अहुर माज़दा अर्शवहिस्त के जिनका उल्लेख किया है के साथ अग्नि का भी अनुयायी है।[26]

ईरान में अग्नि–वेदी के निर्माण में वैदिक चिति या अग्नि वेदी से भिन्नता पाई गयी। मेरी बॉयस के अनुसार–ईरानी अग्नि वेदी एक वेदी न होकर अग्नि धारक के रूप में निर्मित होती थी जिसके भीतर अग्नि प्रज्जवलित रहती थी। एक विचार में यह यज्ञ–कुण्ड की भाँति मानी जा सकती है किन्तु उससे निर्माण मे नितान्त भिन्न थी क्योंकि ईरानी *अग्नि–वेदी* कुण्ड नहीं अपितु एक उच्च सोपान (पैनिस्टल) या चौबूतरे जैसा स्थापित होता था। इस स्थापत्य के पुरातात्विक प्रमाण मिलते हैं और सासानी काल के सिक्कों और सील मोहरों पर भी चित्र देखा जा सकता है। यूनानी क्लासिकी साहित्य में अग्नि–मंदिरों का विवरण मिलता है। जहाँ अखण्ड–ज्योति जली रहती थी। सिक्को पर अग्नि–वेदी कई सोपानों में बनी या कई स्तर वाले निर्माण को प्रदर्शित करती है।

अग्नि की उपासना का प्रमाण ज़रथुस्त्र के धर्म और उसके अनुष्ठानों का प्रमाण माना जा सकता है। सम्भवत: अग्नि की उपासना घरेलू चूल्हे के प्रति जुड़ाव के कारण भी हख़ामनी काल से पूर्व वर्ष 750 ई0पू0 से 600 ई0पू0 तक हमादम के निकट टेपेनूसेजॉन की एक अग्नि-वेदी मुख्य मंदिर में प्राप्त हुई। यह चार सोपानों में बना है। जिसके ऊपर एक कम गहरा अर्ध कड़ाहीनुमा अग्नि-कुण्ड है। इसकी कम गहराई सिद्ध करती है कि इसमें निरन्तर ज्योति नहीं जलती थी (यह ईरान की प्रारम्भिक अग्नि वेदीयों में से है) इसी तरह फ़ार्स में पसरगादे ने चौकोर चूने प्रयोग से अग्नि-कुण्ड निर्मित होने का प्रमाण है। इसी प्रकार किन्तु भिन्न आकृति के अग्निधारक वेदियाँ सिस्तान के दहान-ए-ग़ुलामन, तुर्कमेनिस्तान अलतिपेदिश, अलतिनपेते न0-10 तथा मध्य तुर्की में पुनियान में अग्नि-वेदीयों, के प्रमाण मिले हैं। किरमान शाह में ख़करीज़ स्थल से 400 सोपानों वाला सैण्डस्टोन (पत्थर) का अग्नि-स्तम्भ प्राप्त हुआ है। जो कि हख़ामनी से ससानी काल के बीच का माना जाता है। वाक्षु नदी के दाहिने तरफ पर तख़्त संगीन के उत्ख़ननो में मंदिर के दो उत्ख़नो में दो कमरो में चौकोर अग्नि-वेदी मिली है। अफ़ग़ानिस्तान के सुर्ख़कोतल में अग्नि-वेदी पर पक्षियों के चित्र मिलते हैं। कुज़िस्तान में सूसा के उत्ख़नन में एक मंदिर मिला है जिसके चार स्तम्भों वाले मुख्य कक्ष में मध्य में वेदी की सम्भावना बतायी जाती है।

मेरी बॉयस को ईरान के प्रारम्भिक अग्नि पुरावेदता के रूप में माना जाता है।

साहित्य साक्ष्य और अभिलेखीय साक्ष्य अग्नि उपासकों का प्रमाण करते हैं। शाहपुर प्रथम और उसका उच्च पुजारी किरदर के अभिलेख तथा तत्कालीन पुस्तक नामा-ए-तनसार में कहा गया है कि ससानी शासन की स्थापना के लिए स्थानिक वांशिक अग्नियों को ध्वस्त किया गया था। इसका अभिप्राय: यह हो सकता है कि ससानी शासक ने कि अग्नि स्थापना स्थानिक राज्यों को एक साम्राज्य में जोड़ने के लिए उठाया गया क़दम था। आतश या नयी अग्नियों की स्थापना के द्वारा विगत् चली आ रही मूर्ति पूजा को ध्वस्त कर अग्नि पूजा स्थापना ससानी काल की एक विशेषता थी। ससानी कालीन पहलवी पुस्तकों में पवित्र अग्नियों का उल्लेख है। (1) पारथियाँ में अदुर वुरज़ेन मिहिर, फ़ार्स में अदुर फ़र्नबाग़, तथा मीदिया (अज़र वैज़ान में तख़्त-ए-सुलेमान नामक स्थल है) में अदुर गुस्नास्फ़। अधिकांश विद्वान इन तीनों पवित्र अग्नियों को ससानी काल से पहले से विद्यमान मानते हैं और सम्भवत: यह ज़रथुस्त्र की मिथक से जुड़ी थी किन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

सिपनाम नामक विद्वान ने ससानी काल के 55 अग्नि मंदिरों की पहचान की है। जब कि कहा जाता है कि इनकी संख्या अनेक थी। ख़ुसरो द्वितीय परवेज़ ने स्वत: 353 अग्नि मंदिर निर्मित किये थे।

सिपनाम और यमामोतो ने मंदिरों के स्थापत्य का विवेचन किया है और बताया कि यह चौकोर होते थे जिनकी प्रत्येक दीवार में (आर्च) ताक बने होते थे। और मंदिर के ऊपर एक गुम्बद बनी होती थी जिसमें पवित्र अग्नि जलती थी। कुछ मंदिर खुले चाहर ताक और कुछ ढके आतर-कदा के रूप में बनते थे। वर्तमान ससानी काल का तख़्त-ए-सुलेमान प्रसिद्ध मंदिर है। अग्नि पूजा की खुले (आकाश के तले ससानी काल की) सबसे पुराने नमूने फ़ार्स के नक्श-ए-स्तम्भ के जुड़वा अग्नि वेदियाँ हैं।[27]

संदर्भ

1. Mills L.H. *The Zend Avsta, Sacred Books of the East*, Vol. XXXI, Delhi, 1981, Page -195.
2. ibid, Page No-196
3. ibid, Page No-199
4. ibid, Page No-203
5. ibid, Page No-205
6. ibid, Page No-214
7. ibid, Page No-258
8. ibid, Page No-270
9. ibid, Page No-271
10. ibid, Page No-272
11. ibid, Page No-274
12. ibid, Page No-276
13. ibid, Page No-277
14. ibid, Page No-281
15. ibid, Page No-284
16. ibid, Page No-314

17. ibid, Page No-315

18. ibid, Page No-319

19. ibid, Page No-320

20. ibid, Page No-331

21. ibid, Page No-344

22. ibid, Page No-350

23. ibid, Page No-351

24. ibid, Page No-358

25. ibid, Page No-360

26. ibid, Page No-(367-375)

27. Mark Garrison - *Fire Altars*.

चतुर्थ अध्याय

हिन्द – ईरानी धार्मिक सम्मिश्रण में अग्नि

मग धर्म

भारतीय स्त्रोत के आधार पर मगो के दो वर्ग प्रसिद्ध थे। प्रथम वर्ग मग कहलाया, जो ब्राह्मण की तरह सामाजिक/धार्मिक कार्य करता था, दूसरा वर्ग मिहिराग्नि उपासक होकर समाज में प्रसिद्ध था। मग शब्द यूनानी भाषा के मगुस, मगोस से प्राप्त हुआ है। मागी विचारों का प्रसार ईरानी राजधर्म में हुआ।[1] ससानी काल में मग ईरान के सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक कार्यों में महत्वपूर्ण स्थान रखते थे। छठीं शताब्दी ई०पू० ईरान में मगों का एक संघ स्थापित था और मग वहाँ के राजनैतिक, सामाजिक जीवन के मुख्य आधार माने जाते थे।[2] क्योंकि मगों द्वारा ही राजकुमारों को शिक्षा–दीक्षा प्रदान की जाती थी। मागी लोग ईरानी समाज के महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में प्रसिद्ध थे।[3]

ज़रथुस्त्र की मज्जावादी विचारधारा और मगो की स्थिति से ज्ञात होता है कि मग लोग मज्जावादी विचारधारा में व्याप्त होते चले गये। हेरोडोटस के मतानुसार ईरानी धार्मिक अनुष्ठान को सम्पन्न कराने का श्रेय मगो को ही जाता है।[4] मग लोगों का समाज में शक्तिशाली होने का एक मात्र कारण यह भी है कि वे धर्म के कार्य में सर्वोच्च तथा राज्य के न्याय और वित्त का आधिपत्य भी रखते थे।[5] चूँकि धर्म से जुड़ा हुआ व्यक्ति समाज का महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है। क्योंकि वह राज्य तथा समाज दोनों से ही अधिक सुविधाओं का उपभोग करता है। ईरान की आरम्भिक अवस्था में पुरोहित *(अथ्रवन)* को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। *अथ्रवन*

अतर (अग्नि) से उत्पन्न माना गया है।[6] जो अग्नि को पूजने वालों की ओर संकेत करता है। ईरानी धर्म में मगों के बढ़ते प्रभाव के कारण *(अर्थवन)* शिथिल होते चले गये। अग्नि की पूजा करने वाले *(अर्थवन)* की जगह मगुस (मगु) अर्थात् मगों ने ले ली और समस्त धार्मिक कर्मकाण्डों को सम्पन्न करने के लिए मग पुरोहित होते थे।[7]

मग धर्म का उद्‌भव हखामनी काल से ही माना जाता है। ईरानी समाज के समस्त धर्मिक कर्मकाण्ड का आयोजन मग की उपस्थित के बिना नहीं होता था।[8] मगो की अनुपस्थिती के बिना कोई पूजा कार्य सम्पन्न नहीं होता था[9] धर्म के क्षेत्र में मागी वित्त तथा न्याय व्यवस्था का कार्य सम्पन्न करते थे।

मग धर्म या मगो के धार्मिक कार्यों का वर्णन निम्नवत् *वेन्दिदाद*[10] से प्राप्त होता है जो धार्मिक कर्मकाण्डों के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। पूजा का कार्य आठ चरणों में बँटा हुआ था जो आठ पुरोहितों द्वारा सम्पन्न किया जाता था।

1. पुरोहित *ज़ओतर*–जो गाथा पदो का उच्चारण करता था।

2. पुरोहित *हावनम*–एक विशेष पौधे से हओम (सोम) रस तैयार करता था। तैयार रस धार्मिक कर्मकाण्ड का विशेष अंग माना जाता है।

3. पुरोहित *अतरबख़्श*– जो पवित्र अग्नि को प्रज्जवलित व अग्निवेदिका की

सुरक्षा एवं सफ़ाई व्यवस्था का कार्य करता था। मन्त्रोच्चार के समय *ज़ओतर* की सहायता प्रदान करना। पुरोहित *अतरबख़्श* द्वारा तीन प्रकार की सफ़ाई की जाती भी, शेष कार्य *फ़्रबएतर* करता था।

4. पुरोहित *फ़्रबएतर*–पूजा में काम आने वाले उपकरणों का रख–रखाव का भी कार्य करता था।

5. पुरोहित *अस्नतर* – हरओम (सोम रस) को साफ़ करके छानना था।

6. पुरोहित *रथविस्कर* – हओम को दूध में मिलाकर मिश्रण तैयार करता था।

7. पुरोहित *अब्रेत* – पूरे आयोजित कार्यक्रम में जल की व्यवस्था करता था। इस पुरोहित को *दानजव्वाज़* भी कहते थे।

8. आठवां पुरोहित *स्त्रओशवरेज़,* जो पूरे पूजा कार्य की देख–रेख करता था।

इस प्रकार मागी धर्म और ईरानी धर्म की संस्कृति अग्नि–पूजा और सूर्य–पूजा को महत्व देते थे। मगो ने *मिथ्र* की उपासना सूर्याग्नि उपासना के रूप में प्रचलित की थी।[12] मागी धर्म, सूर्याग्नि पूजक होकर भी आर्यों के धर्म देवपूजक से अलग था। मागी धर्म मूल्यत: भारतेरानी (भारत और ईरानी) देवता मित्र–*मिथ्र* के रूप में व्याप्त था मागी संस्कृति के प्रभाव से भारत में सूर्य की विशिष्ट पूजा परम्परा तथा विभिन्न संस्कारों का उद्‌भव मागी धर्म के तत्वों के साथ हुआ। मागी धर्म के

अनुसार जो वैदिक रूप से प्रस्तुत किया गया है कि सूर्य की उपासना प्रात: मध्याह्न एवं सायं सूर्य को अर्ध्य देना चाहिए। सूर्य अर्ध्य के मंत्रों से सवितृ मंत्र का भी उपयोग करना चाहिए। क्योंकि इस परम्परा का अनुसरण मागी धर्म में मगों द्वारा किया गया था।[13]

मागी धर्म में मृत्यु के पूर्व सूर्य-उपासना, पूजा आराधना करते समय मुँह का ढंका होना यह सारी विधाऐ मागी धर्म में प्रचलित थी जो ईरानी मागीओ ने मज्जावादी धर्म से ग्रहण किया था। मग धर्म के अनुसार मागी सूर्य उपासना के बाद ही भोजन ग्रहण करेगा।[14]

इस प्रकार मागी धर्म में अनेक परम्परा का समावेश था और आज इस परम्परा को पारसी समाज में देखा जा सकता है मगो की प्राचीन परम्परा शवो को खुले स्थान पर छोड़ देना और पक्षियों और जानवरों द्वारा उस शव का भक्षण करना यह परम्परा आधुनिक पारसियों में आज भी पायी जाती है अत: स्पष्ट है कि प्राचीन मागी प्रभाव आज आधुनिक ईरानी धर्म या पारसी धर्म में प्रचलित है।[15]

संदर्भ

1. रॉय, गीता–शाकद्वीपीय मग संस्कृति, लखनऊ, 1996, पृ०–1,2
2. वही, पृ०–20
3. वही, पृ०–22
4. वही, पृ०–23
5. वही, पृ०–23
6. वही, पृ०–10
7. वही, पृ०–22
8. वही, पृ०–34
9. वही, पृ०–43
10. *वेन्दीदाद*–5.161, ई0आर0ई0 प्रीस्टहुडईरानियन, खण्ड–10, पृ०–(319–322)
11. पूर्वोक्त, पृ०–71, 19, 21
12. जी०एम० पाटिल,–प्रीस्टहुड इन *अवेस्ता* एण्ड *ऋग्वेद,* बी.डी.सी.आर. आई. खण्ड–18, पृ०–225
13 मित्र, राजेन्द्र लाल–इण्डो आर्यन्स, खण्ड–2, पृ०–116
14. स्पूनर, डी०बी०–द ज़ोरोस्ट्रीयन पीरियड ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, जे०आर०ए०एस०, 1915, पृ०–81
15. वॉयस, मेरी–हिस्ट्री ऑफ़ ज़ोरोस्ट्रियनिज़्म, भाग–2, पृ०–19

भारतीय सूर्योपासना

यह सर्वविदित है कि सूर्य की पूजा प्राचीन काल में अंकनों द्वारा होती थी इसका सबसे प्राचीनतम उदाहरण मध्य प्रदेश के रायगढ़ जिले की पहाड़ियों में बलुए पत्थर (सैन्ड स्टोन) की चट्टानों पर आदिम काल के कुछ चित्र के अंकित मिले हैं जिसमें सूर्य को अर्द्धवृत्ताकार रूप में रश्मियों से मुक्त चिन्हित किया गया है। इस सूर्य मण्डल के सम्मुख एक मानव आकृति वंदन की मुद्रा में अंकित है। यह सम्भवत: मानव द्वारा सूर्य पूजा का सर्वप्रथम व्यक्त उदाहरण है। वैदिक कर्मकाण्डों में विशेषकर यज्ञ विधानों में अग्नि वेदिका के साथ स्वर्ण पत्र पर अंकित सूर्य मण्डल सूर्य के प्रतीक के रूप में स्थापि किया जाता था। इसके अतिरिक्त सौर प्रतीकांकित अनेक पंचमार्क सिक्के भी मिले हैं जिनकी तिथि लगभग 1000 ईसा पूर्व मानी गयी है। तक्षशिला औदुम्बर एवं उत्तरी भारत के अन्य अनेक स्थानीय सिक्कों पर सौर प्रतीकों का अंकन है। स्पूनर इन अंकनों को ज़रथुस्थ्री मत से प्रभावित मानते हैं। इन अंकनों की शृँखला में पंचाल मित्र सीरीज के सिक्कों का विवरण समीचीन प्रतीत होता है। पंचाल मित्र सीरीज में सूर्य मित्र के सिक्कों के पृष्ठ भाग पर रेलिंग नुमा आकृति है जिसके दोनों सिरों पर एक-एक स्तम्भ है इन स्तम्भों के मध्य में एक चक्राकृति का अंकन है सूर्य मित्र के एक अन्य प्रकार के सिक्के पर उपर्युक्त समस्त अंकनों के अतिरिक्त एक त्रिकोणीय आकृति सूर्य प्रतीक के नीचे अंकित है तथा यह समस्त आकृतियाँ एक समतल पर

आधारित है जो दोनों स्तम्भों के बीच में स्थित है। भानुमित्र के एक सिक्के पर रेलिंग है जिसके दोनों सिरों पर दो स्तम्भ है। रेलिंग के ऊपर एक सूर्य चक्र जिसमें आठ किरणें निकलती हुई अंकित है। पार्श्व में है वृषभाकृति भानुमित्र के दूसरे प्रकार के सिक्के पर एक नन्दि पर जिसमें निकलती हुई पाँच शाखाएं अंकित है। उपर्युक्त सिक्कों पर अंकित समस्त प्रतीत सौर माने गये हैं। इसी प्रकार के प्रतीक चिन्ह ईरानी सम्राट डेरियस की समाधि पर भी अंकित है। अत: पंचाल शासकों की मुद्राओं पर अंकित ये चिन्ह ईरानी सौर मत से प्रेरित हो सकते हैं। इन सिक्कों के अतिरिक्त कृषाण शासकों के सिक्कों पर सौराग्निमत का स्पष्ट प्रभाव लक्षित है। कनिष्क के सिक्कों पर सूर्य को उपानह युक्त अंकित किया गया है। दाहिने हाथ में सूर्य कुछ पकड़े हैं जो स्पष्ट नहीं है तथा बायें हाथ में तलवार है। अपोलोडोटस के सिक्को पर सूर्य का अंकन है। उपर्युक्त सौर अंकनों के अध्ययन से सौर अंकनों की दो परम्पराएँ स्पष्ट होती है–पूर्व एवं अवान्तर। पूर्व परम्परा में मात्र सौर प्रतीकों के अंकन की प्रथा थी किन्तु अवान्तर परम्परा में सौर प्रतीकों के साथ सूर्य के मानव रूप के अंकन की प्रथा भी ज्ञात थी।

साम्बपुराण में वर्णित सूर्य की रथ–यात्राके समान परम्परा ईरान में भी दृष्टिगत होती है। जिसका विवरण ज़िनोफन से मिला है। ज़िनोफन (चतुर्थ शताब्दी ई.पू.) ने ईरान के एक त्योहार का उल्लेख किया है, जिसमें रथ–यात्रा का प्रचलन था। श्वेत अश्वों से युक्त इन रथों में जियस सूर्य, अग्नि एवं अन्य देवों की प्रतिमाएँ

होती थीं। इस यात्रा का समापन देवस्थान पर होता था और वहाँ कुछ धार्मिक कृत्य भी हो थे जिनका सम्पादन मगों द्वारा होता था।

ईसा की पहली शताब्दी से हम सूर्य-पूजा में विदेशी प्रभाव के फलस्वरूप कुछ परिवर्तन पाते है। आर0जी0 भण्डारकर का विचार है कि यह परिवर्तन 'मग' नामक ईरानी पुरोहितों के एक वर्ग के भारत आगमन के कारण हुआ। ईरान में सूर्य-पूजा से सम्बन्धित पौरोहित्य कर्म के विशेषज्ञ को 'मग' कहा जाता था मग का शाब्दिक अर्थ-'देवताओं के सेवक' एवं 'आदरणीय' था तथा इनका ईरानी समाज में एक विशेष स्थान था। सर्वप्रथम मगों के भारत आगमन की घटना का उल्लेख भविष्य पुराण एवं साम्ब पुराण में है तथा साम्ब पुराण में पृथक रूप से साम्ब के द्वारा सूर्य पूजा हेतु मग पुरोहितों को भारत बुलाये जाने की कथा का वृत्तांत है। भारत में मगों के प्रभाव से ही सौर सम्प्रदाय स्थापित हुआ, जो अपने साथ सूर्य-पूजा के पूर्वी ईरानी रूप को लेकर आये थे। ईरानी पुरोहितों को उत्तर भारत में 'शाकलद्वीपों' अथवा 'शाकद्वीपी ब्राह्मण' कहा गया, आज भी विभिन्न भागों में इनकी बस्तियाँ हैं तथा ये सूर्य की पूजा विशेष विधि-विधान के अनुसार करते हैं।

शाकलद्वीपी ब्राह्मण ईरानी पुरोहितों (मगों) के वंशत थे, जो यहाँ सूर्य-पूजा की नयी परम्परा के साथ आये थे। इस प्रकार स्पष्टया यह कहा जा सकता है कि सूर्य-पूजा या मिहिर पूजा भारत में प्राचीन पारसी मगी लोगों के द्वारा लाई गई थी।

भारतीय परम्परा में सूर्य–मन्दिर एवं सूर्य–मूर्तियों के निर्माण का प्रचलन आरम्भ में नहीं था, क्योंकि सूर्य प्रत्यक्ष देव थे, किन्तु कालान्तर में मगो के प्रभाव के कारण सूर्य–मूर्ति एवं सूर्य–मन्दिर के निर्माण का प्रचलन बढ़ा सूर्य देवता की प्रतिमा स्थापित करने के लिये मग ही विशेषतया अधिकृत थे तथा इन्हें ही सूर्य–प्रतिमा का सच्चा पुजारी कहा गया तथा मगों ने अपने धार्मिक मतों के अनुसार भारत में सूर्य–प्रतिमा एवं सूर्य–मन्दिरों का निर्माण किया। मध्यकाल में समस्त भारत में सूर्य–मन्दिरों एवं सूर्य–मूर्तियों का व्यापक निर्माण हुआ, जो कि विविधता एवं निजी वैशिष्टय के कारण अपना अलग स्थान रखते हैं। अन्ततः स्वदेशी एवं विदेशी तत्वों के समन्वय में संगठित सूर्योपासना प्रारम्भ में प्रचलित थी और बड़े–बड़े राजाओं ने इसका समर्थन किया।

सूर्य–पूजा की परम्परा भारत में सदा विद्यमान रही तथा आज भी विभिन्न नाम–रूप एवं विधियों से उनकी स्तुति की जाती है। योग–क्रियाओं का महत्व सूर्य–उपासना में प्रारम्भ से ही रहा है तथा वर्तमान में ये यौगिक क्रियायें और अधिक महत्वपूर्ण हो गयी हैं तथा वर्तमान में अधिकांश *नैष्ठिक* हिन्दू प्रातः काल स्नान के पश्चात् सूर्य को जलादि *(अर्ध्य)* चढ़ाने के बाद ही अन्न–जल ग्रहण करते हैं। इस प्रसंग में उल्लेखनीय है कि पूर्वांचल क्षेत्रों (विशेषकर बिहार एवं पूर्वी उत्तर–प्रदेश) में कार्तिक शुक्ल पक्ष की षष्ठी को अस्त तथा उदय होते हुये, दोनों रूपों में सूर्य–पूजा अत्यधिक लोकप्रिय है इसे 'छठ' अथवा 'डाला छठ' कहा

जाता है तथा वर्तमान समय में सूर्य–पूजा का भारत में व्यापक प्रचलन दिखाई देता है।

भविष्य व *साम्ब पुराणों* में सूर्य पूजा के महात्म्य का आकर्षक वर्णन है, जिसके अनुसार कम उद्यम करने पर भी अधिक पुण्य की प्राप्ति हो सकती है। *भविष्य पुराण* में कहा गया है कि सूर्य–मन्दिर में दीप जलाने पर, मन्दिर के फर्श की सफाई करने पर या सूर्य को मात्र पुष्प अर्पित कर देने पर धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है।

भविष्य पुराण में सूर्य का एक नाम हेलि भी मिलता है जो सम्भवत: ग्रीक हेलियोस का संक्षिप्त रूप है। कहा गया है कि जो मनुष्य सूर्य मन्दिर धोता है या लेपन करता है वह हेली लोक में जाता है। अन्यत्र विवरण है कि हेलि को एक बार प्रणाम करना दशाश्वमेध के स्नान के तुल्य है। यद्यपि दशाश्वमेधी का पुनर्जन्म होता है किन्तु हेली को प्रणाम करने वाला व्यक्ति जन्म–मृत्यु के बन्धनों से मुक्त होता है।

वेद और *अवेस्ता* के देवी देवताओं का तुलनात्मक अध्ययन

वैदिक धर्म में पुरंधि (इन्द्र) नामक देवता का उल्लेख हुआ है, वो शत्रुओं का हन्ता कहलाया है। इसी कारण पारसी *अवेस्ता* में *पारॅन्धि यजता,* जो समृद्धि प्रदान करने वाला देवता कहलाया है। वैदिक धर्म में सोम देवता का नाम उल्लेखित है, यह *अवेस्ता* में हओम हो गया है। वैदिक धर्म में अग्नि (आग) जो *अवेस्ता* में आतर् के रूप में मानी गयी है। आतर् कर्मकाण्ड का सर्वोत्तम आधार है। आतर् की पूजा करने वाले ही *'आथ्रवन्'* कहलाते हैं। अथर्वन् में अथर् शब्द आतर् का ही अवशेष है, क्योंकि वेद में अथर्वन् ऋषि का उल्लेख है जो अथर्ववेद द्वारा अथर्वा ऋषि सम्बोधित करता है। इसी क्रम में अत्रि का भी उद्भव अर्थवन् से माना जाता है।

वैदिक धर्म में सूर्य देवता जो *अवेस्ता* में *ह्वर् क्षएत* अर्थात खुर्शीद हो गया। वैदिक में वात तथा *अवेस्ता* में वयु हो गयी। वयु को ही वैदिक वृषाकपि जो रामायण में हनुमान जी के रूप में पूजित हैं। इसी प्रकार वैदिक देवी अदिति यद्वा जो *अवेस्ता* में ज़्मा हो गयी है। वैदिक चाँद महीना *अवेस्ता* में माह् हो गया है। आपः देवता वैदिक तथा *अवेस्ता* दोनों में ही व्याप्त है।

वैदिक धर्म में कृशानु सोम रक्षक के रूप में पूजा जाता है वहीं *अवेस्ता* में कृशानु *(कॅरेंसानि)* सोम का विरोधी है क्योंकि सोम ने कॅरेंसानि को अपने साम्राज्य से बाहर कर दिया था। वेद व *अवेस्ता* में अपांनपात् जलों के देवता के रूप में स्वीकार किया गया है।

वैदिक धर्म में उल्लेखित वरूण देवता, *अवेस्ता* में भी व्याप्त है क्योंकि वैदिक मित्र ही *अवेस्तीय मिथ्र* है, जो पशुओं का स्वामी कहलाता है। वैदिक वरूण ही *अवेस्तीय* अहुर है जो प्रमुख ईरानी देवता कहलाता है। वेद में सरस्वती दिव्य सरित् मानी जाती है। *अवेस्ता* में अेंरेंद्वी सूरा अनाहिता दिव्य जल की स्वामी मानी जाती है। वेदों व पुराणों में उल्लेखनीय *उशनस्, अवेस्तीय* कविवंशीय *''उशनस्''* है। इसी को शुक्र ग्रह से सम्बोधित करके शुक्राचार्य कहा जाता है।

ऋग्वैदिक ''हसामुदा'' हस्त्रा जो *अवेस्ता* में जहिका के रूप में मानी जाती है। यह *अवेस्ता* में अपवित्र चरित्र वाली रूपवती कहलाती है। वैदिक धर्म में ''जनि'', *अवेस्ता* में जइनि कहलाती है, जो विदेश की रूपवती है, और अपवित्र चरित्र वाली कही जाती है। वैदिक अप्सरस् और *अवेस्ता* में ग्ना के रूप में वर्णित है। वैदिक धर्म और *अवेस्ता* का धर्म में ''वृक'' से बचाव का उल्लेख किया गया है। वेदों में श्येन जीत का प्रतीक, शक्ति का

रूप, मूर्तमान गति के रूप में वर्णित है क्योंकि श्येन शत्रु हन्ता व पक्षियों को मारने वाला कहलाता है। *अवेस्तीय* ''सएन मेंरेंध'' को मूर्तबल, साक्षात् वरदान, सौभाग्य का प्रतीक आदि रूपों में माना जाता है।

विष्णु के वाहन के रूप में गरुड़ की कल्पना *अवेस्तीय* कल्पना है, वैदिक गरुड़ वेदरूप है, जिस पर परब्रह्मा विष्णु का अधिष्ठान है।

वेद में अग्नि देवता एक रूप विशेष हैं, *अवेस्ता* में *नइर्योसंघ* मनुष्यों के मध्य अहुमज़्दा का दूत है। वेद में ''सीता'', उर्वरा की देवता है, *अवेस्ता* में ''ऋति'' उर्वरा की देवता कही जाती है। वेद में *अगस्त्य कुम्भज* का वर्णन है जो *अवेस्ता* में *प्रदाक्षि खुम्भ्य* होकर (कलेश) से उत्पन्न कहा जाता है। वेद में अर्यमन् को पति-पत्नी के मध्य मधुर सम्बंधों का मुख्य देवता है। यही देवता *अवेस्ता* में *मैषज्यकृत* रूप से पूजित है।

वैदिक साहित्य में यम देवता पितृलोक का स्वामी है, *अवेस्ता* में यम पेशादादिय साम्राज्य का तृतीय शासक है। वेद में इन्द्र वर्ष और प्रकाश का देवता माना गया है, *अवेस्ता* में इन्द्र यद्वा अन्दर अशवहिस्त विरोधी है, जो सत्य मार्ग पर चलने वाली आत्माओं को मार्ग से विचलित करने वाला देवता कहा गया है।

वैदिक साहित्य में शिव (शर्व) जो रूद्र का पर्याय है, जो साक्षात् कल्याण या कल्याण रूपी माने जाते हैं। शिव ही दक्षिणामूर्ति का रूप है। इसी प्रकार

अवेस्ता में *स्पेन्ता मइन्यु,* वैदिक शतपथ ब्राह्मण में वृषभवाहन मनु कहलाता है। यही स्पेन्ता मृत्यु रूपी शिव का रूप है। *अवेस्ता* में हउर्व जो दुरात्मा के पूजक माने जाते हैं। वेद में त्यजस त्याग का मूर्त रूप है, अवेस्ता में *इभ्यजह् दहव* माना जाता है।

इसी क्रम में भूति (भूतिनी) को वेद में ऐश्वर्य के रूप में जाना जाता है, *अवेस्ता* में बूइति के नाम से प्रसिद्ध है। भुजिन् वेद साहित्य में उपभोग के रूप में मानी जाती है, वही *अवेस्ता* में *दएव* के रूप में प्रसिद्ध है। वेद में गौतम को मंत्रद्रष्टा तथा अवेस्ता में अभिशप्त पुरूष के रूप में माने जाते हैं। वेद में कल्प (ण) उशिक् शास्तृ तथा सेना समर्थक है, *अवेस्ता* में ये दुरर्थक के लिए प्रयोग किया गया है। वेद में विश्वाक्सु गंधर्व शक्ति के रूप में मानी जाती है, *अवेस्ता* में यह बुरी आत्मा के रूप में उल्लेखित है। वैदिक कर्मो में दक्षिण दिशा मुख्यत: अशुभ मानी जाती है वही *अवेस्ता* में दक्षिण दिशा शुभ और उत्तर दिशा अशुभ मानी जाती है। वैदिक साहित्य में होतर् (होतृ) *अवेस्ता* में *ज़ओतर्* हो गया है। वैदिक धर्म का *ऋत्विक्, अवेस्तीय* रतु माना गया है।

वैदिक साहित्य (भारतीय साहित्य) में अहुर उपासकों ने हिरण्य कपिशु ने विष्णु भक्त प्रहलाद को यातना दी थी। ईरान के धर्म में *(अवेस्ता)* ज़रथुस्त्र और उनके अनुयायियों को यातनाए दी गयी थी। इसी प्रकार देवताओं और असुरों के युद्ध *अवेस्ता* में संकेतिक उल्लेखित है। *अइर्यनम् वएजह* अर्थात् ''आर्यो का प्रसार'' पद से ईरान में आर्यो का उद्भव होता है। क्योंकि देवताओं की भूमि

आर्यवर्त है। *अवेस्ता* में (दइति>दिति), भूमि माता दिति और पर्यन्तवासी उनका पुत्र दैत्य है। *अइर्यन वएजह्*, दिति पुत्र दैत्य है जो अहुर उपासक होने के कारण असुर है।

वैदिक धर्म में आर्यावत् अदिति पुत्र दैत्य देवताओं की उपासना भरने के कारण देवता के रूप में पूजित है क्योंकि *अवेस्ता* में (दएव>देव) शब्द ''दुरात्मा'' का रूप माना जाता है।

अवेस्ता में अहुर माज़दा ही *स्पॅन्ता मइन्यु* (शिव मनु) है क्योंकि यह सृष्टिकर्ता कहा जाता है इसने सृष्टि को सात यजतो के रूप में बाँटा है इसलिए इसे हफ़्त अमेषा स्पेन्ता का नाम दिया गया है। वोहुमनह् पशुओं के समूह का संरक्षक है। अश्वहश्ति अग्नितत्व का संरक्षण करने वाला है। क्षत्र वइर्य धातुओं का, आरमइति पृथ्वी, *हउर्वतात्* और अमरतात् जल और उर्वरा के रक्षक हैं। देवो की सृष्टि का रक्षक *अंग्रोमइन्यु* को माना जाता है। क्योंकि *अंग्रोमइन्यु स्पेन्ता मइन्यु* का विरोधी है। *अवेस्ता* में तउर्वि अधोगति (अवरोध) क्षति, और अव्यवस्था एवम् जइरचि् (जरस्) का देवता (दएव) है। इसी क्रम में जउर्वि सम्वर्धन तथा सत्कर्म करने वाला देवता कहा गया है। अएष्म क्रोध करने वालों का स्वामी है। हउव्र कुशासन, विद्रोह, अव्यवस्था, मद्यपान, काम का देवता माना गया है इसी प्रकार *अवेस्तीय* समाज चार भागों में विभक्त है। (1) *आर्थवन* बाह्मणवत् है, (2) *(रथेस्तार्)* क्षत्रिय है (3) विट् वास्त्रय फ्ष्यास् है (4) दहका शूद्र है।

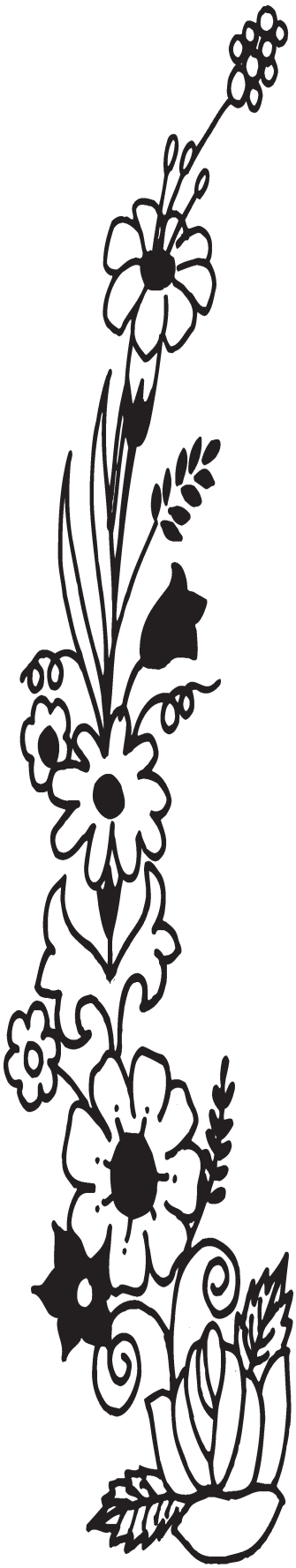

चित्रफलक

INDIAN COINS

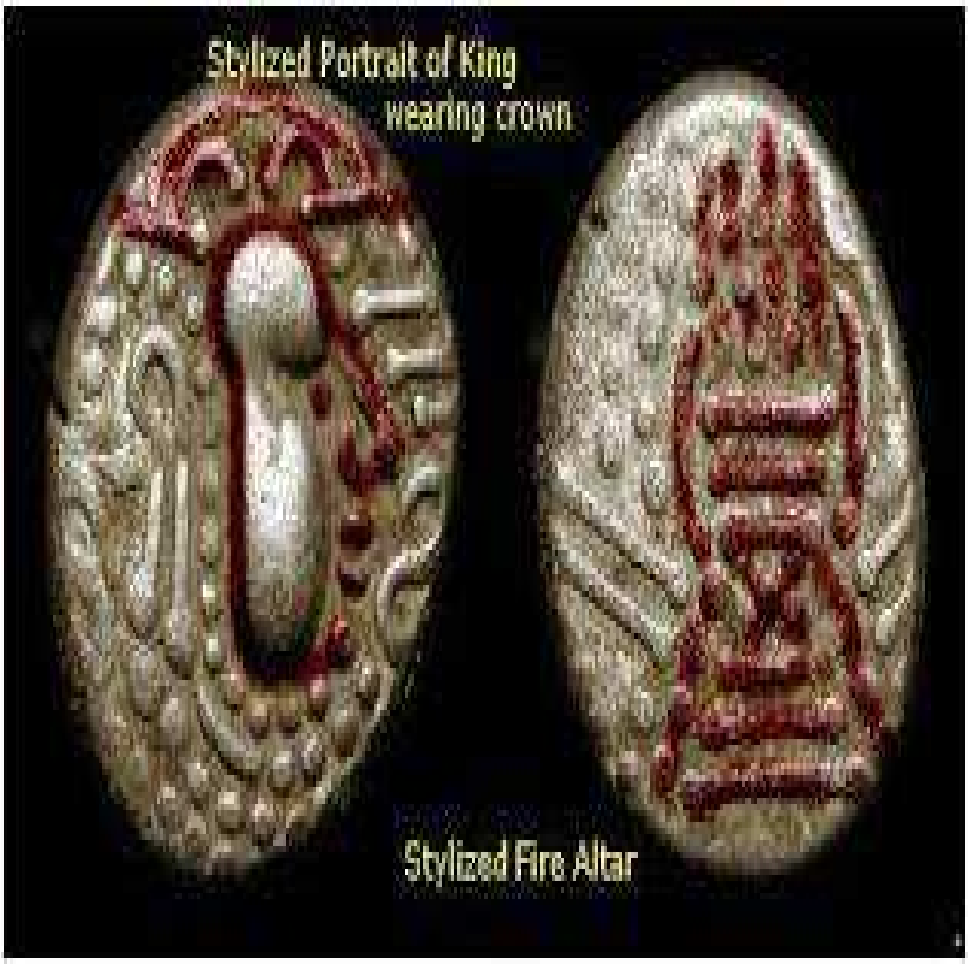
Stylized Portrait of King
wearing crown
Stylized Fire Altar

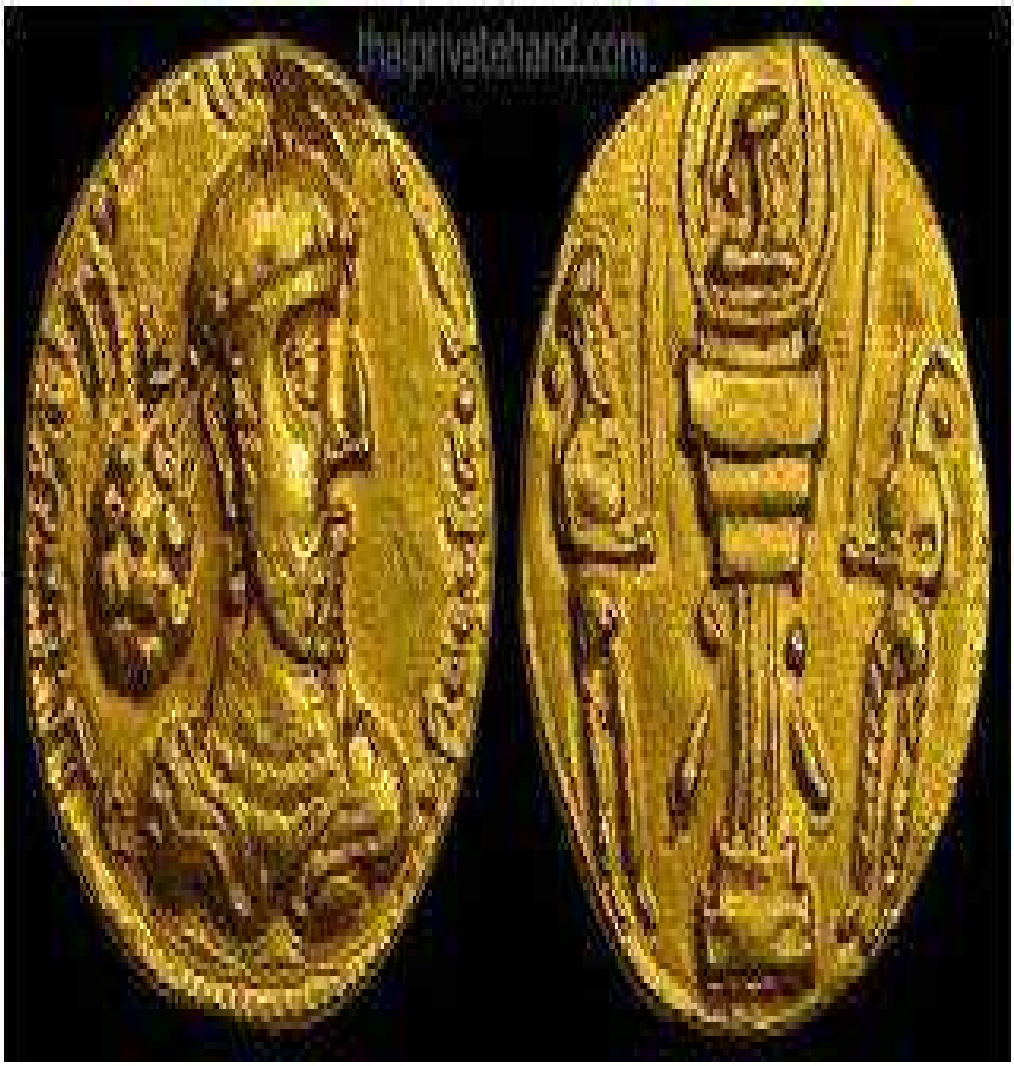
theprivatehand.com

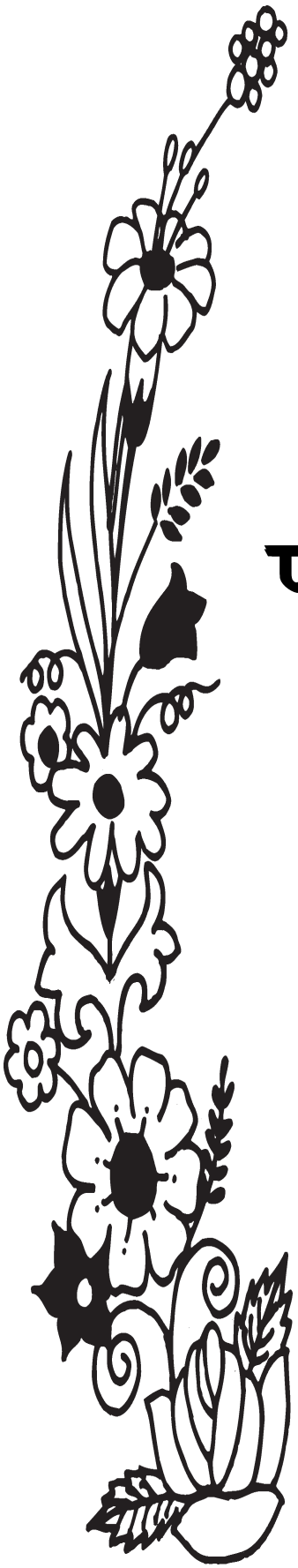

पंचम अध्याय

उपसंहार

उपसंहार

वैदिक व प्राचीन ईरानी धर्म की परस्पर निकटता

वैदिक आर्यों के ईरान में बसे हुये आर्यों से निकट सम्बन्ध होने के स्पष्ट प्रमाण हैं। विलियम जोन्स ने ईरान के *अवेस्ता*, वैदिक आर्यों के वेदों और भाषाओं में बहुत अधिक समरूपता के आधार पर कॉमन –ओरीजिन ऑफ इण्डो–यूरोपियन्स थियोरी (इण्डो–यूरोपियन कॉमन होम लैण्ड) प्रतिपादित किया है जिसके अनुसार आर्यों का आदि देश मध्य–यूरोप में स्थित था। जहाँ से आर्य लोग एशिया में प्रविष्ट हुए और ईरान के माध्यम से भारत पहुँचे। मार्टिन हौग ने वेदों और *अवेस्ता* में असुर और दैव शब्दों के उलट अर्थ के तर्क पर यह मत प्रस्तुत किया कि ईरान की भूमि पर आर्यों के बीच धार्मिक मतभेद उत्पन्न हुये और विरोधी शाखा ईरान छोड़कर भारत के सप्त–सैंधव क्षेत्र में बस गयी।

भारतीय विद्वान के.सी. चट्टोपाध्याय ने आर्यों के बीच मतभेद के तर्क को अस्वीकार कर दिया है। किन्तु वैदिक आर्यों और ईरानी आर्यों में बहुत घनिष्ठता थी यह तथ्य स्वीकारा है। सनिष्ठता का एक प्रमाण दोनों पक्षों में अग्नि का पूज्य रूप है। अग्नि को पवित्र माना गया है। तथा यज्ञ और अन्य धार्मिक अनुष्ठानों में अग्नि की भूमिका महत्व रखती है। वेदों और *अवेस्ता* में अग्नि की महिमा में स्तुतियाँ भी मिलती हैं।

मानवीय जीवन में अग्नि-देवता मुख्य देवता के रूप में पूजित है। अग्नि देवता की महिमा वैदिक साहित्य से प्राप्त होती है लेकिन अग्नि-देव के प्रति देवत्व का मान ऋग्वेद-काल से प्राप्त होता है! अग्नि-देव की महिमा (मंडन) में 200 सूक्त आख्यात हैं जो उसकी याज्ञिक महिमा को प्रस्तुत करते हैं। वैदिक अग्नि-देव मनुष्य को दुष्कर परन्तु सत्य और आनन्द की अनुभूति वाले मार्ग पर अग्रसर करते हैं। क्योंकि मनुष्य चिंतक प्रवृत्ति का होता है। अग्नि को यज्ञ में प्रज्जवलित कर अग्नि-देव की आराधना करके मनुष्य पूर्वजों की आत्मा को शांति प्रदान करता है। याज्ञिक क्रियाओं में मनुष्य अग्नि-देव को प्रथम देवता स्वीकार करता है। आपके माध्यम से ही मनुष्य किसी भी देवता के पास पहुँच सकता है। अग्नि देव ''संकल्प शक्ति'' को बढ़ावा प्रदान करने वाले जन्मों को जानने वाले, अपार शक्ति से परिपूर्ण माने गये हैं। अग्नि ही मनुष्य को देवताओं से मिलाने वाले एक देवता के रूप में पूजित हैं।

वैदिक साहित्यक में अग्नि-देव की महिमा करते हुए कुछ इस प्रकार कहा गया है कि अग्नि-देव मनुष्य की समस्त बुराईयों का नाश करके प्रदीप्ती की चमक से विचारों में परिवर्तन करते हुए गृह एवं मनो के विचारों को सुख एवं शांति प्रदान करते हो। अग्निदेव! ऐश्वर्य एवम् अतुल्नीय सत्ता के देवता होकर दीर्घ आयु प्रदान करते हैं। अग्नि देव के पास उपासना का भण्डार है, शक्तियों से परिपूर्ण है इसलिए अग्नि-देव को धाता कहा जाता है। क्योंकि आप देवताओं का गुणगान करते हो। इसलिए वैदिक साहित्य में अग्नि को विभिन्न रूपों में उपस्थित

माना गया है। जैसे–अग्नि, वायु, आदित्य, आहवनीय, दक्षिण, गार्हपत्य, वैश्वानर, तेजस्, प्राज्ञ, आदि में पूजित किया जाता है। अग्नि देव को देवों का पिता और राक्षसों का विनाशक के रूप में जाना जाता है। क्योंकि अग्नि–देव को पिता कहने से अभिप्राय है कि अग्नि–देव सभी को अपने संरक्षण में रखने वाले हैं। अग्नि–देव को चर–अचर का ज्ञाता होने के कारण जातिवेदस् व सूर्य के समान सर्वज्ञाता होने के कारण भुवन चक्षु कहा जाता है। अग्नि–देव को वेद में अन्तरिक्ष का देवता वायु, स्वर्ग का देवता आदित्य, पावमान, पावक, शुचि व दक्षिण–पूर्व का दिक्पाल कहा जाता है।

इसी प्रकार वैदिक साहित्य में अग्नि देवता को विभिन्न रूपों में भी माना गया है जैसे दूत के रूप में, मित्र के रूप मे, पक्षी के रूप में, गरुण के रूप में, जिनमें वह इस जगत में व्याप्त हैं। अग्नि देव की कल्पना गौ (गाय) के रूप में भी की जाती है जो प्रकाश पुंज को लेकर आगे चलती है। अग्नि ध्रुव के रूप में भी मानी जाती है जो शक्ति का पुंज है, अग्नि की दिव्यता का रूप दधित्रावा है जो युद्ध में शत्रुओं का विनाश करती है। अग्नि देव अन्य रूपों में अहिर्बुध्न (सर्प) कहलाता है जो हमारी सत्ता को तीसरे लोक में स्थापित करता है।

वैदिक अग्नि–देव को ऋत्विक का रूप प्रदान किया गया है जो कर्म, यज्ञ का दृष्टा कहा जाता है अग्नि–देव सत्य का सतत् प्रकाश का रूप है जो मस्तिष्क के अन्दर अशुभ विचारों का अन्त करती है। अग्नि–देव के रूप की कल्पना दृष्टा

संकल्प (कवि ऋतु), अग्नि पुरोहित, अश्व के रूप में, मनुष्य के मित्र के रूप में, आहुति के वाहक के रूप, में कल्पना की गयी थी। अग्नि–देव मनुष्य के गृहस्थ जीवन को सुख–मय बनाकर दाम्पत्य जीवन सुखी रखते हैं। अग्नि–देव वरूण एवं मित्र का गुण रखते हैं जब वह यज्ञ में जाते हैं तो वह वरूण हो जाते हैं।

ऋग्वेद में अग्नि–देव को अपार शक्ति सम्पन्न माना है जो अग्नि–देव की महिमा के बारे में बोध कराती है। अग्नि देव की प्रमुख पदवियों में वह यज्ञ के अधिष्ठाता, प्रत्यज्ञ पुरोहित, ऋत्विक, होता है। अग्नि की प्रमुख शक्ति दाहकत्व की है इसीलिए अग्नि देव को गृहपति, दमनस् की उपाधियाँ प्रदान की गयी हैं।

वैदिक काल में निराकार (अदृश्य) रूप में भी अग्नि देव की महिमा की गयी है। अग्नि–देव को ऋतुर्हृदि (हृदय का संकल्प) विशेष रूप से कहा जाता है या संज्ञा प्रदान की जाती है। अग्नि के निराकार रूप की कल्पना दधिक्रावा के रूप में भी की जाती है जो दिव्य अग्नि की दिव्य युद्धाश्व एक शक्ति है जो मनुष्य के अन्दर चेतना जाग्रत करती है। अग्नि को ''हृदय का संकल्प'' से तात्पर्य यह है कि जो सभी शक्तियों को उच्छिन्न कर देता है, संकल्प वह है जो दिव्य शक्यिों में सबलतम है। अग्नि–देव में तपस् और तेजस् दोनों के आग्नेय तत्व है। जो अग्नि–देव की निराकार महिमा का वर्णन करता है।

पौराणिक प्रकरण के अन्तर्गत *शिव–पुराण* में उल्लेखित कथा राजा दक्ष और सती का योगाग्नि द्वारा अपने शरीर को नष्ट करना अग्नि की प्रमाणिकता को

सिद्ध करता है। इसी के अन्तर्गत पौराणिक कथा भगवन शिव की नेत्राग्नि से कामदेव का भस्म होना, इन्द्र के वज्रपात से उत्पन्न अग्नि द्वारा वृत का अंत करना, अग्नि की महिमा को सिद्ध करती है।

पौराणिक कथाओं में *अग्नि–पुराण* का विशेष महत्व है जो अग्नि की महिमा का वर्णन करते हुये अग्नि की स्थापना व उपयोगिता का वर्णन करता है। इस कथा के अन्तर्गत भगवान अग्नि ने महर्षि वशिष्ठ को *अग्नि पुराण* सुनाकर इसकी महिमा का गुणगान किया है। अग्नि–पुराण में अग्नि कुण्ड–निर्माण, पूजा होम विधि, के अन्तर्गत होम पूजन, अमृत होम, लक्ष होम, कोटि होम, हवन–विधि, अग्नि देव से प्राप्त फलों का कथन को, अग्नि स्थापना वर्णन सविस्तार प्राप्त होता है।

अत: वैदिक साहित्य में अग्नि–देव की महिमा का वर्णन अमूर्त रूप में प्राप्त होता है जो वैदिक मंत्रों, अग्नि देव की ऋग्वैदिक महिमा इत्यादि से अग्नि–देव देवता के रूप में पूजित हुये। वही पौराणिक काल में मूर्त रूप में अग्नि देव की महिमा व पौराणिक कथाओं में उत्पन्न पुरोहित द्वारा अग्नि को स्थापित करना व अनेक अग्नि–कुल, अग्नि–कुण्ड इत्यादि से अनेक वंशजों का उत्पन्न होना पौराणिक काल की अग्नि को सिद्ध करती है।

पैग़म्बर *ज़रथुस्थ्र*

सातवीं शती ईसा पूर्व में ईरान देश में लगभग 631ई0पू0 में स्पितम कुटुम्ब में पौरूषास्य और दुग्धोवा के पुत्ररत्न के रूप में पैग़म्बर ज़रथुस्थ्र ने जन्म लिया था। भगवान अहुर माज़्द ने स्वयं पैग़म्बर ज़रथुस्थ्र को सत्य के दर्शन कराये, जो कि *अवेस्ता* है। अवेस्ता के 21 नुस्क या खण्ड थे, जिसकी ज़रथुस्थ्र ने वैक्ट्रिया (बख़्त) के शासक राजा विस्तस्य को शिक्षा दी थी।समय के साथ इस धार्मिक ग्रंथ में परिवर्तन हुए और प्राप्त *अवेस्ता* में विद्वान जेमल दर्मेस्तीतर और ए0बी0 विलियम्स जैकसन के अनुसार अवेस्ता की गाथ या स्तुतियाँ ही मूल ग्रंथ और बाद के प्रक्षेपणों का अन्तर स्पष्ट करती है।

जैक्सन के अनुसार छन्दबद्ध गाथ (यानि साम, स्तुतियाँ) अवेस्ता के अन्य भागों के लेखन की भाषा, छन्द व शैली में भिन्न है। 5 गाथों में 17 स्रोत्र हैं *अहुनवैति, उष्तवैति, स्पेन्ता मैन्यु, वोहु क्षहथ्र* और *वहिष्तोषिथी*। इन रचनाओं में ज़रथुस्थ्र के दृष्टा के रूप में दर्शन होते हैं, उनकी शिक्षाएं और आदेश मूल रूप में है। गाथ रचनाओं में होऊम, फ्रवशी, दैव, यज़्त का नितान्त अभाव सिद्ध करता है कि उनकी रचना ऐसी सकल्पनाओं के विकसित होने के पहले की है इनमें अनुष्ठानों व रीतियों का भी अभाव है। ज़रथुस्थ्र के मौलिक संदेश के मुख्य सिद्धान्त थे–

1. एकीश्वर वाद–अहुर माज़्द एक मात्र ईश्वर और सृजनकर्ता है और उसकी विशेषता स्पेन्ता (पवित्रता व भलाई) और बुद्धिमत्ता है।

2. उच्च नैतिक विचार व आचरण–जिसका पालन करना अर्ष का देव अहुर मज़्द माँगता है। मनुष्य को अच्छे शब्द, कर्म व अच्छे विचार ज़रूरी है। पैग़म्बर ज़रथुस्थ्र के जन्म से पूर्व ईरान क्षेत्र में प्रचलित प्राचीन धर्म के तत्व मान्यतायें, अनुष्ठान आदि (हिन्द–यूरोपीय) धार्मिक विश्वासों से गृहीत थे–और इसीलिए यह भी वैदिक धर्म के समान थे। ईरान में द्यूस, केन्द्रित धर्म, अनुष्ठान व बलि प्रथायें, प्राकृतिक व नैतिक शक्तियों और पितृात्माओं की उपासना की प्रथायें व्याप्त थी। उस काल में मग पुरोहितों का वर्चस्व था जो बलि–यज्ञ में निपुण माने जाते थे। मग पुरोहितों का मूल देश मद था जहाँ से सम्राट कुरूष इन्हें ईरान लाया था। मगों ने नजूमी, चिकित्सक और जादूगरी तथा दुष्प्रभाव, हवाओं आदि को दूर करने के कार्य किए और समाज पर छा गये थे। यूनानी इतिहासकार, हेरोडोटस (4 शती ई0पू0) ने मग उपासना का उल्लेख किया है। मग ऊँची पहाड़ियों के शिखर पर देवों को पशुबलि देते थे किन्तु उस काल में भी अग्नि–वेदि, न आहुति, न अग्नि, न मन्दिर, न मूर्ति ही थी। यह लक्षण सूरय और बेबीलोनिया से ईरान ने ग्रहण किए। जैसा सर्वमान्य है, कि हिन्द–यूरोपीय मूल धर्म में आकाश का देव (यूनानियों के लिए) ज्यूस, (पारसी के लिए) द्यूस पितर, और (वैदिक हिन्दू हेतु) द्यौस था जिसके ईर्द–गिर्द प्राकृतिक शक्तियों के (देव–मण्डल) की संकल्पना विकसित हुई।

ईरान में माज़दा सम्प्रदाय, प्राचीन वैदिक धर्म से बहुत निकट रूप से सम्बन्धित था। माज़दा सम्प्रदाय में *अवेस्ता* का अर्थ ''ईश्वरी उपासना'' और ''माज़दा'' ईश्वर और ''यास्न'' का अर्थ ''उपासना'' है।

प्राचीन ईरानी धर्म में अहुर का अर्थ जीवनदायक जो विभिन्न जीवनदाता है। माज़दा को महद भी कहते हैं इसका अभिप्राय 'देने वाला', 'महान' है। मज़द यस्न धर्म का पुरोउद्धार करने वाले ज़रथुस्त के वचनों को दो भागों में विभाजित किया गया है एक रहस्यवाद और दूसरा दर्शन से जुड़ा है।

रहस्यवाद में ज़रथुस्त्र द्वारा अहुर माज़दा में पूर्ण विश्वास, आत्मा का अविनासी होना और मृत्यु प्राप्त जीवित होना, अग्नि का दैविक रूप होना के विषय में कहा गया है। ज़रस्थुस्त्र के वचन का दूसरा भाग दर्शन से सम्बन्ध रखता है जिसमें कहा गया है कि मनुष्य को अच्छे और बुरे का अन्तर और महत्व ज्ञात होना चाहिए, जीवन अच्छे और बुरे के बीच का शास्वत सच है। पुनः ज़रथुस्त्र ने नैतिक शिक्षा पर बाते कहीं जो तिगड़ी कही जाती हैं जैसे–*हुमत* से अभिप्रायः अच्छे विचार, *हुउक्त* से तात्पर्य अच्छे वचन, *हुवर्षत्* अच्छे कर्मो पर ज़ोर देता है।

मज़द यस्न धर्म के पुरोद्धा ज़रथुस्त्र ने अग्नि की पवित्रता के सम्बन्ध में कहा है कि पवित्र मन से अग्नि की रश्मियों पर ध्यान करें जिससे अग्नि जिज्ञासु मनुष्य को अनेक शिक्षाऐं प्रदान करती है। अग्नि की ज्वाला आकाश की ओर उठकर मज़द यस्नी विचारों को भौतिक भूमि की कीचड़ और गंदगी से ऊपर

उठाती है। ज़रथुस्त्र के अन्य विचारों में कहा गया है कि अग्नि जिस चीज़ को छूती है उन सभी को पवित्र कर देती है और स्वत: भी पवित्र रहती है। मज़द यस्नी सम्प्रदाय के अनुसार अग्नि को कोई भी अपवित्र नहीं कर सकता है। जब अग्नि ऊँचाई पर पहुँच कर समाप्त होती है तब उसमें एकता और समरूपता नज़र आती है जिसे दिव्यता कहते हैं।

मज़द यस्नी सम्प्रदाय के पैग़म्बर ज़रथुस्त्र के अनुसार यह धर्म तीन प्रकार की अग्नियों के प्रति श्रद्धा अर्पित करता है। प्रथम अग्नि *अतिश बहरम* अर्थात् विजयी अग्नि जो सर्वोच्च श्रेणी की पवित्र अग्नि है। दूसरी अग्नि *अतिरा अदारण* जो अग्नियों की अग्नि कहलाती है। यह अग्नि मन्दिर या अज़ग्यारी में प्रज्जवलित रहती है। तीसरी अग्नि *आतिश ददगॉह* है जो घरेलू अग्नि कहलाती है। इस सम्प्रदाय के अनुसार इन सभी अग्नियों की स्थापना हेतु अनेक कर्म काण्ड आवश्यक है जैसे–अतिश बहरम की स्थापना सरोशयाज़द का *यास्न* पाठ करके व इसकी पवित्र अग्नि को आध्यात्मिक राजा माना जाता है इसकी तख़्त नशीनी का विधान है। आतिश अदारण की स्थापना का विधान चार अग्नियों के द्वारा होता है जिसमें एक अथोरनन पुरोहित या पादरी, एक रमेशतरन, वस्त्रयोसन तथा हतोकुशन से अग्नियाँ प्राप्त करके आतिश अदारण की स्थापना की जाती है। यह अग्नि वहाँ स्थापित की जाती है जहॉ गर्भ गृह या किवला होता है। इस सम्प्रदाय द्वारा अग्नि की सुरक्षा और प्रदूषण से बचाना अग्नि उपासकों का गम्भीर सरोकार था।

प्राचीन ईरानी धर्म में सितायी प्रशंसा की प्रार्थना अर्थात् स्तुति कही जाती है इसके विपरीत नियायि अभिलाषा पूर्ण करने या माँगने के लिए हैं। आतिश नियायि प्रतिदिन अग्नि के निकट होने की स्थिति में पढ़ी जाती है और आतर (अग्नि) से प्रार्थना की जाती है कि आतर आपको अहुर माज़दा ने बनाया है। आतर कल्याणकारी है जो पूर्ण कीर्ति के स्रोत तक ईश्वर है जो दुखों को भरने का स्वामी है। आतर *नैरियोसंघ* व अन्य अग्नियों के साथ शासकों के नाभि में वास करती है। याजक प्रार्थना करते हुए कहता है कि आप यज्ञ और आवाहन के योग्य है। आपको सही *उपसऐनि* (आहुति) मिले। आपके द्वारा घर को सही संरक्षण प्रदान हो, आप घर में सदैव प्रज्जवलित होकर सुख-शांति स्थापित करें। याजक पुनः कहता है कि आप हमें जीवनत कल्याणकारी जीवन, समझदारी, वाक् चातुर्य, आत्मा की पवित्रता, अच्छी स्मरण शक्ति, योग्य पुरूष का साहस प्रदान करें! जो दिन की रोशनी में ईश्वरीय भाव से साफ़-सफ़ाई करता है आतर उन्हें आशीर्वाद प्रदान करती है। अहुर माज़दा शक्तिशाली अग्नि उनकी सहायक है जो आतर को सुख प्रदान करता है और जो आतर यानि अग्नि को नुकसान करता है आतर उसका नुकसान करती है। अग्नि सब जगह अदृश्य रूप में व्याप्त है। पर इसे लकड़ी या पत्थर के घर्षण से लेकर जलाया जा सकता है। अहुर माज़दा अग्नि में जो अर्पित किया जाता है अग्नि वैसा ही मनुष्य को प्रदान करती है। अहुर माज़दा की अग्नि की रश्मियाँ एक साथ मिलकर जीवित इंसान में विलीन हो जाती हैं। अग्नि की निरन्तर शोधित रश्मियाँ जीवन की क्रियाशीलता एवं मृत्यु की निष्क्रमता का बोध कराती हैं। अग्नि निष्पक्ष है जो संत और पापी के बीच सेवा का अन्तर नहीं मानती है। यास्न

की *गाथा* अहुन्न वैति से ज्ञात होता है कि अहुर माज़दा दिव्य अग्नि दुरात्मा और ईर्ष्या को देखते ही भस्म कर देती है और विश्वासियों को सहायता प्रदान करती है।

ज़रथुस्त्र के धर्म में आतर को अलौकिक या लौकिक, आध्यात्मिक पक्ष में एक विशिष्ट स्थान दिया गया। आध्यात्मिक पक्ष में आतर को सर्वोच्च यज़ातो में (उपासनीय पूज्य) श्रेणी में रखा गया है। आतर को अहुर माज़दा का पुत्र कहा गया है।[1] लौकिक आधार पर अग्नि को अहुर माज़दा की सातवीं और अन्तिम रचना या कृति माना गया है जो अमेषा स्पेन्ता अर्श वहीश्त के सरंक्षण में रहती है इसी प्रकार ज़रथुस्त्र के धर्म में अग्नि अहुर माज़दा का एक जीवन्त प्रतीक है और सभी प्रार्थनाऐं आतर (अग्नि) की ओर देखकर की जाती हैं।

---

1. देवयास्नी समुदाय (वैदिक आर्य) ने अग्नि को देव का दर्जा प्रदान किया।

गाथा के अन्तर्गत ज़रथुस्त्र द्वारा विशिष्ट और व्यवहारिक धार्मिक पक्षों के द्वारा अहुर माज़दा को प्रार्थना की जाती है। माज़दा बहूमना का पिता और अर्श का जनक है ओर दोनों ही मनुष्य के कर्मों को नियन्त्रित करते हैं। अहुर माज़दा से प्रार्थना करते हुए प्रचार के पथित अग्नि और पवित्र अनुष्ठानों के माध्यम से मनुष्य को अच्छी और बुरी शक्तियों के बीच में संघर्ष से बचाते हुए अच्छी शक्ति प्रदान करने की प्रार्थना करता है। अहुर माज़दा से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि तूने संघर्षरत् शक्तियों के बीच हमें दर्शन की मानसिक ज्योति दी है जो कि तेरी पवित्र आत्मा, तेरी अग्नि और तेरा सत्य तत्व हम सभी जीवित मनुष्यों में विश्वास बनाये हुये हैं। *ऐघसपरवरिस्न वमिन फ्ररूहनिह* अर्थात् अभिप्राय: है कि इसमे अग्नि को मित्र देव, वेदी की अग्नि के अधिष्ठाता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। अग्नि को आन्तरिक, आत्मिक शक्ति और सांसारिक आशीषों को प्रदान करने वाली एक वज्र के रूप में प्रतिशोध निकालने वाली शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ''अहुर माज़दा हम तेरी अग्नि जो कि सत्य तत्व के माध्यम से शक्तिशाली हैं। अहुर माज़दा तू उनको देता है जो तेरी पवित्रता और सत्य तत्व में अनुष्ठान, नैतिक सत्यतत्व में बढ़ोत्तरी और असीम परमात्मिक तत्व को अपनी अग्नि से प्रदान करोगे'' अहुर माज़दा के प्रतिनिधि के रूप में आरममैति नाम का उल्लेख होता है जो ईश्वरीय सत्ता को स्थापित करता है। इसलिए अहुर माज़दा को सर्वोच्च कल्याण और सबसे गहरा नाशकारी परिणाम देने वाला कहा गया है।

अनुष्ठानों में अग्नि

यास्न *अवेस्ता* या ज़रथुस्त्र के अनुयायियों का मुख्य साहित्य है जो अनुष्ठानों से जुड़ा है इसके बीच गाथ गाये जाते हैं *यास्न* का अर्थ उपासना है जिसके अन्तर्गत यज्ञ, सम्मिलित है। वेन्दीदाद–सादह के अन्तर्गत विस्पर्द को पढ़ा जाता है। अग्नि को अहुर माज़दा का पुत्र कहा गया है। यास्न को अग्नि और सभी प्रकार ज्वालाओं की अग्नि को समर्पित किया गया है।

अग्नि जो कि अनुष्ठानों की रीति या अनुष्ठानों की सत्ता का पवित्र स्वामी है। सभी अग्नियों के प्रति आवाहन किया गया है।

अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि को यस्न द्वारा पूजित करने का उल्लेख है। अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि को सभी प्रकार की अग्नियों जिसके द्वारा यज्ञ समर्पण, संतुष्टि और प्रशंसा और उनकी भक्ति की जा रही है। अपने सेवक जिसके त्याग को अहुर माज़दा पहचानते हैं हम अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि की उपासना करते हैं। यस्न, में अग्नि को अहुर माज़दा का पुत्र तथा अनुष्ठानों प्रक्रिया का पवित्र स्वामी कहा गया है। अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि की उपासना का उल्लेख है और अग्नि के नामों की बात कही गयी है जैसे अग्नि के प्रकार

वेरेजीसवंग वह अग्नि है जो माज़दा और शासक के समक्ष होती थी।

वोहफ्रॉहान मनुष्य और जीवों के शरीर में बसके उनको उर्जा प्रदान करती है *उर्वाज़िस्त* अग्नि का उल्लेख पेड़ो और पौधों में और *वाज़िस्त यामिनी* बादलों में रहने वाली अग्नि कहलाती है। संसार में उपयुक्त अग्नि स्पेनिश्त अग्नि कहलाती हैं यस्न यज़द के घराने से सम्बन्धित *नैरियसंघ* जो कि बहराम के पूजा–स्थल से सम्बन्धित कहलाता है। *यास्न* में उल्लेखनीय पर्वत *उशीदारेण* (जो रोशनी से पूर्ण है) की उपासना करते हैं उसका अर्थ सूर्योदय और सूर्य अस्त का पर्वत है। अहुर पुत्र अग्नि को समर्पित यस्न है इसमें कहा गया है कि जो तेरी अग्नि की ज्वाला को गंदा करेगा, उसको तू गंदा कर देगा। अहुर पुत्र अग्नि तू एक मित्र के रूप में हमें उत्साहित करके हमारी मदद कर, इस प्रकार बहुर पुत्र अग्नि तू बहुत दानशाली है।

अग्नि के गुण

यस्न में अग्नि को सम्बोधित करते हुए कहा गया है कि मैं अग्नि को बलि और श्रद्धा अर्पित करता हूँ! अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि आप सदा लोगों के घरों विराजमान रहिए। माज़दा के पुत्र लोगों को त्वरित चमक, त्वरित पोषण, त्वरित लाभ, अत्यन्त वैभव, अभूतपूर्व चमक, अभूतपूर्व धन सम्पत्ति के लिए विस्तारित मन और आत्मा, समक्ष के लिए ज़बान की मधुरता जो निरन्तर बढ़ती जाये। मनुष्य को पौरूष व शक्ति प्रदान कीजिए, ऐसा पुत्र प्रदान करो जो पहरे से न हटे, जल्दी जागे, ऐसी ही जाग्रत संतान प्रदान कीजिए। में पुनः अग्नि को अहुर माज़दा का पुत्र सम्बोधित किया गया है। यस्न, में अग्नि को दिव्य शक्ति के साथ उसे पवित्र जल, भूमि का वरदान माना गया है। यास्न में अहुर माज़दा की अग्नि को अनुष्ठानों का महान स्वामी कहा गया है।

अग्नि द्वारा सम्पन्न अनुष्ठान

विस्पर्द में अहुर माज़दा के पुत्र अग्नि को सम्बोधित करके बरेसमन, ज़ओद्र, जनेऊ और इस सब को पवित्रता के साथ फैलाकर भेंट करने का विधान है। इसमें अपान्पात जो कि जल का पुत्र है, की उपासना करना त्वरित कहा गया है। विस्पर्द में होम-जल चढ़ाने का उल्लेख प्राप्त है। विस्पर्द में अग्नि के प्रति श्रद्धा, त्याग, उसकी प्रशंसा और उसकी संतुष्टि का उल्लेख है। विस्पर्द में अग्नि को कई रूप में पूजित करने का विधान है। प्रथम अहुर माज़्द के पुत्र अग्नि के रूप में दूसरा मज़्दों के रूप में जिसमें अग्नि का बीज है तीसरा रश्नु के रूप में जो अग्नि को छुपाये हुये है। स्पष्ट है कि रश्नु अग्नि की पूजा को प्रचारित करने की शक्ति रखे हैं दूसरे अर्थ में अग्नि को बुझने से रोकने की क्षमता रखते हैं।

तीसरा अर्थ स्पष्ट है कि रश्नु अग्नि की भाँति चमकदार है। इसी प्रकार आफ़रीग़ान में व्यक्ति स्वयं को माज़्द का पुजारी ज़रथुस्त्र के धर्म का अनुयायी जो रपितबिन अहुर माज़दा, अर्शवहिस्त के साथ अग्नि का भी अनुयायी होने का बोध कराता है।

मन्दिर, कला, स्थापत्य में अग्नि

ईरान में अग्नि–वेदी के निर्माण में वैदिक चिति या अग्नि–वेदी से भिन्नता पाई गयी। ईरानी अग्नि वेदी एक वेदी न होकर एक अग्नि धारक के रूप में निर्मित होती थी। जिसके अन्दर अग्नि प्रज्जवलित होती रहती थी। अग्नि की उपासना का प्रमाण ज़रथुस्त्र के धर्म और उसके अनुष्ठानों का प्रमाण माना जाता है। अग्नि की उपासना घरेलू चूल्हे के प्रति जुड़ाव के कारण हख़ामनी काल से पूर्व 750 ई0 पू0 से 600 ई0 पू0 हमादम के निकट टेपेनूसेजॉन जगह से एक अग्नि–वेदी मुख्य मंदिर के रूप में प्राप्त हुई। ईरान में अग्नि–वेदियों की खोज में प्रारम्भिक अग्नि पुरावेदता के रूप में मेरी बॉयल को माना जाता है। इसी प्रकार ईरान में बहुत से स्थानों से अग्नि–वेदियाँ प्राप्त हुई हैं जो निम्नवत् है जैसे–सास्तान के दाहान–ए–गुलामन, तुर्कमेनिस्तान अलतिपेदिश अलतिनपेते नं0–10, मध्य तुर्की से पुनियान, किरमान शाह में ख़करीज से अग्नि स्तम्भ, अफगानिस्तान के सुर्खकोतल से अग्नि वेदी पर पक्षियों के चित्र, कुज़िस्तान में सूसा से एक मंदिर व अभिलेखीय साक्ष्य भी अग्नि उपासकों का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं जैसे–शाहपुर प्रथम उसका पुजारी किरदार का अभिलेख, पुस्तक *नामा–ए–तनसार* इत्यादि सासानी काल मे अग्नि–पूजा स्थापना एक विशेषता के रूप में विख्यात थी। ससानी कालीन पहलवी पुस्तकों में पवित्र अग्नियों का उल्लेख है।

पारथियों में अदुर वुरज़ेन मिहिर, फ़ार्स में अदुर, फ़ुर्नबाग़ तथा मीदिया (अज़र वैज़ान में तख़्त-ए-सुलेमान) में अदुर गुस्नास्फ़। अग्नि-पूजा की खुले (आकाश के तले ससानी काल) सबसे पुराने नमूने फ़ार्स के नक्श-ए-स्तम्भ से जुड़वा अग्नि-वेदियाँ प्राप्त हुई हैं।

ईरान में मग धर्म दो वर्गों में प्रसिद्ध था। प्रथम वर्ग मग कहलाया जो ब्राह्मण की तरह धार्मिक कार्य करता था। दूसरा वर्ग मिहिराग्नि उपासक के रूप में समाज में प्रसिद्ध था। मग शब्द यूनानी भाषा के मगुस, मगोस से प्राप्त होता है। ज़रथुस्त्र की मज्जावादी विचाराधारा से ज्ञात होता है कि मग लोग मज्जावादी विचाराधारा में व्याप्त होते चले गये। ईरानी धार्मिक अनुष्ठान को सम्पन्न करने का श्रेय मगो को ही जाता है वे धर्म के कार्य में सर्वोच्च तथा राज्य के न्याय और वित्त का आधिपत्य भी रखते थे। ईरान की आरम्भिक अवस्था में पुरोहित अर्थवन का स्थान महत्त्वपूर्ण था जो आतर (अग्नि) से उत्पन्न माना गया है और अग्नि उपासकों की ओर संकेत करता है। ईरानी धर्म में मगो के बढ़ते प्रभाव के कारण अग्नि उपासक अर्थवन शिथिल हुए और इनका स्थान मगुस (मगो) ने ले लिया और समस्त धार्मिक कर्मकाण्डों के मग पुरोहित ही सम्पन्न कराते थे। मग धर्म में धार्मिक कार्यों का विवरण वेन्द्वीदाद से प्राप्त होता है। इनका धार्मिक कार्य आठ पुरोहितों द्वारा सम्पन्न होता था। पहला पुरोहित ज़ओतर गाथा पदो का उच्चारण करता था। दूसरा पुरोहित हावनम होम (सोम) रस तैयार करता था। तीसरा अतरबख़्श पुरोहित अग्नि-वेदिका का अग्नि की साफ़ सफ़ाई करता था। चौथा फ़बएतर पुरोहित पूजा में काम आने

वाले उपकरणों का रख-रखाव के कार्य करता था। पाचवाँ पुरोहित अस्नतर हरओम को साफ़ करके छानता था। छठाँ पुरोहित रथविस्तकर हओम को दूध में मिलाकर मिश्रण तैयार करता था। सातवाँ अब्रेत पुरोहित आयोजित कार्यक्रम में पानी की व्यवस्था करता था इस पुरोहित को दानजव्वाज़ कहते थे। आठवाँ पुरोहित स्त्रओशवरेज़ जो पूजा कार्य की देख-रेख करता था। मागी धर्म मूल्यत: भारतेरानी (भारत और ईरानी) देवता मित्र-मिथ्र के रूप में व्याप्त था। मागी धर्म के प्रभाव से भारत में सूर्य-पूजा उद्‌भव हुई। मागी धर्म में मृत्यु के पूर्व सूर्य-उपासना, पूजा आराधना करते समय मुँह का ढका होना ये सभी विधाऐं मागी धर्म में प्रचलित थी। इस प्रकार प्राचीन मागी धर्म में शवों को खुले स्थान पर छोड़ देना और पक्षियों और जानवरों द्वारा शव का भक्षण करना। आज यह परम्परा आधुनिक पारसियों में पायी जाती है। अत: स्पष्ट है प्राचीन मागी प्रभाव आज आधुनिक ईरानी धर्म या पारसी धर्म में प्रचलित है।

वैदिक और प्राचीन ईरानी देव-मण्डल में एक अन्य महत्वपूर्ण विकास वरूण और अहुर मज़्द का रहा है दोनों नैतिक धर्म के अधिष्ठाता है-वरूण ऋत के, अहुर मज़्द अर्ष के ईरानी जगत में वरूण नाम नहीं प्राप्त होता, किन्तु *ऋग्वेद* में वरूण को ''असुर-प्रचेत'' कहा गया है जो अहुर मज़्द के गुण का पर्याय है। इसी (देव-मण्डल) में मज़्द 'नैतिकता का अधिष्ठाता' था, जो अन्य देवों से ऊपर उठता गया। मज़्द का कोई भौतिक रूप न था, वह मूलत: प्रकाश का देव था। देव-मण्डल में मज़्द की प्रतिष्ठा का उत्थान का समान्तर वैदिक देव-मण्डल में

आदित्यों के उत्थान के रूप में विदित है। ...मज़्द की परम्परा का पर्याय असीरिया में भी प्राप्त है, जहाँ अस्सर मज़श देव का उदय 650 ई0पू0, ईरानी प्रभाव से हुआ।

इसी हिन्द-यूरोपीय परम्परा के अन्तर्गत एक हिन्द-ईरानी देव 'मिथ्र' रहा है जो कि बेवीलोन में ''शमस'' नाम से परिचित है। बोगाज़कोई के प्रसिद्ध अभिलेख में मिथ्र का नामोल्लेख वरूण और नासत्य के साथ मिलता है। *अवेस्ता* और वेद की भाषा में मिथ्र का अर्थ 'मित्रता' सनिध है। क्योंकि यह नैतिक देव था मिथ्र धीरे-धीरे अहुर मज़्द के अधीन हो गया। *अवेस्ता* के काल के पश्चात् मिथ्र, अहुर मज़्द की ही एक कृति के रूप में जाना गया। वैदिक परम्परा में भी ऐसे परिवर्तन घटित हुए और विष्णु के प्रमुख होने पर वरूण की स्थिति भी कम हुई थी।

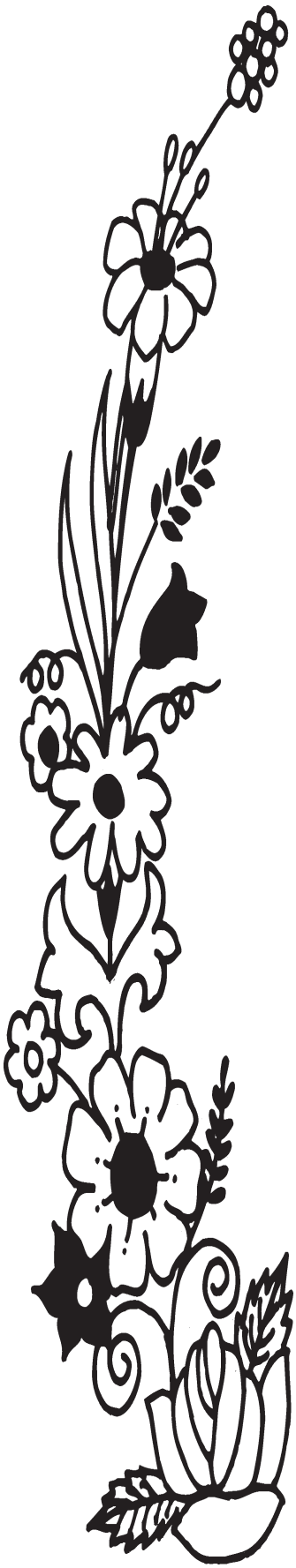

संदर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) श्री अरविन्द, *वेद रहस्य (पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध)*, श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी, 2003

(2) कीथ, ए0बी0- *वैदिक धर्म एवं दर्शन,* (अनु0 सूर्यकान्त), मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2009

(3) सिंह, अयोध्या प्रसाद-*वैदिक सूक्त संग्रह,* मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 2009

(4) *अग्निपुराण* - गीता प्रेस, गोरखपुर कोण्ड सं0. 789

(5) शुक्ल, अमरनाथ-*भारतीय संस्कृति तथा कोश,* कला निकेतन, दिल्ली 2000

(6) उपाध्याय, बलदेव - *वैदिक साहित्य और संस्कृत,* शारदा संस्थान, वाराणसी।

(7) लूणिया, बी0एन0-*प्राचीन भारतीय संस्कृत* लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा-3, 2000

(8) उपाध्याय, बलदेव-*वैदिक साहित्य और संस्कृति,* शारदा संस्थान, वाराणसी, 1973

(9) महतो, दामोदर– *वैदिक प्रक्रिया,* मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 2009

(10) झॉ, डी0एन0 – *प्राचीन भारत,* 2002

(11) देवराज– *भारतीय संस्कृति,* उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

(12) रॉय, गीता – *शाकद्विपीय मग संस्कृति,* तरूण प्रकाश, 1996

(13) सिंहल, जी0पी0–*प्राचीन भारत,* रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008

(14) मुसलगॉवरकर, गजाननशास्त्री और केशवशास्त्री, *वैदिक साहित्य का इतिहास,* चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2005

(15) त्रिपाठी, हरिशंकर – *रसा से सदानीरा तक*

(16) झॉ एवं श्रीमाली – *प्राचीन भारत का इतिहास,* 1997

(17) मिश्र, जयशंकर – *प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास,* 1999

(18) बनर्जी, जे0एन0–*डेवलपमेन्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी।*

(19) श्रीवास्तव, के0सी0–*प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति,* यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2001

(20) थपलियाल, के0के0–*वैदिक संस्कृति,* 1998

(21) श्रीमाली, कृष्ण मोहन–*धर्म समाज और संस्कृति,* ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन, दिल्ली, 2005

(22) गुप्त, मानिक लाल– *भारतीय संस्कृति का इतिहास*, साहित्य रत्नालय, कानुपर, 2007

(23) चौधरी, मजुमदार रॉय– *भारत का वृहत इतिहास*, 1995

(24) प्रकाश, ओम – *प्राचीन भारतीय का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास*, 1997

(25) काणे, पाण्डुरंग वामन – *धर्मशास्त्र का इतिहास* प्रकाशक –हिन्दी संस्थान लखनऊ।

(26) भार्गव, पी0एल0–*इण्डिया इन दी वैदिक एज*, लखनऊ, 1971

(27) चोपड़ा, पुरी दास– *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*, 1996

(28) पाण्डेय, राम अवध एवं मित्र, रविनाथ–*ऋग्वेद भाष्यभूमिका*, मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, 2009।

(29) मुखर्जी, राधा कुमुद–*हिन्दू सभ्यता*, 1995

(30) पाण्डेय, आर0एन0 – *प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास*, 2003

(31) शर्मा, पं0 श्रीराम आचार्य–*यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान*, अखण्ड ज्योति, मथुरा।

(32) शर्मा, पं0 रघुनन्दन–*वैदिक सम्पत्ति*, वाराणसी

(33) थापर, रोमिला – *भारत का इतिहास*, 1996

(34) चौधरी, राधाकृष्ण – *प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास,* 2001

(35) शुक्ल, रामवर्ण शुक्ल– *भारतीय सभ्यता के विकास का इतिहास*, 2004

(36) रविन्द्र, *प्राचीन भारत में यज्ञ–परम्परा,* शिशिर प्रकाशन, मेरठ, 2007

(37) मजूमदार, रमेश चन्द्र–प्राचीन भारत, मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी, 2002

(38) त्रिपाठी, रमाशंकर–*प्राचीन भारत का इतिहास*, मोती लाल बनारसीदास, वाराणसी, 2007

(39) शास्त्री, राजवीर–*प्राचीन भारत का इतिहास* (अथर्वेवेद–विमर्श) खामा पब्लिशर्स, दिल्ली, 2007

(40) शरण, आरा०–*प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन,* राधा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2008

(41) विद्यालंकार, सत्यकेतु–*प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग,* सरस्वती सदन, मसूरी, 1979

(42) सहाय, शिवस्वरूप–*प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन,* मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली, 2009

(43) सूर्यकान्त–*वैदिक देवशास्त्र*, ए.ए. मैक्डोनेल के वैदिक माइथोलोजी का हिन्दी रूपान्तर, दिल्ली, 1961

(44) *वैदिक धर्म और दर्शन,* ए.बी. कीथ उचित रेलिजन एण्ड फिलोसफी ऑफ दि वेदाज एण्ड उपनिषदाज का हिन्दी रूपान्तरण, वाराणसी, 1963

(45) दुबे, सीताराम – *वैदिक संस्कृति और उसका सातत्य।*

(46) *शिव पुराण*–गीता प्रेस, गोरखपुर कोड सं0, 1362

(47) सहाय, शिवस्वरूप–*प्राचीन भारतीय, धर्म एवं आर्थिक जीवन*, 2000

(48) दुबे, सीताराम–*वैदिक संस्कृति और उसका सातत्य*, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली।

(49) गैरोला, वाचस्पति–*वैदिक साहित्य और संस्कृति,* संवर्तिका प्रकाशन, इलाहाबाद,–1970

(50) रेऊ, विश्वेश्वरनाथ–*ऋग्वेद पर एक ऐतिहासिक दृष्टि*, मोती लाल बनारासी दास, दिल्ली, 2009

(51) शर्मा, वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं0 श्री राम आचार्य, *ऋग्वेद संहिता,* प्रकाशक, युग निर्माण योजना, मथुरा, 2008

(52) पाण्डेय, विमल चन्द्र–*प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा संस्कृतिक इतिहास,* सेन्ट्रल पब्लिकशिंग हाउस, इलाहाबाद 1999

(53) रॉय, विमला देवी– *वेदकालीन समाज और संस्कृति,* कला प्रकाशन, वाराणसी।

(54) पाण्डेय, विमल चन्द्र – *भारत का राजनैतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास,* भाग–2, 2001

(55) Bhargava, P.L. - *India in the Vedic Age*, the Upper India Publishing House, Lucknow, 1971

(56) *Books of the East, Vol. XXIII, The Zen Avesta*, Translated by J. Darmesteter, Oxford, Clarendon Press, 1883.

(57) Boyce, Mary - *A History of Zoroastrianism*, 2 Vols. E.J. Brill, Lciden, 1975, 1982.

(58) Bhattacharya, N.N. - *Ancient Indian Rituals and their Social Content* , 1975

(59) Basham, A.L. - *A Cultural History of India*, Oxford University, Press, 2008.

(60) Banerji, Sures Chandra - *Society in Ancient, India*, D.K. Printworld (P) Ltd. Delhi, 2007

(61) Chattopadhyaya, K.C. - *Vedic and Indo- Iranian Religion and Literature*, 2 Vol. (1976, 1978)

(62) Claytone, A.C. - *The Rigveda and Vedic Religion*, Bharti prashan, Varanasi, 1980

(63) Chattopadhyaya, K.C. - *Vedic and Indo Iranian Religion and Literature*, 2 Vols. (1976, 1978)

(64) Dube, S.R. - *Vedic Culture and its continuity,* Pratibha Prakashan, Delhi, 2006.

(65) E. Benveniste - *The Persian Religion According to the Chief Greek Texts*, Paris, 1929.

(66) E. Herzfeld - "The Iranian Religion at the time of Darius and Xerxes", *Religions* 15, 1936

(67) *Hymns to the Mystic Fire*, Pondichery, 1949.

(68) Henning, M. Tr. *Avesta. The Hymns of Zarasthustra*. Hyperion press, 1980.

(69) Keith, A.B.- *Religion and Philosophy of the Veda and Upanishads* (2 Vols) (Indian Re print, 1970)

(70) Keith, Arthur Berriedale - *The Religion and Philosophy of the Veda and Upanishads (Vol. I & II)* Moti Lal Banarsidass,

(71) Kumar, R. & Ram,S - *Hindu Society,* Crescent Publishing Corporation, Delhi, 2008.

(72) Macdonnel, A.A. - *Vedic Mythology*, Strassbaurg, 1987.

(73) M. Boyce. "On the Sacred Fires of the Zoroastrians," *BSO(A)S 31,* 1968.

(74) M. Boyee, "On the Zoroastrian Temple Cult of Fire" *JOAS* 95, 1975.

(75) M. Boyee, "Zoroastrian Relgion" Voll. II/2.

(76) Parmeshwaranand, Swami-*Vedic Terms (Vol. I & II)*, Sarup & Sons, Delhi, 2006.

(77) Pusalker, A.D. - 1, *Vedic* Age, 1951

(78) Ray Chaudhari, H.S. - *History and Culture of India People, Vol. 1, The Vedic Age,* Bombay, 1951